...उनकी याद करें

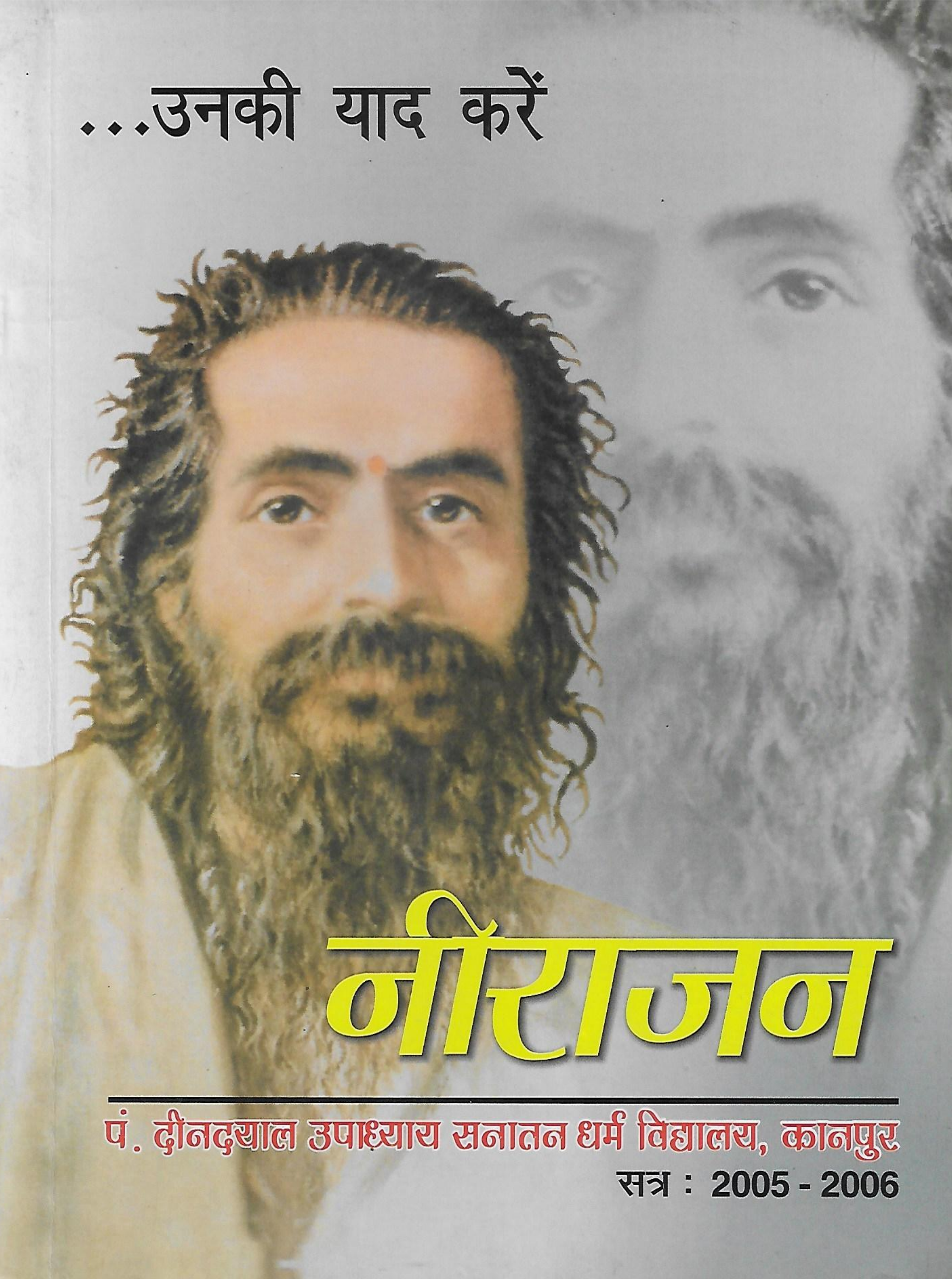

नीराजन

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

सत्र : 2005 - 2006

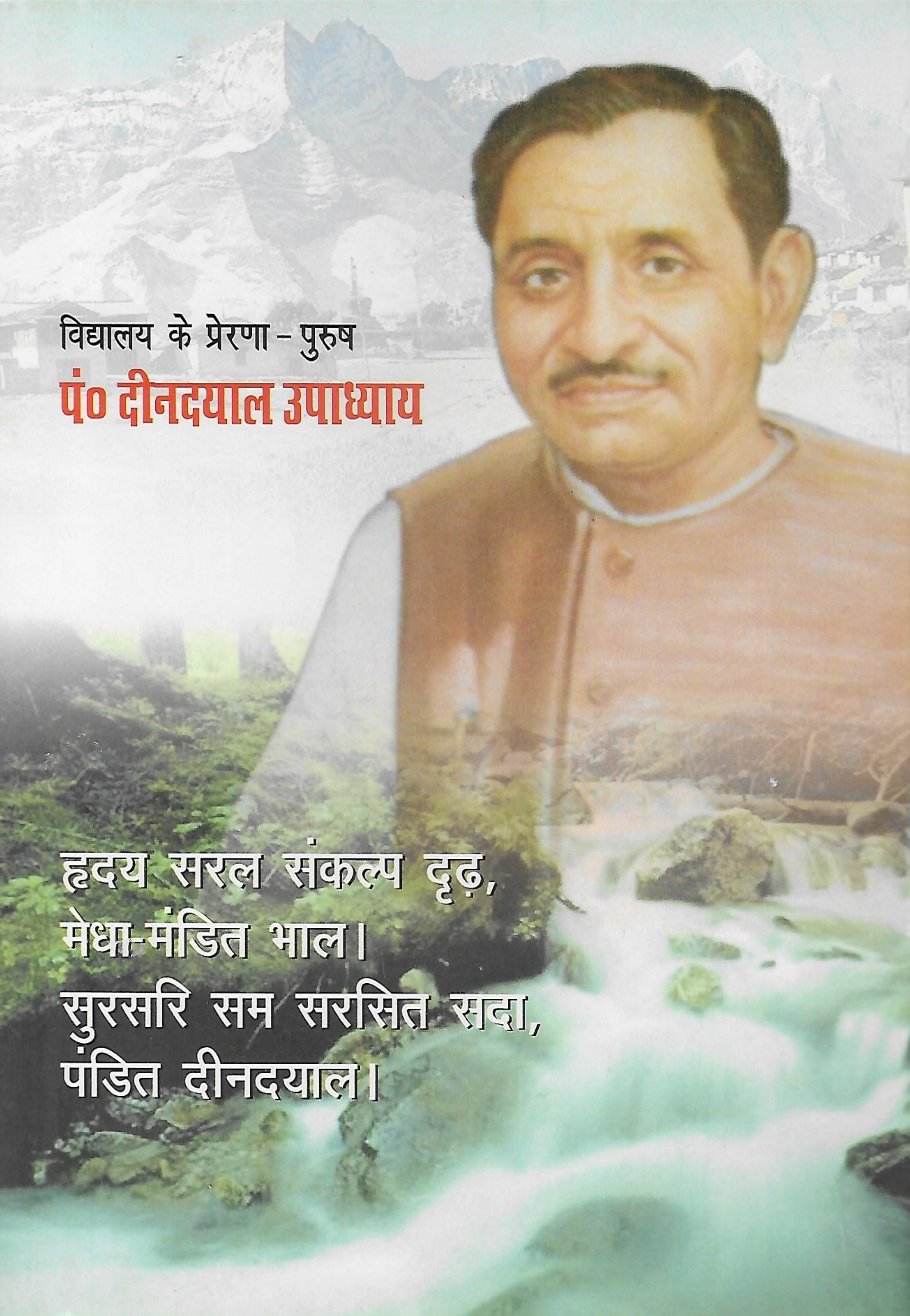
विद्यालय के प्रेरणा - पुरुष
पं० दीनदयाल उपाध्याय
हृदय सरल संकल्प दृढ़,
मेधा-मंडित भाल।
सुरसरि सम सरसित सदा,
पंडित दीनदयाल।

नीराजन

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

वार्षिक पत्रिका : २००५-२००६

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय

राष्ट्रे जागृयाम वयम

कानपुर

पाथेय

श्री ओमशंकर त्रिपाठी

सम्पादक

श्रीमती शारदा राव

(अंग्रेजी प्रभाग)

सम्पादक

श्री दुर्गेश वाजपेयी

(हिन्दी प्रभाग)

हमारा साध्य

प्रचंड तेजोमय शारीरिक बल,

प्रबल आत्मविश्वासयुक्त बौद्धिक

क्षमता एवं निस्सीम भाव संपन्ना

मनःशक्ति का अर्जन कर,

अपने जीवन को निस्पृह भाव

से भारत माँ के चरणों में

अर्पित करना ही हमारा परम

साध्य है ।

अनुक्रम

1.	अपनी बात (संपादकीय)	-	दुर्गेश वाजपेयी	7
2.	निष्काम कर्मयोगी श्री 'गुरुजी'	-	मा० श्री कुप् सी० सुदर्शन	8
3.	कार्यकर्ता के गुण	-	मा० श्री वीरेन्द्रजीत सिंह	13
4.	अपने विद्यालय में गुरु जी का वक्तव्य	-		15
5.	परिपूर्ण मानव	-	श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर	23
6.	सत्वशक्ति के उदगाता श्री विवेकानंद	-	पूज्य गुरु जी	30
7.	क्रान्तिकारियों को वंदन	-	पूज्य गुरु जी	35
8.	साधना के दीप	-	श्री ओमशंकर त्रिपाठी	36
9.	ध्रुव देश भक्ति के अमिट नाम	-	श्री ओमशंकर त्रिपाठी	37
10.	दिव्य गुण निधान- महावीर श्री हनुमान	-	मा० श्री हरिकृष्ण सेठ	38
11.	युगपुरुष श्री गुरु जी	-	श्री ओमशंकर त्रिपाठी	40
12.	एकात्म मानववाद आज की आवश्यकता	-	श्री चंदन मित्रा	44
13.	दूरदृष्टि के धनी गुरु जी	-	डॉ० रमेश शर्मा	47
14.	वार्षिक आख्या (2004-2005)	-	श्री ओमशंकर त्रिपाठी	49
15.	शिक्षा क्या है	-	श्री गणेशंकर वाजपेयी	55
16.	जाति व्यवस्था-प्राचीन एवं अर्वाचीन	-	डॉ० मनोज शुक्ल	57
17.	पं० दीनदयाल उपाध्याय का बाल्यकाल	-	आदर्श तिवारी	59
18.	पं० दीनदयाल उपाध्याय का छात्र जीवन : एक प्रेरणा	-	अखिल मिश्र	62
19.	पण्डित जी का छात्र जीवन : एक प्रेरणा	-	निखिल श्रीवास्तव	65
20.	जनसंघ के मूल विचारक : पं० दीनदयाल उपाध्याय	-	आशीष कुमार तिवारी	68
21.	मीकू (संस्मरण)	-	प्रवीण ओमर	72
22.	लक्ष्मी की महिमा (लघु कथा)	-	राज गौरव कटियार	73
23.	गिनीज़ क्रिकेट रिकॉर्ड	-	अतिन पाण्डेय	74
24.	शोक संवेदना	-	विद्यालय परिवार	75
25.	11 फरवरी का दिन	-	दुर्गेश वाजपेयी	75
26.	क्यों पड़ता है कोहरा	-	प्रतीक सिंहल	76
27.	क्यों लगती है ठंड से कँपकँपी	-	प्रतीक सिंहल	76
28.	सदाचार का दैनिक जीवन में महत्त्व	-	अंकुर दीक्षित	77
29.	डायनोसॉर क्या थे ?	-	सागर सिंह सेंगर	78
30.	बोधकथा	-	अनुपम आदर्श मिश्र	79
31.	हर स्त्री में माँ का रूप देखा	-	विक्रान्त मिश्र	79
32.	भारतीय संस्कृति का स्वरूप	-	अभिजित शुक्ल	80
33.	सफलता की राह बनाएँ (निबन्ध)	-	सूर्य प्रताप सिंह	81

34.	आजादी का दहेज (संस्मरण)	-	अंकुर पटेल	83
35.	ग्रहों का गुरुत्व बल भिन्न क्यों	-	रीशु विश्वकर्मा	84
36.	सुसुप्त हिन्दुत्व	-	सूरज पटेल	85
37.	सरकारी अस्पताल	-	विपिन वर्मा	86
38.	वह ममता का आँचल	-	अनिल कुमार	87
39.	भारतीय इतिहास का गणितकार- 'भास्कर'	-	निशान्त सिंह	88
40.	खाली पड़ा घर	-	अंकुर कटियार	89
41.	जनसेवक जनत्राता : स्वामी विवेकानन्द	-	सुयश मधुर	90
42.	बादशाह का स्वप्न	-	अभिषेक अग्रवाल	91
43.	शेखचिल्ली की मरियल घोड़ी (हास्य कथा)	-	हिमांशु तिवारी	92
44.	संगठित कार्यशक्ति/विचार/नयी पीढ़ी आगे आये	-	पं० दीनदयाल उपाध्याय	93
45.	सोलह भाषाओं में नये वर्ष की बधाई	-	शिवम श्रीवास्तव	94
46.	हमारे जीवन दीप	-	रीशु विश्वकर्मा	95
47.	कश्मीर की करुण पुकार	-	श्री अटल बिहारी वाजपेयी	96
48.	परमात्मा	-	अभय चतुर्वेदी	97
49.	माँ	-	शिव त्रिपाठी	97
50.	गंगा	-	शिवम पाण्डेय	98
51.	फिर भी हम आजाद नहीं हैं	-	अतिन पाण्डेय	99
52.	भ्रष्टाचार	-	मयंक कुमार	100
53.	लोकतंत्र लाचार हुआ है	-	आशीष तिवारी	101
54.	दहेज दानव	-	मयंक मिश्र	102
55.	आईना 2005	-	प्रणव त्रिपाठी	103
56.	हास्य कविता	-	विक्रान्त मिश्र	104
57.	स्वदेशी अपनाइये	-	पीयूष शुक्ल	105
58.	गरीबी	-	नितिन सिंह	106
59.	देश-भक्ति गीत	-	कुलदीप कुमार	107
60.	नवयुग के अर्थ (हास्य)	-	अंकित मिश्र	108
61.	पुलिस बड़ी सख्त है (व्यंग्य)	-	शुभम गुप्त	108
62.	अपने पथ का अनुगामी	-	अनिल कुमार	109
63.	ब्लैक-होल (Black Hole)	-	शोभित विनायक	110
64.	पंडित जी का राजनीतिक चिन्तन	-	पिंकराज कुलश्रेष्ठ	111
65.	आचार्य कुल	-		114
66.	हाईस्कूल परीक्षा-2006 (इण्टरनेट से प्राप्त परिणाम)	-		115
67.	इण्टरमीडिएट परीक्षा-2006 (इण्टरनेट से प्राप्त परिणाम)	-		116

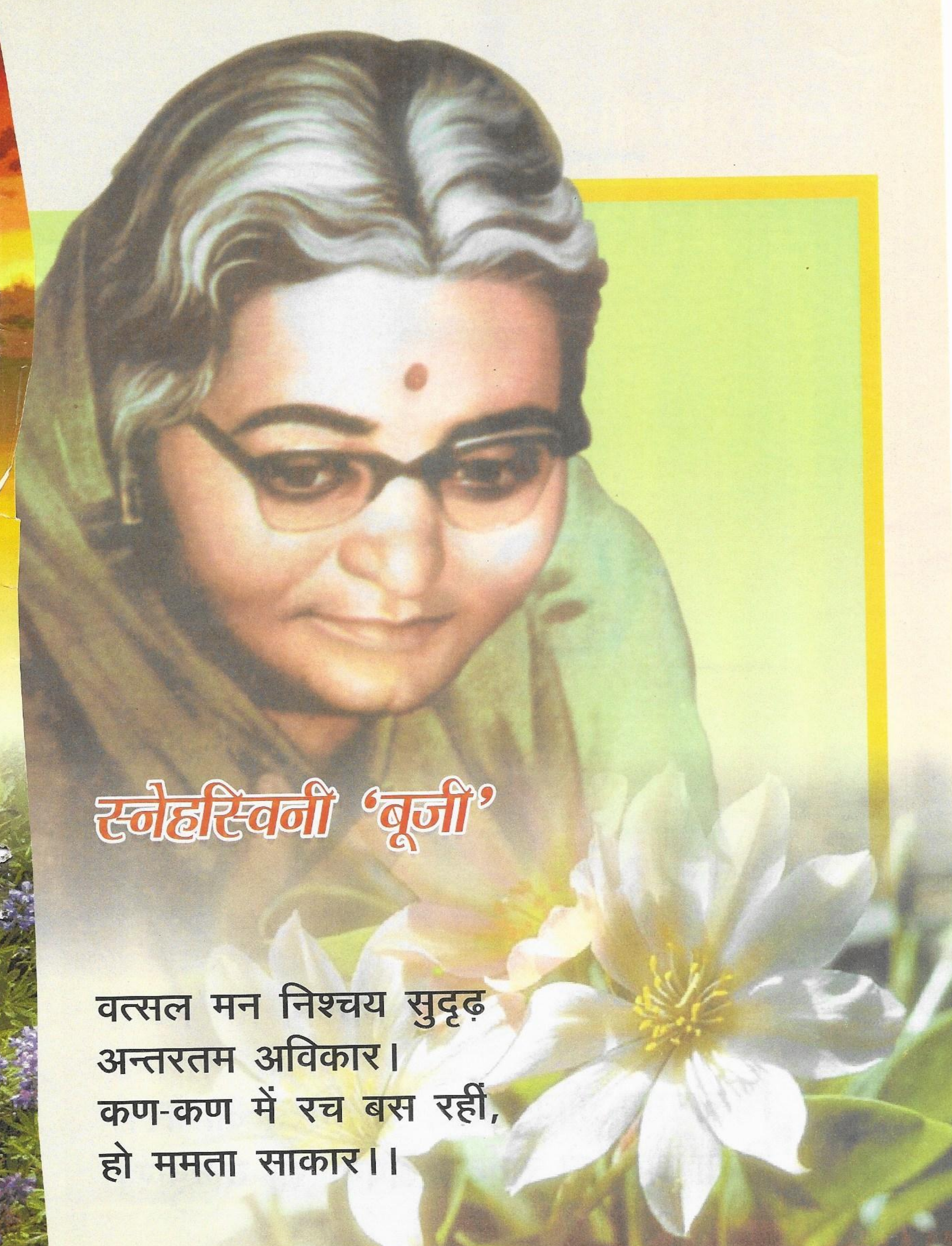
स्नेहस्विनी 'बूजी'
वत्सल मन निश्चय सुदृढ़
अन्तरतम अविकार।
कण-कण में रच बस रहीं,
हो ममता साकार।।

स्मृति शेष श्री भाऊराव

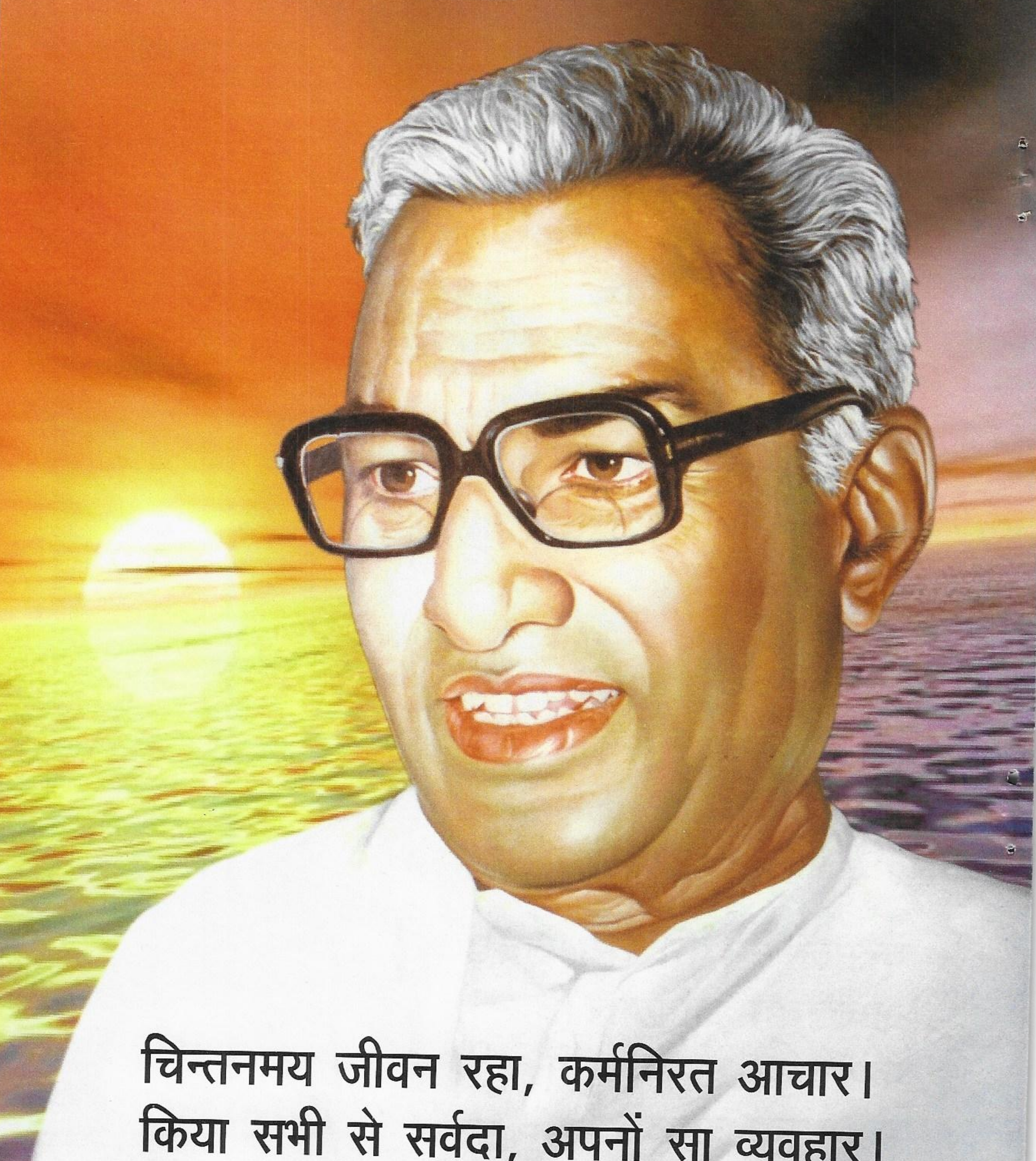

चिन्तनमय जीवन रहा, कर्मनिरत आचार।
किया सभी से सर्वदा, अपनों सा व्यवहार।

(English Section)

1.	EDITORIAL	- Sharda Rao	1
2.	No Gains without Pains	- G.P. Verma	2
3.	Life and Work of Rontgen	- Hemant Shukla	3
4.	Thrice Blest	- V.S. Pandey	6
5.	Chemical Making Life Colourless	- Sudhir Awasthi	7
6.	Reservation Alias Disruption	- Sharda Rao	8
7.	A Precious Gift	- Anurag Srivastava	9
8.	Good Health	- Yogesh Kumar Verma	9
9.	Life	- Ankur Kushwaha	10
10.	GOD	- Shobhit Vinayak	10
11.	What it Takes to be No. 1	- Amit Mayank	11
12.	Student Life	- Abhinandan Kumar	12
13.	The Truth of Life	- Prateek Bhardwaj	12
14.	Be Ready to Change	- Abhay Chaturvedi	
15.	How to Live	- Anil Kumar	14
16.	Reiki	- Atin Pandey	15
17.	Computer Section Report	- Pratik Singhal	16
18.	Topic- INDIA v/s AUSTRALIA	- Ravi Shankar Dixit	16
19.	Obstacles are Power Generators	- Suraj Patel	17
20.	My Class	- Ankur Kushwaha	18
21.	Yo ! CRICKET IS FUN	- Ankur Patel	19
22.	Life	- Pranav Tripathi	20
23.	A Sing All Day	- Shivam Dixit	20
24.	Who wants to be 'Absent - Minded'	- Yogesh Kumar Verma	21
25.	What is Life	- Yoegesh Kumar Verma	22
26.	SUCCESS	- Anuj Sharma	22
27.	SUCCESS ALPHABETS	- Nitin Singh	23
28.	Quiz Time	- Ujjwal Deep	24

29.	Some Scientists : Discoveries And Inventions	- Chandra Shekhar	25
30.	My Favaurite Leader	- Ankur Dixit	26
31.	Identity of GOD	- Ajay Singh Rawat	27
32.	The Teacher is the Sun	- Praffula Sachan	27
33.	Is Revenge A Kind of Wild Justice	- Ankit Gupta	28
34.	Swami Vivekanand	- Virendra Singh Pandey	28
35.	Smoking : A Killer Habit	- Priyam Sachan	29
36.	The Sleeping City Kanpur	- Anurag Singh Sengar	29
37.	My Faith in God	- Nitin Pratap Singh	30
38.	Ridde Me Out	- Ganesh ji Omar	31
39.	Disciplene	- Ankur Dixit	31
40.	Shiva : The Lard of Dance	- Shwetank Singh Bhadauriya	32
	हाईस्कूल परीक्षा-2006 में प्रविष्ट छात्रों की सूची		33
	इण्टरमीडिएट परीक्षा-2006 में प्रविष्ट छात्रों की सूची		35

संपादकीय

अपनी बात

—दुर्गेश वाजपेयी

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक, योगी, यती, विचारक पूज्यवर श्री माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर का यह जन्म शताब्दी वर्ष है। आज से सौ वर्ष पूर्व 19 फरवरी सन् 1906 को विजया एकादशी सोमवार के दिन प्रातः 4:34 पर श्री माधवराव जी का जन्म हुआ था। उनकी महानता तथा उनके कर्तृत्व के विषय में कतिपय सामग्री हम 'नीराजन' के इस अङ्क में पढ़ेंगे।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमारे विद्यालय की आधारशिला परमपूज्य 'गुरुजी' ने रखी थी। विद्यालय के उपासना कक्ष में हनुमान जी महाराज का प्राण-प्रतिष्ठित विग्रह है, श्री गुरुजी की गरिमामयी उपस्थिति में ही मारुति-मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा भी हुई थी। दोनों ही अवसरों पर पूज्य श्री गुरु जी के महत्त्वपूर्ण भाषण विद्यालय मं हुए थे; जिन्हें इस पत्रिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

पूज्य गुरू जी का शिक्षा के प्रति स्वाभाविक प्रेम था। वे वंशपरम्परा से शिक्षक ही थे; उनके एक पूर्वज बड़े धर्माचार्य थे। उन्हें पुरस्कार में एक गाँव मिला था; उस गाँव के नाम पर ही माधव जी के नाम के साथ गोलवलकर जुड़ गया था। विद्यालय के शिलान्यास के अवसर पर अपने वक्तव्य में श्री गुरू जी ने कहा था - ''अपने यहाँ शिक्षा का हेतु बहुत ही उच्च बताया गया है। शिक्षा से मनुष्य के अन्दर जो चिरन्तन सत्य तत्त्व है, उसे आविष्कृत करने की क्षमता प्राप्त होनी चाहिये। उसके लिये आवश्यक गुण विकसित हों, संसार भर के अनेकानेक आवश्यक विषयों का ज्ञान प्राप्त हो तथा यह बोध हो जाए कि अपने अन्दर की सत्य अवस्था का मुझे ज्ञान है। इसलिये अपने यहाँ कहा गया है कि प्रत्येक मनुष्य को वे प्राथमिक बातें सीखनी चाहिये, जिनसे मनुष्य को अपनी वास्तविक स्थिति, अर्थात् अपने चिरन्तन तत्त्व का थोड़ा बहुत बोध हो जाए। मनुष्य की आत्मा को प्रकट करना ही शिक्षा का कार्य है। इस विद्यालय जैसे प्रतिष्ठानों के लिये यह आवश्यक है कि वे अपने सामने किसी श्रेष्ठ व्यक्ति का आदर्श रखें, तथा अपने छात्रों को उसके जैसा बनाने का प्रयत्न करें। इस दृष्टि से इस संकल्पित विद्यालय ने अपने समक्ष एक बहुत ही योग्य पुरुष का आदर्श रखा है। दीनदयाल नाम का एक विशिष्ट व्यक्ति तो चला गया, परन्तु हम आशा करें कि जिस गुण समुचय और कर्तृत्व से युक्त असंख्य लोगों की परम्परा उनके नाम से स्थापित होने वाले इस विद्यालय से निर्मित होकर अग्गे बढ़ेगी, ऐसी परम्परा ही राष्ट्र कार्य के लिये उपयोगी होगी।''

पूज्य 'गुरू जी' विश्व प्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द के गुरू भाई स्वामी अखण्डानन्द के शिष्य थे। एक बार हिमालय की ओर जाते समय स्वामी अखण्डानन्द जी जब मुर्शिदाबाद स्थित सारगाछी पहुँचे, तो वहाँ के दीन दुःखी लोगों की आर्तवाणी सुनकर वहीं रुक गये और उन्हीं की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर देने का संकल्प कर लिया। स्वामी जी ने वहाँ रामकृष्ण आश्रम की स्थापना की। यह आश्रम दीन दुःखी लोगों की आश्रय स्थली ही नहीं रहा बल्कि क्रान्तिकारियों की शरण स्थली भी रहा था। इसी आश्रम में श्री माधव राव को स्वामी अखण्डानन्द का वरद् हस्त प्राप्त हुआ। इस आश्रम में गुरू जी ने लगभग सवा वर्ष का समय व्यतीत किया। जन्तु विज्ञान में एम०एस-सी० और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में व्याख्याता रह चुके श्री माधवराव ने उस आश्रम में एक दिन किसी पर्व पर सहभोज के पश्चात् जूठे बर्तनों को रात भर घिस-घिस कर माँजा और चमका दिया। आश्रमवासियों ने स्वामी जी से कहा - ''बाबा! आपके इस एम०एस-सी० शिष्य ने बर्तन ऐसे माँजे हैं कि वे सोने जैसे चमक रहे हैं।'' तब स्वामी अखण्डानन्द ने कहा था - ''वह जिस किसी काम को हाथ में लेगा, उसी को सोना बना देगा।' और यह सच निकला उन्होंने जिस काम को भी हाथ में लिया उसी को सोना बना दिया। उनके जन्म शताब्दी वर्ष पर हम उन्हें श्रद्धाभाव से स्मरण करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि वे सूक्ष्म शरीर से हमारे ऊपर कृपा वृष्टि करते रहें।

★

निष्काम कर्मयोगी श्री 'गुरु जी'

—मा० श्री कुप् सी० सुदर्शन
सरसंघचालक
राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

स्वामी विवेकानन्द के गुरुभाई स्वामी अखंडानंदजी हिमालय की ओर जाते समय जब मुर्शिदाबाद जिला स्थित सारगाछी पहुँचे, तब वहाँ के दीन दुःखी लोगों की आर्तवाणी सुनकर वहीं रुक गए और उन्हीं की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर देने का संकल्प कर लिया। स्वामी विवेकानन्द जी के सूत्र 'नर सेवा ही नारायण सेवा है' को साकार रूप देने की उनकी आकांक्षा ने ही सारगाछी में रामकृष्ण आश्रम की नींव डाली। स्वामी अखंडानंदजी, जो बाद में 'बाबा' के नाम से विख्यात हुए, भारत के पारतंत्र्य से भी व्यथित थे। इसलिए सारगाछी आश्रम केवल दीन-दुखियों की आश्रयस्थली ही नहीं, अंग्रेजी सत्ता को भारत से उखाड़ फेंकने के लिए प्रयासरत क्रान्तिकारियों की शरणस्थली भी रही थी। ऐसे ही स्थान पर एक दिन काशी विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के नाते कार्यरत श्री हरिदास मुखर्जी, जो क्रान्तिकारियों के गुप्त संगठन अनुशीलन समिति के सदस्य थे, सारगाछी पहुँचे और बाबा के दर्शन किए। युवा मन में उठे सहज प्रश्न को उन्होंने बाबा के सामने प्रकट किया - "बाबा, आपने अपने आश्रम के लिए यह अमंगल स्थान क्यों चुना, जहाँ भारत का भाग्य-सूर्य अस्त हुआ था ?"

सारगाछी उस प्लासी के मैदान के पास ही स्थित है, जहाँ मीर जाफर की गद्दारी के कारण नवाब सिराजुद्दौला को अंग्रेजों के हाथों पराजय झेलनी पड़ी थी और ब्रिटिश साम्राज्यवाद की नींव रखी गई थी। बाबा ने उत्तर दिया, 'जहाँ भारत का भाग्य- सूर्य अस्त हुआ, वहीं उसका भाग्योदय करनेवाला भी कोई आएगा।' श्री हरिदास मुखर्जी ने पूछा, उसमें तो बड़ी देर लग सकती है। क्या आप तब तक प्रतीक्षा करेंगे ? बाबा का उत्तर था, 'हाँ, शिष्यों में से ही कोई न कोई इस कार्य को करने के लिए आगे आएगा।' यही हरिदास मुखर्जी आगे चलकर स्वामी अखंडानंद जी के पट्टशिष्य बनकर स्वामी अमूर्तानंद कहलाए, किन्तु आश्रम में ब्रह्मचारी अवस्था के नाम 'अमिताभ महाराज' के अभिधान से ही अधिक जाने जाते थे।

अमिताभ महाराज को स्वास्थ्य-लाभ के लिए शुष्क जलवायु वाले स्थान नागपुर भेजा गया, जहाँ वे रामकृष्ण आश्रम में स्वामी भास्करेश्वरानंद के साथ रहने लगे। अनुशीलन समिति के सदस्य के नाते डा० हेडगेवारजी से उनका पूर्व परिचय था ही। यहाँ श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर से भी उनका सम्बन्ध बना। श्री माधवरावजी तब तक काशी विश्वविद्यालय में तीन वर्ष तक का प्राध्यापक का कार्यकाल समाप्त कर अपनी छात्रवत्सलता के कारण 'गुरुजी' अभिधान धारण कर नागपुर आ चुके थे, किन्तु उनके मन का पूर्व द्वन्द्व पूरी तरह से समाप्त नहीं हुआ था। संघ के सम्पर्क में आने के पूर्व मत्स्य-विज्ञान के अध्ययन के लिए सन् 1928-29 में वे दो वर्ष तक चेन्नै में रहे थे। उस समय अपने नागपुर के मित्र श्री बाबूराव तेलंग को लिखे लम्बे-लम्बे पत्रों से उनके मन की दुविधा का पता चलता है। जनवरी, 1929 में अपने पत्र में उन्होंने लिखा था - 'लाहौर का विस्फोट सुना। धन्य, विचार धन्य। आंशिक ही क्यों न हो, परिमार्जन करना संभव हुआ, इसका संतोष है। ऐसी ही परिस्थिति में मैं रहता तो ऐसा ही गोपनीय कृत्य करता। विश्वबंधुत्व, समता, शान्ति इन विषयों पर मैंने आपसे अनेक बार बात की है। दंगे-फसाद, मारामारी, प्रतिशोध, विद्वेष आदि सब बातों के विरुद्ध मैंने आपसे झगड़ा किया है, आपको दोष भी दिया है। वहीं मैं आपको यह सब लिख रहा हूँ - इसका आपको आश्चर्य हो रहा होगा। एक ओर प्रतिशोध और यौवन की शक्तिशाली लहर तथा दूसरी ओर वेदान्त की शांत और अडिग चट्टान।दोनों में उस समय ऐसा प्रबल संघर्ष हुआ कि मैं बहुत असमंजस में पड़ गया।' उसी पत्र में उन्होंने यह भी लिखा - 'लोगों में राष्ट्रीय चेतना जगानी होगी। हिन्दू और मुसलमान के बीच वास्तविक सम्बन्ध का ज्ञान कराना होगा। ब्राह्मण-अब्राह्मण के बीच विवाद समाप्त करना होगा। मैं कोई बड़ा नेता और कार्यकर्त्ता नहीं हूँ, किन्तु प्रत्येक को इस कार्य में सहयोग देना ही चाहिए।'

मन की यह द्विधा की स्थिति सन् 1934 में भी बनी हुई थी। एक ओर डा० हेडगेवार के सम्पर्क के कारण हिन्दू-समाज को संगठित कर उसमें राष्ट्रीय चेतना जगानेवाले संघकार्य की ओर मन जाता था, जिसके साथ उनका परिचय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हो गया था, तो दूसरी ओर आध्यात्मिक साधना की दिशा में मन की सहज प्रवृत्ति होने के कारण स्वामी भास्करेश्वरानंद एवं अमिताभ महाराज के सान्निध्य में मन उस दिशा की ओर खिंचता था। इसी मानसिकता में एक दिन उन्होंने अमिताभ महाराज के सामने अपनी जिज्ञासा व्यक्त करते हुए पूछा - 'क्या आप मुझे किसी जीवन्मुक्त व्यक्ति के दर्शन करा सकते हैं ?' अमिताभ महाराज ने कहा, 'हाँ, एक शर्त पर। तुम्हें अपना घर-द्वार, माता-पिता, कीर्ति-यश आदि सब कुछ छोड़ना होगा। तैयारी है ?' श्री गुरुजी ने एक क्षण का भी विलम्ब न करते हुए कहा, 'हाँ' और उनकी यही व्यग्रता उन्हें सारगाछी ले गई, जहाँ बाबा की सेवा में अनन्य भक्तिभाव से रत रहकर उन्होंने लगभग सवा वर्ष बिताए। एक दिन किसी पर्व पर सहभोज के पश्चात् रातभर उन्होंने बर्तनों को ऐसा माँजा कि आश्रमवासियों ने बाबा से कहा, 'आपके इस एम०एस-सी० शिष्य ने बर्तन ऐसे माँजे हैं कि वे सोने जैसे चमक रहे हैं।' तब बाबा ने कहा, 'वह जिस किसी काम को हाथ में लेगा, उसी को सोना बना देगा।'

बाबा ने अमिताभ महाराज को नागपुर से सारगाछी बुलवा लिया। एक दिन अमिताभ महाराज ने बाबा से कहा, 'बाबा, गोविलकर के माता-पिता वृद्ध हैं। उसे दीक्षा दे दी जाए जिससे वह अपने माता-पिता की देखभाल और वकालत कर सके।' बाबा ने कहा, 'दीक्षा तो मैं उसे दे दूँगा, पर यह कौन कह सकता है कि वह वकालत करके माता-पिता की ही सेवा करेगा ?' और श्री गुरुजी के जीवन में शीघ्र ही वह स्वर्णिम दिन आया, जब उन्हें दीक्षा प्राप्त होकर नवजीवन प्राप्त हुआ। उन्हीं दिनों उन्हें अपने गुरु की जीवन्मुक्त अवस्था को देखने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। अमिताभ महाराज के माध्यम से अपने गुरु की इच्छा जानकर वे नागपुर में डा० हेडगेवार के पास आ गए और समाज को ही परमेश्वर मानकर संघकार्य हेतु अपने-आपको समर्पित कर दिया। इस प्रकार सारगाछी के उस अमंगल स्थान, जहाँ भारत का भाग्य-सूर्य अस्त हुआ था, से भारत के भाग्योदय का शंखनाद करनेवाला व्यक्ति नागपुर आया और डा० हेडगेवार के देहावसान के पश्चात् राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक के नाते सुप्रतिष्ठित हुआ। क्या यह सब किसी ईश्वरीय योजना के अन्तर्गत हुआ ?

प्रसंग सन् 1973 के प्रारम्भ का है, जब मा० भाऊराव देवरस और मा० रज्जूभैया पूजनीय गुरुजी के निरन्तर गिरते स्वास्थ्य से चिंतित होकर प्रयाग में एक पंडितजी से मिलने गए जिनके पास भृगुसंहिता थी। द्वार खटखटाने पर पंडित जी ने जब द्वार खोला तो इन दोनों महानुभावों को देखकर अपनी घड़ी की ओर देखा और कहा, 'मैं जानता हूँ कि आप एक बहुत बड़े महापुरुष के सम्बन्ध में जानने आए हैं, किन्तु वे 7 जून के बाद नहीं रहेंगे।' दोनों यह सुनकर अवाक् रह गए। थोड़ा सँभालने के बाद पूछा, 'हम तो यह जानने के लिए आए थे कि किसी अनुष्ठान आदि से उनके स्वास्थ्य-लाभ के लिए कुछ किया जा सकता है क्या ?' तो पंडितजी ने कहा, 'अनुष्ठान भले ही कीजिए, किन्तु वे एक मुक्त आत्मा हैं। पिछले जन्म में अपने गुरु के प्रति कुछ अविनय हो जाने के कारण उन्हें यह जन्म लेना पड़ा। अब उन्हें पुनर्जन्म का योग नहीं है।' प्रश्न उठता है कि क्या पूर्वजन्म में अपने गुरु के प्रति अविनय के अपराध का परिमार्जन करने के लिए ही वे सारगाछी गए और क्या स्वामी अखंडानंद ही पूर्वजन्म में उनके गुरु थे ? कैसे कहें ? विधि का विधान हम जैसे साधारण मानवों के लिए अगम्य और अगोचर है।

जो हो, सन् 1940 से लेकर सन् 1973 तक के तैंतीस वर्ष श्री गुरुजी के राष्ट्रनायकत्व के सबसे महत्त्वपूर्ण वर्ष थे, जब हिन्दू राष्ट्र के सर्वांगीण विकास की रूपरेखा, जिसे बीज रूप में डा० साहब ने बोया था, पुष्पित और पल्लवित हुई। यही कालखण्ड अपने राष्ट्र जीवन में भी अत्यन्त उथल-पुथल का था। द्वितीय महायुद्ध, कांग्रेस का सन् 1942 में प्रारम्भ हुआ जनांदोलन, देश का विभाजन, सहस्त्राविधि लोगों का बलिदान, लक्षावधि लोगों का देशांतरण, महात्मा गाँधी की हत्या, संघ पर प्रतिबंध और सत्याग्रह, तिब्बत पर चीनी कब्जा, भारत पर सन् 1962 का चीनी आक्रमण, सन् 1965 और 1971 के पाकिस्तानी आक्रमण, पाकिस्तान का विभाजन आदि सारी ही क्षोभकारक घटनाएँ इसी कालखण्ड में घटित हुईं और एक कुशल खेवनहार के रूप में पूजनीय गुरुजी ने इन संकटों से संघ को बाहर निकालने व देश को सुयोग्य मार्गदर्शन देने का कार्य किया।

प्रतिबंधकाल के डेढ़ वर्ष छोड़कर शेष समय में पूजनीय गुरुजी ने प्रति वर्ष दो बार देश का भ्रमण किया तथा स्वयंसेवकों व देश को सुयोग्य मार्गदर्शन व दिशा दी। स्वभाविक था कि सन् 2006 से 2007 तक मनाए जाने वाले

उनके जन्म शताब्दी वर्ष के लिए इस सुदीर्घ कालखण्ड में भाषणों, बैठकों, चर्चाओं व लेखों में प्रगट किए गए समस्त विचारों का संकलन किया जाए और उसी इच्छा का सुपरिणाम है 'श्री गुरुजी समग्र' के बारह खण्ड।

पूजनीय गुरुजी जब सरसंघचालक बने थे, तब देश की दो प्रमुख धाराओं का संगम उनके व्यक्तित्व में हुआ था। भारतीय नवोत्थान की यह विशेषता रही है कि प्रत्येक राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक नवरचना के पूर्व आध्यात्मिक जागरण होता रहा है। आधुनिक काल में आध्यात्मिक पुनर्जागरण की धारा 19वीं शताब्दी में ऋषि दयानन्द से प्रारम्भ हुई व बाद में रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, भगिनी निवेदिता, स्वामी रामतीर्थ, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, ऋषि अरविन्द व श्री माँ के माध्यम से आगे बढ़ते हुए उसने देश की सुप्त आध्यात्मिक चेतना को झकझोरा और जगाया। दूसरी धारा राजनीतिक थी, जिसकी दो शाखाएँ थीं। एक शाखा सशस्त्र क्रान्ति के माध्यम से विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने की थी, जिसका आरम्भ सन् 1857 से हुआ था व बाद में रामसिंह कूका, वासुदेव बलवंत फड़के, पझसी राजा, बिरसा मुंडा, तिलका माँझी, ताँतियाभील, तीरथ सिंह, अल्लूरि सीताराम राजू आदि में से होती हुई खुदीराम बोस, भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु, सावरकर, सुभाष तक पहुँची। दूसरी शाखा जनांदोलनों के माध्यम से जनजागरण कर विदेशी सत्ता को देश की स्वतन्त्रता देने हेतु बाध्य कर देने की थी। यह शाखा सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, दादाभाई नौरोजी, लाला लाजपतराय, बाल गंगाधर तिलक, विपिनचन्द्र पाल, महात्मा गाँधी, डा० अंबेडकर आदि के माध्यम से आगे बढ़ी।

डा० हेडगेवार बंगाल के क्रान्तिकारियों की संस्था 'अनुशीलन समिति' के अंतरंग सदस्य थे और उनके बंगाल, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश के क्रान्तिकारियों से गहरे सम्बन्ध थे। सन् 1916 से 1918 के बीच प्रथम महायुद्ध में अंग्रेजों की व्यस्तता का लाभ उठाकर उन्होंने सशस्त्र क्रान्ति भी करनी चाही थी, किन्तु लोकमान्य तिलक आदि श्रेष्ठ नेताओं की सहमति न मिलने तथा महायुद्ध की स्थिति में आए स्थित्यंतर के कारण उस प्रयास को उन्होंने समेट लिया और जनांदोलनों के माध्यम से लोकजागरण हेतु प्रवृत्त हुए। डा० साहब ने इन सबमें भाग लिया, किन्तु जागृत समाज की संगठित शक्ति खड़ी किए बिना उपर्युक्त प्रयास दीर्घसुपरिणामी नहीं हो पाएँगे यह अनुभव कर सन् 1825 में केवल समाज संगठन हेतु समर्पित राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की व समस्त राजनैतिक उथल-पुथल में सहभाग करते हुए भी संगठन के स्थायी कार्य को उनसे अलग रखा और सन् 1940 से हिन्दू राष्ट्र के एक छोटे अंकुर का दर्शन करने में समर्थ हो सके। इसी अंकुर को अपने स्वेद-रक्त से पल्लवित व पुष्पित करने का कार्य श्री गुरुजी के कंधों पर आया।

अध्यात्मप्रवण श्री गुरुजी ने संघ कार्य हेतु अपने आपको समर्पित तब किया जब डाक्टर साहब की बीमारी की अवस्था में सेवा करते हुए मातृभूमि के साथ तद्रूप हुए उनके व्यक्तित्व के दर्शन हुए। इस प्रकार राष्ट्र के सर्वांगीण विकास हेतु कार्यरत दोनों धाराओं का उनमें संगम हुआ। रामकृष्ण-विवेकानन्द की आध्यात्मिक कर्मचेतना डा० हेडगेवार की राष्ट्रीय कर्मधारा के साथ जुड़ गई। पूजनीय गुरुजी के सारे विचारों के मूल में राष्ट्र की आध्यात्मिक चेतना के हमें दर्शन होते हैं और यही उनके जीवन का स्थायी भाव रहा है। एक बार इंदौर में लायन्स क्लब में उन्हें निमन्त्रित किया गया और उनसे प्रार्थना की गई कि वे धर्म और राजनीति छोड़कर किसी अन्य विषय पर बोलें। श्री गुरुजी ने कहा कि राजनीति में तो मेरी कोई रुचि नहीं है, किन्तु धर्म के बारे में भी न बोलूँ, यह बात समझ के परे है। हमारे यहाँ तो कहा गया है -

आहार निद्रा भय मैथुनं च, सामान्यमेतद् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिकोऽविशेषो, धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥

अर्थात् - आहार, निद्रा, भय व मैथुन तो पशुओं व मनुष्यों में समान हैं, किन्तु मनुष्य में जो अधिक है, वह धर्म है, धर्म से विहीन मनुष्य पशु के समान है। शायद यही कारण है कि इस क्लब के लोग अपने आप को 'लायन' कहते हैं।

सन् 1940 से 1947 तक के कालखण्ड में जब देश आन्दोलनरत था तब भी उन्होंने पूजनीय डाक्टर जी द्वारा अपनाई गई नीति का ही अवलंबन किया कि संघ तो केवल संगठन का कार्य करेगा, किन्तु स्वयंसेवक व्यक्तिगत रीति से राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए किए जानेवाले आन्दोलनों में भाग ले सकते हैं और तदनुसार अनेक स्वयंसेवकों ने

वैसा किया भी। इस सम्बन्ध में सन् 1942 के पुणे संघ शिक्षा वर्ग की एक घटना का उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा। पुणे संघ शिक्षा वर्ग में पूजनीय गुरुजी की व्यवस्था में श्री माधवराव गोडबोले नियुक्त थे। आगे चलकर यही माधवराव बैंकिंग व सहकारिता के क्षेत्र में सहकार महर्षि के रूप में विख्यात हुए। अपने संस्मरणों में वे लिखते हैं -

'पुणे वर्ग में मैं श्री गुरुजी की सेवा में था। एक दिन पूजनीय गुरुजी ने मुझे लगभग 20 जिलों के संघचालकों को पुणे के वर्ग में एकत्र आने हेतु पत्र लिखने को कहा। तदनुसार मैंने सबको पत्र लिखकर एक विशिष्ट दिन सबको पुणे आने के लिए कहा। संघ शिक्षा वर्ग का स्थान नूतन मराठी हाईस्कूल था। उसके निकट ही श्री अभ्यंकर वकील के निवास में समस्त निमंत्रित संघचालकों की एक निजी बैठक हुई। इस बैठक में प्रमुखतः नासिक जिला संघचालक राजाभाऊ साठे का संक्षिप्त भाषण हुआ। उस भाषण को सुनकर समस्त संघचालक क्षणभर के लिए स्तब्ध रह गए। श्री राजाभाऊ साठे ने पूजनीय गुरुजी से पहले विचार किया हुआ होगा। उनके भाषण का मुख्य आशय यह था कि ब्रिटिश सरकार जर्मनी से युद्ध में उलझी हुई है। इस युद्ध के लिए भारत से काफी सेना युद्धभूमि में भेजी गई है। जो थोड़ी-बहुत सेना बची है, उसे रेलगाड़ी से मुंबई, दिल्ली, कोलकाता, चेन्नै घुमाया जा रहा है। यह एक तरह से सैन्य शक्ति का खोखला प्रदर्शन है। सैन्यबल काफी कम है। नेताजी सुभाषचंद्र बोस पूर्व की ओर से भारत पर आक्रमण की तैयारी कर रहे हैं। हम संघचालकों को भी अपने-अपने जिलों में ऐसी तैयारी करनी है जिससे ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध योग्य समय पर स्वातंत्र्य युद्ध शुरू किया जा सके। एतदर्थ अपने जिले की परिस्थिति, शस्त्रबल कितना उपलब्ध है, कितना किया जा सकता है, जिले में राष्ट्रद्रोह करनेवाले केन्द्र कितने हैं, इन सबका पूरा अध्ययन कर उन सबके विरुद्ध संघर्ष की तैयारी करनी चाहिए। हमको योग्य संधि प्राप्त होते ही व नेताजी सुभाषचंद्र बोस का आक्रमण होते ही दोनों को मिलकर भारत को स्वतन्त्र करने के लिए संघर्ष करना होगा। उसके लिए केन्द्र से सूचना की राह देखने की आवश्यकता नहीं, अपेक्षा रखने की भी आवश्यकता नहीं।'

उस बैठक में पूजनीय गुरुजी का दस-पन्द्रह मिनट का भाषण हुआ जिसका सार यह था - 'मैं तो ठहरा संन्यासी। आप सब लोगों के संघर्ष को सुभाष बाबू के संघर्ष का साथ मिल गया तो अपना भारत स्वतन्त्र किया जा सकेगा। क्षण भर के लिए मान लें कि यश नहीं मिला तो भी कदाचित स्वतन्त्रता के लिए होनेवाले प्रयत्नों में यह भी एक प्रयत्न जुड़ जाएगा, स्वातन्त्र्य मिला तो उत्तम ही है।' इस बैठक की भनक भी बाहर किसी को नहीं हुई और संघ शिक्षा वर्ग में युवकों को आह्वान किया जा रहा था कि वे पढ़ाई से छुट्टी ले संघ कार्य विस्तार के लिए निकलें। उस वर्ष 90 नए प्रचारक कार्य हेतु निकले थे।'

श्री गुरुजी के समग्र विचारों के इस विशाल संकलन का अनुशीलन करते समय यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि सभी महापुरुषों के विचारों के समान इन विचारों के भी दो भाग हैं। एक, जो शाश्वत व कालजयी है और दूसरा जो देश-काल-परिस्थिति से मर्यादित है। दूसरे प्रकार के विचार उस देश-काल-परिस्थिति में सार्थक होते हुए भी संदर्भ बदलने पर ज्यों के त्यों सार्थक होंगे ही ऐसा नहीं कहा जा सकता। उनसे दिशा-संकेत भले मिले, किन्तु ज्यों का त्यों उन्हें लागू करने का आग्रह मात्र 'वाद' या 'इज्म' को जन्म देगा। 'इज्म' या 'वाद' की परिभाषा ही यह है कि वह विचारों का एक बंद दायरा है। हर जगह उसका आग्रह करने पर व्याख्या को लेकर मतभेद व मनभेद और फलस्वरूप आन्दोलनों के बँटने के उदाहरण कम नहीं हैं। कम्युनिज्म, सोशलिज्म, कैपिटेलिज्म, गाँधी इज्म आदि सब इसी लकीर का फकीर बनने की प्रवृत्ति के कारण बँटे हैं। डाक्टर हेडगेवार जी ने इसीलिए केवल मोटे-मोटे सिद्धान्त बताए और कहा जब जैसी परिस्थिति निर्माण हो तो पाँच-सात लोग बैठो, साधक-बाधक विचार करो और सामान्य सहमति के रूप में जो निष्कर्ष निकले, उसके आधार पर कार्य करो। यही कारण है कि संघ आज पाँचवीं पीढ़ी में प्रवेश कर रहा है किन्तु संघ का आन्दोलन टुकड़ों में नहीं बँटा।

पूजनीय गुरुजी के विचारों का अध्ययन करते समय इस पहलू को ध्यान में रखना आवश्यक है। अध्यात्म के स्थायी अधिष्ठान पर ही उन्होंने विभिन्न सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक विषयों पर अपने विचार प्रकट किए, किन्तु यह सब करते हुए भी समाज संगठन के स्थायी कार्य से उन्होंने दृष्टि नहीं हटने दी। वे स्वयं कहते हैं - 'सब में एक ही तत्त्व विद्यमान है इसलिए सबके संतोष में स्वयं संतोष अनुभव करना भारतीय परम्परा में समाज जीवन का आधार है।' 'हम चाहते हैं कि इस सत्य सिद्धान्त से जीवन के सभी क्षेत्र अनुप्रेरित हों। परन्तु क्या इसका अर्थ है कि संघ के नाते हम हर बात में हस्तक्षेप करते रहें? याने क्या जीवन के सब कार्यों को करनेवाला संघ ही हो? ..... यदि प्रत्येक कार्य

में हस्तक्षेप करने का विचार किया तो जीवन के प्रत्येक पहलू पर बड़े-बड़े 'थीसिस' तैयार करने होंगे। इस स्थिति में समाज संगठन का जो मूलगामी कार्य चल रहा है, वह बंद हो जाएगा, 'थीसिस' मात्र अपने हाथ लगेंगे। ...... राष्ट्रजीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने के लिए जुटे हुए लोगों को पका-पकाया अथवा सधा-सधाया मसाला देते रहने का काम अपना नहीं है। सिद्धान्त पर अटल रहते हुए उसे व्यवहार में उतारने का मार्ग विभिन्न क्षेत्रों में लगे हुए लोगों को ही सोचना होगा। यही ठीक भी है।'

युगानुरूप समाज रचना का विचार करते समय पुराने और नए के बारे में क्या धारणा रखनी चाहिए, इस सम्बन्ध में पूजनीय गुरुजी कहते हैं - 'हमारे समाज-पुरुष की सभी धमनियों में एक बार यह एकता का जीवन-स्रोत प्रवाहित होना आरम्भ हो जाए तो हमारे राष्ट्रजीवन के सभी अंग स्वतः क्रियाशील हो जाएँगे तथा सम्पूर्ण राष्ट्र के कल्याण हेतु मिलकर कार्य करने लगेंगे। इस प्रकार का जीवित व वर्धमान समाज अपनी प्राचीन पद्धतियों एवं प्रतिमानों में से जो कुछ आवश्यक है और हमें प्रगति-पथ पर अग्रसर करने वाला है उसे सुरक्षित रखेगा तथा शेष को, जिनकी उपयोगिता समाप्त हो चुकी है, फेंक देगा एवं उनके स्थान पर नवीन पद्धतियों का विकास करेगा। किसी प्राचीन व्यवस्था के समाप्त होने पर आँसू बहाने की आवश्यकता नहीं है और न नवीन वस्तुओं की व्यवस्था के स्वागत में पीछे हटने की आवश्यकता है। यही सब सजीव एवं वर्धमान शरीरधारियों की प्रकृति है। ज्यों-ज्यों वृक्ष बढ़ता है, पकी पत्तियाँ और सूखी टहनियाँ झड़ जाती हैं और उस वृक्ष की नूतन वृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त करती हैं। ध्यान में रखने की मुख्य बात यही है कि एकता का जीवन-रस हमारे ढाँचे के प्रत्येक भाग में परिव्याप्त रहे।' .... 'संघ का कार्य सर्वव्यापी कार्य है। परन्तु सर्वव्यापी किस प्रकार से है ? प्रकाश सर्वव्यापी है परन्तु वही सब कार्य नहीं करता। अंधकार को दूर हटाकर सबको मार्ग दिखाता है। इस तथ्य को भली-भाँति समझना होगा। फिर कोई गड़बड़ी नहीं होगी।'

पूजनीय गुरुजी के इन विचारों के आलोक में हम उनके विशाल विचार-सागर में अवगाहन करें और उन विचारों के प्रकाश में राष्ट्रजीवन के सामने आज खड़ी चुनौतियों से निपटने के लिए युगानुरूप उपाय-योजना करें, यही समस्त सुबुद्ध अध्येताओं से अनुरोध है।

*

प्रवृत्तवाक्चित्रकथ ऊहवान् प्रतिभानवान्।
आशु ग्रन्थस्य वक्ता च यः स पण्डित उच्यते ॥

अर्थ - जिसकी वाणी कहीं रुकती नहीं, जो विचित्र ढंग से बातचीत करता है, तर्क में निपुण और प्रतिभाशाली है तथा जो ग्रन्थ के तात्पर्य को शीघ्र बता सकता है, वही पंडित कहलाता है।

कार्यकर्ता के गुण

—मा० श्री वीरेन्द्रजीत सिंह
प्रान्त संघ चालक, रा०स्व० संघ, प्रान्त- कानपुर

विद्यालय प्रबंध समिति के सचिव मा० श्री वीरेन्द्र जी ने गुरू जी के कतिपय संस्मरणों को सुन्दर ढंग से लिपिबद्ध किया है । ये संस्मरण हमको प्रेरणा देंगे । इस लेख को साभार प्रकाशित करते हुए हम गौरवान्वित हैं ।
— सम्पादक

1. दैनन्दिन शाखा संस्कार आवश्यक : किसी भी संगठन की मजबूती कार्यकर्ता की मजबूती पर निर्भर है जैसे एक जंजीर की मजबूती उसकी सबसे कम मजबूत कड़ी पर निर्भर करती है। उस जंजीर की कड़ी में बहुत से गुण होने चाहिए किन्तु उसकी मजबूती उन सभी गुणों के परिणामस्वरूप होती है। वही स्थिति एक संगठन में कार्यकर्ता की है। हम कार्यकर्ता के गुण एवं गुणों के विकास पर कुछ विचार प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं -

एक संस्मरण के माध्यम से बताना चाहता हूँ। समग्र हिन्दू समाज के लिए कार्य करने हेतु संस्कार क्षम ऊर्जा नित्य शाखा जाने पर ही मिलेगी और तभी समाज को कुछ दिया जा सकेगा । हमें समाज के किसी क्षेत्र में कार्य हेतु लगाया जाये या हम स्वयं लगे किन्तु हमारा नियमित शाखा का संस्कार न छूटे । एक बार परमपूज्य गुरूजी ने कुछ ऐसा ही श्री दत्तोपन्त ठेंगड़ी जी को भी प्रेरित किया । ठेंगड़ी जी के शब्दों में ही-

''गुरू जी ने उनकी अपनी खास शैली में मुझे भी एक सबक सिखाया था। मैं तो संघ का प्रचारक रहा, फिर भी 'शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन' के नेता तथा कार्यकर्ताओं के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने के लिए तब मैं उनके साथ भी कार्य करता था। एक दिन पू० गुरूजी के साथ बैठा था। मा० आबा जी थत्ते भी थे। पू० गुरूजी ने पूछा, 'अब तुम' शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन में काम करते हो तो सुबह शाखा पर जाना तो नहीं होता होगा, 'मैंने कहा, हाँ ! अब शाखा पर जाना मुश्किल सा होता है।' 'शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन' के कार्यकर्ताओं की आदत ऐसी होती है कि शाम के समय बैठक शुरू होती है तो रात देर तक चलती है और सुबह जल्दी उठना नहीं होता है, फिर शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के नेताओं तथा कार्यकर्ताओं के साथ सम्पर्क करने में कहाँ तक कामयाबी प्राप्त हुई यह प्रश्न पू० गुरूजी ने पूछा ! मैंने सब बताया ।

श्री गुरूजी ने कहा, 'बहुत अच्छा काम किया है। इसमें मानसिक कष्ट भी आपने बहुत सहे होंगे। श्री गुरूजी के ऐसा कहने से मुझे आनन्द हुआ। प्रतीत हुआ अब तक किए हुए काम को गुरू जी ने मान्यता दी है। एकाध मिनिट के बाद गुरूजी ने कहा, 'शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के लोगों से सम्पर्क करने में इतना समय देना पड़ता है और इसलिए स्वाभाविक है कि शाखा पर आना संभव नहीं होता। पिछले तीन चार दिनों से यह आबा कह रहा है कि दत्तोपंत शाखा पर नहीं आ रहे हैं। मैंने आबा को समझाया कि दत्तोपंत मानते हैं कि मैं जो काम कर रहा हूँ वह संघ कार्य ही है। संघ की प्रेरणा से ही कर रहा हूँ। इस दृष्टि से मैं चौबीस घंटे संघ का ही कार्य कर रहा हूँ।

उसी के कारण शाखा पर नहीं जा सका, तो उसमें आपत्ति क्या है ? क्यों दत्तोपंत, ऐसा ही है न ? अब मैं घबरा गया था। पहले मुझे लगा था कि मेरी प्रशंसा कर रहे हैं। अब ध्यान में आया कि पटरी एकदम बदल गई है। मैं गर्दन झुकाकर चुपचाप बैठा। श्री गुरूजी ने फिर से पूछा, ऐसा ही है न ? मैंने बड़ी मुश्किल से केवल गर्दन हिलाई।

उस पर गुरूजी बोले, ''आबा सुन लो, ये क्या कह रहे हैं ? और फिर मुझसे कहा- मैं तीन-चार दिनों से आबा को समझा रहा हूँ। किन्तु मेरी बात इसके ध्यान में नहीं आती। यह मुझे भी हर दिन संघ स्थान पर आने का आग्रह करता है। मैं उनको बता रहा हूँ। अरे, मैं संघ का सरसंघचालक हूँ। संघ के अलावा मेरे जीवन में और कुछ है ही नहीं। मेरी जो कुछ भी हलचल रहती है वह संघकार्य का ही तो हिस्सा है। जब मैं चौबीस घंटे संघ के अलावा

और कोई भी काम करता ही नहीं तो मेरे ऊपर यह सख्ती क्यों, कि मुझे हर दिन शाखा के लिए एक घंटा देना चाहिए। मैं समझाता हूँ, लेकिन आबा मानता ही नहीं ।''

इस पर कुछ भी प्रतिक्रिया व्यक्त करना संभव नहीं था । श्रीगुरू जी क्या संकेत कर रहे हैं यह सबके ध्यान में आया । मेरे तो ध्यान में आया ही और तब से मैंने हर दिन शाखा पर जाना शुरू किया ।

2. कार्यकर्ता के प्रति उदारता : पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय का भूमि पूजन कार्यक्रम होना था । उसमें मेरे पिता श्री (बैरिस्टर साहब) व माँ (बूजी) को प्राण प्रतिष्ठा कार्यक्रम में यज्ञमान स्वरूप में बैठने को कहा गया । माता जी की यह हार्दिक इच्छा थी कि यह कार्यक्रम पू० गुरूजी द्वारा सम्पन्न हो । उन्होंने मा० भाऊराव जी के समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त की । उन्होंने सुझाव दिया कि आप (बूजी) स्वयं उनसे कहें । इस पर बूजी ने गुरूजी से निवेदन किया । गुरूजी से कहा - सारे शास्त्रीय कर्म गृहस्थ को सपत्नीक करने का अधिकार है - मैं कैसे बैठ सकता हूँ। बूजी ने कहा - आप तो सारे हिन्दू समाज जैसे परिवार के मुखिया हैं। आप से बड़ा गृहस्थ हममें से कोई नहीं है। गुरूजी समझ गये कि बूजी की इच्छा दृढ़ है और स्वीकृति दे दी । पूजनादि नियमानुसार सम्पन्न कराया । कार्यकर्ता का मन रखने के लिए वे कितना उदार हो जाते थे । यह सोचकर मन भर आता है ।

3. हम नियम से ऊपर नहीं हैं : एक बार मेरे बड़े भाई श्री धीरेन्द्र जीत और मैं दोनों गुरूजी को स्टेशन तक कार से छोड़ने जा रहे थे । भाई साहब गाड़ी चला रहे थे । समय हो रहा था भाई साहब ने गाड़ी को मरे कम्पनी चौराहे पर आगे (पुल नहीं था तब) पूरा चक्कर बिना किये सीधे पार किया इस पर गुरूजी ने कहा कि क्यों धीरेन्द्र जी आपने पूरा चक्कर नहीं लगाया । नियम सभी के लिए हैं । हम लोग तो सामान्य व्यक्ति हैं । हमें नियम पालन करना ही चाहिए। नियम केवल वही बदल सकता है, जिसमें इतनी योग्यता हो कि समाज उसे स्वीकार करे तथा जिससे अधिक हित होने वाला हो ।

4. छोटे-छोटे आचरण से परख : वर्ष 1962 में नागपुर में संघ शिक्षा वर्ग तृतीय वर्ष में उत्तर प्रदेश की बैठक चल रही थी। प्रतापगढ़ के एक स्वयं सेवक को गीत न दोहराते हुए गुरूजी ने देख लिया । बाद में गीत समाप्त होने पर पूज्य गुरू जी ने उनको खड़े होने को कहा और पूछा कि आप गीत क्यों नहीं दोहरा रहे थे । उन्होंने अभिमान सहित कहा कि मैं कभी कोई गीत नहीं दोहराता हूँ । सम्भवतः वे इस कार्य को अपनी प्रतिष्ठा से कम मानते थे । गुरूजी ने कहा कि इनको कौन कार्यकर्ता तृतीय वर्ष संघ शिक्षा वर्ग में ले आया इन्हें तो कार्यक्रम के प्रति कोई रुचि नहीं है । इनका वर्ग में तीस दिन रहकर कोई लाभ नहीं होने वाला है । इन्हें वापस भेज दो । किसी को विश्वास नहीं हो रहा था कि पूज्य गुरूजी एकदम से इतने कठोर क्यों हो गये ? छोटे-छोटे आचरण से वे कार्यकर्ता को परख लेते थे ।

✶

बंदउँ संत समान चित, हित अनहित नहिं कोइ ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोइ ॥

अर्थ - मैं संतों को प्रणाम करता हूँ, जिनके चित्त में समता है, जिनका न कोई मित्र है और न शत्रु । जैसे अंजलि में रखे हुए सुन्दर फूल [जिस हाथ ने फूलों को तोड़ा और जिसने उनको रखा उन] दोनों ही हाथों को समान रूप से सुगंधित करते हैं उसी प्रकार से संत शत्रु और मित्र दोनों का ही समान रूप से कल्याण करते हैं ।

'अपने विद्यालय में गुरु जी का वक्तव्य'

हम परम सौभाग्यशाली हैं कि हमारे विद्यालय का शिलान्यास महान तपस्वी, समाजसेवी पूज्य श्री माधव राव सदाशिवराव गोलवलकर 'गुरु जी' के कर-कमलों से हुआ था । 23 फरवरी सन् 1969 को विद्यालय के शिलान्यास के शुभ अवसर पर 'गुरुजी' के द्वारा दिया गया वक्तव्य यहाँ प्रस्तुत है । — सम्पादक

शिक्षा के सम्बन्ध में मेरे मन में स्वाभाविक प्रेम है, किन्तु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य में प्रत्यक्ष रूप से किसी विद्यालय में पढ़ाना या किसी छात्र को घर बुलाकर पढ़ाना मेरे लिए संभव नहीं है । वंश परम्परा से मैं शिक्षक ही रहा हूँ । हमारे एक पूर्वज बड़े धर्माचार्य हुए हैं । अपने एक धर्मशास्त्र में उनका बड़ा अधिकार माना जाता है । उन्हें पुरस्कार में एक गाँव मिला था । उस गाँव के नाम पर ही मेरा यह नाम गोलवलकर पड़ा है । परम्परा से शिक्षा-क्षेत्र में रहने के कारण यह देखकर सुख होना स्वाभाविक ही है कि यहाँ एक नवीन विद्यालय का निर्माण होने जा रहा है । दूसरी प्रसन्नता की बात यह है कि यह विद्यालय अपने पं० दीनदयाल के नाम से चलाने का संकल्प किया गया है ।

संस्था का नाम बदलते रहना अनुचित

अनेक स्थलों पर विद्यालय चलते हैं । किसी न किसी का नाम उस पर रहता है । कभी किसी बड़े अधिकारी का नाम रहता है, कभी किसी बड़ी धनराशि देनेवाले पुरुष का । नागपुर में एक विद्यालय है जिसकी शताब्दी इसी वर्ष पूर्ण हुई है । पहले उसका नाम था - 'नीलसिटी हाईस्कूल ।' नील नाम का कोई अंग्रेज अधिकारी था, उसी के नाम पर उक्त नाम रखा गया था । बाद में नागपुर के एक सज्जन ने उस विद्यालय को धन दिया । इस पर उक्त सज्जन का नाम स्कूल में लग गया । कोई और सज्जन यदि पैसे दे देंगे तो शायद उनका नाम लग जाएगा और यह नाम हट जाएगा। एक ही जीवन में उसके कितने नाम रखे जाएँगे, भगवान जाने ।

किसी धनदाता के धन या सत्ताधारी पुरुष की कृपा से बननेवाले विद्यालय के साथ धनदाता या सत्ताधारी पुरुष का नाम जोड़ने की परिपाटी अनेक स्थानों पर दिखाई देती है । परन्तु जिसने धन नहीं दिया, धन देने की जिसमें क्षमता नहीं और जो कोई बड़ा अधिकारी भी नहीं रहा, ऐसे एक 'सामान्य से दिखनेवाले' व्यक्ति के नाम से यह विद्यालय चलाने का जो संकल्प हुआ है, वह अच्छा ही है । मैंने उनके सम्बन्ध में 'सामान्य से दिखानेवाले' शब्द का प्रयोग किया है, परन्तु उनमें बहुत गुण थे । इस कारण उन्हें असामान्य ही कहना चाहिए ।

सब विषयों का गहन अध्ययन

उन्होंने केवल विश्वविद्यालय से उपाधियाँ प्राप्त की थीं इतना ही नहीं, उत्तम विद्यार्जन भी किया था । उपाधियाँ तो कोई भी प्राप्त कर सकता है । आजकल तो उपाधियाँ प्राप्त करने के अनेक सरल मार्ग उपलब्ध हो गए हैं । उसके कारण ज्ञानशून्य अवस्था में ज्ञान की उपाधि प्राप्त हो सकती है । लेकिन उन्होने उपाधि अपने परिश्रम, बुद्धि और अध्ययन से प्राप्त की थी । उसके साथ इतने अन्यान्य विषयों का उनका अध्ययन था कि कभी-कभी तो आश्चर्य होता है कि इतने छोटे से सिर में यह सब समाया कैसे । अनेक विषयों पर वे मुझसे वार्ता करते थे । अनेक बार परामर्श करने के लिए आते थे । कभी-कभी वे यह भी कहते थे कि मुझे आपका मार्गदर्शन चाहिए । परन्तु यह तो कहने की बात थी ।

मैंने अनुभव किया कि उनका अध्ययन विभिन्न विषयों- समाजशास्त्र, धर्मशास्त्र, राजनीति, साहित्य आदि में बहुत गहन, गंभीर और गहराई तक पहुँचा हुआ था । उनकी अप्रतिहत गति देखकर लोगों को आश्चर्य होता था । कोई व्यक्ति केवल अध्ययन में ही अपना सारा समय लगा कर इस प्रकार से अपनी गति उत्पन्न कर सकता है, परन्तु उन्होंने अपना सारा समय केवल अध्ययन के लिए तो लगाया नहीं था । समय तो लगा था अन्य क्षेत्रों में, राष्ट्र के अभ्युदय में, उत्थान में, राष्ट्र की सुप्त सामर्थ्य को जगाने में, समाज के व्यक्ति-व्यक्ति को जोड़कर उसमें से एक प्रबल संगठित सामर्थ्य के आविष्कार में । इन कार्यों में उनका कितना समय जाता था, इसकी मैं कल्पना कर सकता हूँ ।

अभिजात विचार की क्षमता

कभी-कभी कुछ बंधु मुझे अभिमत लिखने के लिए पुस्तकें देते हैं। मैं तो कुछ पढ़ नहीं पाता। सबेरे से लेकर रात तक कोई न कोई मिलने आता रहता है। विभिन्न प्रकार के लोगों से बात करनी पड़ती है। अनेक लोग और अनेक प्रकार की वार्ता। मनुष्य में जितनी प्रकृति होती है, उतनी तरह की बातचीत की भी प्रकृतियाँ हैं। इन सब के कारण पुस्तक खोल के पढ़ने का समय नहीं मिलता। आजकल लोग वृत्त-पत्र पढ़ते हैं, पर मैं नहीं पढ़ता। लोगों के पास समय है, पर मेरे पास नहीं। हाँ, काम के लिए समय है। जो कुछ कार्य मेरे द्वारा होता है, उससे अधिक कार्य करने के बाद भी वे अध्ययन कैसे कर लेते थे, यह मेरे लिए चमत्कार का विषय है।

उनके पास कोई तो जादू था जिसके कारण वे प्रातःकाल से रात्रि तक, अखण्ड अविराम कार्य में लगे रहने के बाद भी, विभिन्न विषयों का अध्ययन भी कर सकते थे। विविध विषयों पर वे लिख भी सकते थे। अभिजात विचार भी वे लोगों को दे सकते थे। वे एक होनहार, बुद्धिमान तथा कर्तृत्ववान पुरुष थे। यह तीनों शब्द मैंने इसलिए कहे कि व्यक्ति में विशेष रूप से बुद्धि होती है और गुण होते हैं परन्तु कर्तृत्व के अभाव में सब नष्ट हो जाता है और अन्य गुणों के अभाव में कर्तृत्व उपयोग में नहीं आता। बुद्धि के बिना गुण और कर्तृत्व अपने स्थान पर ही रह जाते हैं। तीनों ही बातें होने के कारण ही मैंने कहा कि 'सामान्य से दिखनेवाले' व्यक्ति परन्तु जो वास्तव में असामान्य हो, उसके नाम से यह विद्यालय चल रहा है।

शिक्षा का मूल हेतु

हमें आशा और विश्वास है कि इस विद्यालय के संचालन, अध्यापन या अध्ययन का कार्य जो लोग करेंगे, वे सब इस नाम का आदर्श अपने निर्माण करने में रखेंगे तभी सफलता मिलेगी तभी देश का भविष्य उज्वल होगा। योग्य संस्कार, योग्य प्रकार का अध्ययन लेकर ही मनुष्य अपने कर्तृत्व के सहारे खड़ा होता है। किसी भी राष्ट्र या देश में ऐसे पुरुषों की जितनी विपुलता होती है, जितना अधिक उनका अनुपात होता है, उसी पर उस राष्ट्र का भविष्य निर्भर रहता है।

यदि अधिकांश जनसंख्या के पास बुद्धि न हो, किसी प्रकार के कर्तृत्व की पात्रता न हो, तो वह जनसंख्या केवल अन्य लोगों के उपयोग के लिए ही होगी, जो उनको दास के रूप में अपने काम लाएँगे। अपने निजी पराक्रम से स्वराष्ट्र का अभ्युदय करने की क्षमता उनके अन्दर नहीं रह सकेगी। इसलिए जितने अधिक परिमाण में लोग ऐसे कर्तृत्व सम्पन्न होंगे, कर्तृत्व के साथ गुणसम्पन्नता होगी और गुणों को बुद्धिमत्ता के द्वारा अधिकाधिक क्षमतासम्पन्न बनानेवाले लोग होंगे, उतने ही परिमाण में वे उस राष्ट्र का एवं अपना स्वयं का जीवन जगत् के सम्मुख श्रेष्ठ बना सकेंगे। परम्परा से ऐसे लोग उत्पन्न होते जाएँ, यही शिक्षा का एकमात्र हेतु है।

वर्तमान की शिक्षा जीवलोक में 'अर्थकरी विद्या' है। इस प्रकार की विद्या से केवल अर्थ प्राप्त होता है, जीविका का साधन प्राप्त होता है। परन्तु आज की विद्या तो 'अर्थकरी' भी नहीं रह गई है। नौकरी करना दास-प्रवृत्ति ही तो है। नौकरी करना, याने गुलामी करना। अर्थकरी का तात्पर्य है कि जो अध्ययन किया है, जो बुद्धि है, उससे स्वतन्त्रतापूर्वक अपना द्रव्यार्जन कर जीविका चलाना। जो इस प्रकार अपनी जीविका चला सकता है, वास्तव में उसी की विद्या अर्थकरी है।

आज ऐसी अर्थकरी विद्या अपने यहाँ नहीं है। केवल नौकरी की प्रवृत्ति उत्पन्न करने वाली विद्या यहाँ चल रही है, ऐसी विद्या से देश की भलाई नहीं हो सकती।

नौकरी उत्पादक नहीं हो सकती

ऐसी शिक्षा पानेवाले देश की समृद्धि में योगदान नहीं कर सकते। यदि किसी ने कुछ समृद्धि उत्पन्न की भी तो वे उसे भोगनेवाले ही बनेंगे। नौकरी करने वाला देश को खाता है। वह लोगों के पैसे, उनकी सम्पत्ति ही खाता है। नौकरी करने वाला कौन सा उत्पादन करता है ? कुछ नहीं करता है। देश की सम्पत्ति में उसके द्वारा किस प्रकार से सहायता प्राप्त होगी ? वह तो अधिक से अधिक इतना ही कर सकेगा कि देश की सम्पत्ति खानेवालों की संख्या बढ़ा दे। वह सम्पत्ति में वृद्धि नहीं कर सकता। ऐसी शिक्षा तो आदमी को और सारे देश को लेकर डूबने वाली है।

अपने यहाँ शिक्षा का हेतु बहुत ही उच्च बताया गया है। शिक्षा से मनुष्य के अन्दर जो एक चिरंतन सत्य तत्त्व है, उसे आविष्कृत करने की क्षमता प्राप्त होनी चाहिए। उसके लिए आवश्यक गुण विकसित हों, जगत् भर के अनेकानेक

आवश्यक विषयों का ज्ञान प्राप्त हो तथा यह बोध हो जाए कि अपने अन्दर की सत्य अवस्था का ज्ञान मुझे है। इसलिए अपने यहाँ कहा गया है कि प्रत्येक मनुष्य को वे प्राथमिक बाते सीखनी चाहिए, जिनसे मनुष्य को अपनी वास्तविक स्थिति, अर्थात् अपने चिरंतन तत्त्व का थोड़ा-बहुत बोध हो जाए। मनुष्य की आत्मा को मानो प्रकट करना ही शिक्षा का कार्य है। इस अर्थ में तो आजकल कहीं शिक्षा होती नहीं। केवल इधर-उधर के दो-चार विषयों के टूटे-फूटे, अधकचरे टुकड़े ही दिमाग में भरे जाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि दिमाग को कचरा डालने वाली पेटी बना दिया गया है।

मनुष्य के व्यक्तित्व, चिरंतन तत्त्व और सद्‌गुणों का विकास तथा अवगुणों का ह्रास होता दिखाई दे रहा है, इसलिए ऐसा लक्ष्य सामने रखनेवाले शिक्षा प्रतिष्ठान देश भर में, स्थान-स्थान पर स्थापित होना आवश्यक है।

योग्य आदर्श रखा

ऐसे प्रतिष्ठानों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने सामने किसी श्रेष्ठ व्यक्ति का आदर्श रखें तथा अपने छात्रों को उसके जैसा बनाने का प्रयत्न करें। इस दृष्टि से इस संकल्पित विद्यालय ने अपने समक्ष एक बहुत योग्य पुरुष का आदर्श रखा है। दीनदयाल नाम का एक विशिष्ट व्यक्ति तो चला गया, परन्तु हम आशा करें कि जिस गुणसमुच्चय और कर्तृत्व से युक्त असंख्य लोगों की परम्परा उनके नाम से स्थापित होने वाले इस विद्यालय से निर्मित होकर आगे बढ़ेगी, ऐसी परम्परा ही राष्ट्रकार्य के लिए उपयोगी होगी।

जिस युग में हम रह रहे हैं, उसे 'कलियुग' कहते हैं। इस युग के जो अनेक दोष बताए गए हैं, उनमें से एक यह है कि मनुष्य को पुत्र-शोक प्राप्त होता है। पूर्व काल में पुत्र-शोक नहीं होता था। प्रत्येक व्यक्ति पूर्णायु प्राप्त करके ही जाता था। इसलिए किसी पिता के सामने पुत्र की मृत्यु का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता था। किन्तु अब कलियुग में सभी बातें उल्टी हो रही हैं। बूढ़े-बूढ़े जी रहे हैं और तरुण जा रहे हैं। मुझे भी एक बहुत बड़ी गृहस्थी और परिवार का याने संघ परिवार का मुखिया होने का सौभाग्य प्राप्त है। जब कुछ ऐसी-वैसी बातें हो जाती हैं तो यही सोचकर चलना पड़ता है कि यह कलियुग है। कुछ अपने पूर्वजन्म और कुछ इस जन्म का अनिष्ट कार्य ही होगा, जिसके फलस्वरूप इस प्रकार के शोक का दण्ड मिल रहा है।

हम सब बन्धु अपने मन में यह विचार रखें कि इस विद्यालय की प्रगति हम सबके प्रयत्नों से ही होगी। हमें इसके लिए सहयोग करना होगा और सर्वोत्तम सहयोग यही होगा कि हम स्वयं अपने जीवन में गुण, बुद्धि और कर्तृत्व का समुच्चय विकसित करने का प्रयत्न करें। आलसी न बनें। ध्येय और कर्मपथ से विचलित न हों। यदि हम लोगों ने इतना ध्यान रखा तो आनेवाली पीढ़ी को हम योग्य बना सकेंगे।

संघ-स्वयंसेवक और राजनीति

किसी व्यक्ति, विशेषकर जब अपने स्वयंसेवक को इधर-उधर का आकर्षण हो जाता है, तब वह अपने संघ के नित्य कार्य से कभी-कभी कुछ विरक्त-सा हो जाता है। मनुष्य जगत के आकर्षणों से विचलित होता ही है। यदि किसी को राजनीति के क्षेत्र में जाने का अवसर मिल गया, तो वह सोचने लगता है कि वह भगवान के समकक्ष हो गया है। अब उसके लिए कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा। भगवान ने गीता में कहा है - ''मेरे लिए कोई कर्तव्य नहीं। कर्म के लिए मेरे मन में कोई स्पृहा भी नहीं।'' इसी प्रकार राजनीति के क्षेत्र में गया हुआ व्यक्ति भी अपने को भगवान मान कर कहता है कि मेरे लिए अब कोई कर्म नहीं। संघ में अपने लिए कुछ करणीय नहीं। राजनीतिक क्षेत्र में मैं भाषणबाजी करूँगा - मेरे लिए यही सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रकार्य है, बाकी सब नगण्य है, क्षुद्र है। राजनीतिज्ञों में ऐसा अभिमान उत्पन्न हो जाता है।

दीनदयाल जी स्वयंसेवकत्व नहीं भूले

ऐसी अवस्था में हमें दीनदयाल जी का उदाहरण अपने सामने रखना चाहिए। उन्होंने राजनीति के क्षेत्र में एक असामान्य स्थान प्राप्त किया था। उसे असामान्य इसलिए नहीं कहता हूँ कि वे जनसंघ के अध्यक्ष हो गए थे। अध्यक्ष तो वे दस वर्ष पूर्व ही हो सकते थे। वे तो अध्यक्ष बनानेवाले बने थे। अध्यक्ष होने की योग्यता कई वर्ष पहले से ही उनमें थी। विचारों के सन्तुलन, भाषा और विद्वत्ता के कारण सम्पूर्ण राजनीतिक क्षेत्र में उनकी एक छाप थी। सभी यह सोचते थे कि यह व्यक्ति जो कुछ बोलता है, ठीक है। उसपर वे भी विचार करना आवश्यक मानते थे।

जिन व्यक्तियों के हृदय में उनके विचार सुनकर कुछ विरोध भी उत्पन्न होता था, वे भी उनकी बात पर विचार करते थे। भिन्न-भिन्न दलों के बड़े-बड़े लोग भी उन्हें श्रेष्ठ मानते थे। उनकी सर्वदूर धाक थी। परन्तु इतना सब होने

के बाद भी वे अपना सीधा-सादा स्वयंसेवकत्व तथा उसके अनुरूप व्यवहार व आचरण कभी भूले नहीं। हम लोग कहा करते थे, जरा इधर आकर प्रतिष्ठित व्यक्ति के समान बैठिए। पर वे स्वयंसेवकों में ही बैठते थे। उन्होंने कभी ऐसा नहीं माना कि मैं बड़ा हूँ।

यदि उनसे कहा गया कि संघ के कार्य के लिए आपको ऐसा करना है, तब वे अपने जनसंघ का सारा काम-धंधा लपेट कर संघकार्य के लिए प्रस्तुत हो जाते थे। उनकी श्रेष्ठता, सौजन्यता, विद्वत्ता तथा अत्यन्त विनम्रता के पीछे यही एकमात्र रहस्य था कि वे जिस किसी भी क्षेत्रमें कार्य करने गए, उन्होंने अपना स्वयंसेवकत्व नित्य जाग्रत रखा। अपने अंतःकरण में अनुशासन को सदा बाँधे रखा। कभी भी अपने मन को,वृत्ति को भटकने नहीं दिया।

यदि हम सबने भी इन सद्गुणों का विचार किया और उन्हें अपने अन्दर चरितार्थ कर लिया, तो इस विद्यालय को आनेवाली पीढ़ियों का मार्गदर्शन करनेकी क्षमता प्राप्त होगी तथा सभी प्रकार के राष्ट्रोपयोगी कार्य करना संभव होगा।

श्री गुरु जी का जीवन-वृत्त

श्री रामकृष्ण परमहंस की परम्परा के स्वामी अखंडानंद से दीक्षित संघ के द्वितीय सरसंघचालक श्री माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर (गुरुजी) के सत्त्वसंपन्न जीवन का संक्षिप्त वृत्त

सन् 1963	विजयनगर साम्राज्य से पाध्ये वंश का कोंकण (महाराष्ट्र) के गोळवली ग्राम में आगमन।
4-10-1925	कान्होजी आंग्रे द्वारा वेदमूर्ति काशीनाथ पाध्ये को गोळवली ग्राम दान में प्राप्त हुआ।
1791	श्री गुरुजी के परदादा श्री सखारामपंत का नागपुर आगमन।
1885	श्री गुरुजी के पिताजी सदाशिवराव (भाऊजी) का सौ० लक्ष्मीबाई रायकर (ताई जी) से विवाह।
19-2-1906	माघ वद्य विजया एकादशी, सोमवार, प्रातः 4.34 पर नागपुर में मामा रायकर के घर श्री गुरुजी का जन्म।
1915	चौथी कक्षा की परीक्षा में नर्मदा विभाग में प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण कर छात्रवृत्ति प्राप्त की। इसी समय खंडवा में व्रतबंध संस्कार सम्पन्न हुआ। उसी दिन से नित्य संध्या व सूर्यनमस्कार की अखण्ड उपासना।
1917	वक्तृत्व स्पर्धा में प्रथम क्रमांक।
1922	चंद्रपुर जुबली हाईस्कूल से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण।
1922	पं० सांवळाराम से बाँसुरी वादन सीखा।
1924	नागपुर के हिस्लाप महाविद्यालय से प्राणिशास्त्र विषय लेकर इंटर किया।
1924	स्नातक अध्ययन हेतु काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश।
1926	प्राणिशास्त्र में स्नातक उपाधि प्राप्त की।
1928	प्राणिशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्रथम श्रेणी में।
1929	चेन्नै के मत्स्यालय में संशोधन विद्यार्थी के नाते प्रवेश।
अगस्त 1931	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राणिशास्त्र विषय में अध्यापन का कार्य शुरू किया।
1931	वाराणसी में भैयाजी दाणी के माध्यम से संघ प्रवेश, तदुपरान्त संघचालक का दायित्व स्वीकार किया।
1931	नागपुर में रामकृष्ण आश्रम से सम्बन्ध।
1933	विधि (लॉ) की पढ़ाई प्रारम्भ की।
1934	नागपुर केन्द्र शाखा के कार्यवाह का दायित्व स्वीकार किया। कुछ समय के लिए मुंबई में प्रचारक रहे। अकोला संघ शिक्षा वर्ग के सर्वाधिकारी।
1935	विधि की उपाधि प्राप्त कर अभिभाषक का व्यवसाय शुरू किया।
1936	सारगाछी, बंगाल में रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी अखंडानंद की सेवा में।

13-1-1937	दीक्षा ग्रहण।
24-1-1937	स्वामी अखंडानंद जी ने शक्तिपात द्वारा अपनी दैवी शक्तियाँ व अमोघ आशीर्वाद दिया।
7-2-1937	स्वामी अखंडानंद जी का निर्वाण।
मार्च 1937	सारगाछी आश्रम से लौटने के पश्चात् डाक्टर हेडगेवार जी के सान्निध्य में।
फरवरी 1938	स्वामी विवेकानंद जी के शिकागो भाषण का अनुवाद।
मई 1938	नागपुर में संघ शिक्षा वर्ग के सर्वाधिकारी।
17-6-1938	पूजनीय डाक्टर जी के साथ कोल्हापुर में 'भगवा झेंडा' चित्रपट के उद्घाटन समारोह में गए।
1939	श्री बाबाराव सावरकर द्वारा लिखित 109 पृष्ठीय पुस्तक 'राष्ट्र मीमांसा' का अनुवाद एक रात्रि में किया व उसकी प्रस्तावना भी लिखी।
24-2-1939	सिंदी (महाराष्ट्र) में सम्पन्न दस दिवसीय चिंतन बैठक में सक्रिय सहभाग।
22-3-1939	कोलकाता में प्रचारक के रूप में कार्य करने हेतु प्रस्थान।
1939	नागपुर संघ शिक्षा वर्ग के सर्वाधिकारी।
अगस्त 1939	नागपुर के रक्षाबंधन उत्सव में डाक्टर जी ने सरकार्यवाह के पद पर नियुक्ति की।
2-6-1940	'शिवाजी महाराज के मिर्जा राजा जयसिंह को लिखे पत्र' विषय पर पूजनीय डाक्टर जी की उपस्थिति में बौद्धिक दिया।
20-5-1940	श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी से भेंट।
20-6-1940	नागपुर में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस से भेंट।
20-6-1940	डाक्टर जी ने अपनी शल्यक्रिया के पूर्व श्री बाबासाहब घटाटे, श्री यादवराव जोशी, श्री कृष्णराव मोहरीर की उपस्थिति में श्री गुरुजी से संघ की धुरी संभालने को कहा।
21-6-1940	पूजनीय डाक्टर जी का स्वर्गरोहण।
3-7-1940	स्वर्गीय डाक्टर जी के अनन्य सहयोगी प्रान्त संघचालक श्री बाबासाहब पाध्ये ने श्री गुरुजी के सरसंघचालक होने की विधिवत घोषणा की।
21-7-1940	पूजनीय डाक्टर जी के मासिक श्राद्ध दिन पर देश भर के कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शन।
1941	सरसंघचालक के रूप में देशभ्रमण की शुरुआत।
1941	नागोबा गली में निवास के लिए आए।
1941	देश-बांधवों की पीड़ा देखकर रात्रि के भोजन का त्याग।
1942	संघ-शाखा के जन्मस्थान मोहिते बाड़े को क्रय कर संघ के केन्द्रीय कार्यालय 'डा० हेडगेवार भवन' का निर्माण।
अगस्त 1947	विभाजन की छाया में जल रहे पंजाब का प्रवास।
अगस्त 1947	गुरुद्वारा मस्तवाना साहब (पंजाब) में सम्मान।
अगस्त 1947	कराजी व हैदराबाद (सिंध) में विशाल सार्वजनिक सभा।
12-9-1947	दिल्ली में महात्मा गाँधी व सरदार पटेल से भेंट।
17-10-1947	कश्मीर के भारत में विलय के विषय पर सरदार पटेल के आग्रह पर जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह से चर्चा करने श्रीनगर गए।
19-10-1947	कश्मीर विलय के बारे में प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरु से चर्चा।
30-1-1948	महात्मा गाँधी की हत्या का समाचार सुन, अपना प्रवास स्थगित कर अगले दिन चेन्नै से विमान द्वारा नागपुर आए।

1-2-1948	महात्मा गाँधी की हत्या के आरोप में रात्रि 12 बजे नागपुर में गिरफ्तार।
4-2-1948	शासन द्वारा संघ पर प्रतिबंध।
5-2-1948	श्री गुरुजी द्वारा संघ को विसर्जित करने की घोषणा।
अगस्त 1948	संघ पर लगे प्रतिबंध को हटाने के बारे में प्रधानमंत्री नेहरू व सरदार पटेल के साथ पत्र व्यवहार।
6-10-1948	नागपुर जेल से रिहाई।
17-10-1948	प्रधानमंत्री व गृहमंत्री से चर्चा हेतु दिल्ली पहुँचे।
17 तथा 23	सरदार पटेल से भेंट।
13-11-1948	दिल्ली में गिरफ्तार कर विमान से नागपुर लाया गया और स्थानीय जेल में रखा गया। फिर मध्य प्रदेश की सिवनी जेल में स्थानान्तरित किया गया।
9-12-1948	चर्चाओं की विफलता के पश्चात् सत्याग्रह प्रारम्भ करने की घोषणा की।
12-1-1949	'केसरी' के संपादक श्री ग०वि० केतकर, सरदार पटेल के निर्देश पर सिवनी जेल में मिलने आए।
13-2-1949	श्री वेंकटराम शास्त्री व श्री खापर्डे से सिवनी जेल में संघ के संविधान के प्रारूप पर चर्चा की।
10-3-1949	श्री वेंकटराम शास्त्री द्वारा संघ के संविधान को दिए अन्तिम प्रारूप को स्वीकृति दी।
7-6-1949	सिवनी जेल से बैतूल जेल में स्थानान्तरित किया गया।
10-7-1949	प्रतिबंध हटाने के लिए कांग्रेसी नेता श्री मौलिचंद्र शर्मा के माध्यम से सरकार को पत्र भेजा।
13-7-1949	प्रतिबंध हटने की घोषणा के पश्चात् बैतूल जेल से रिहाई व नागपुर आगमन।
19-7-1949	देशव्यापी संपर्क परिक्रमा का प्रारम्भ।
अगस्त 1949	दिल्ली के रामलीला मैदान में श्री गुरुजी का भव्य स्वागत व सार्वजनिक सभा।
23-9-1949	प्रधानमंत्री श्री नेहरू से दिल्ली में भेंट।
15-12-1950	सरदार पटेल के अन्तिम दर्शन हेतु मुंबई प्रस्थान।
14-1-1951	योगमूर्ति श्री जनार्दन स्वामी से प्रथम भेंट।
1951	नागपुर में श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी से चर्चा कर राजनीतिक दल 'भारतीय जनसंघ' की स्थापना का निश्चय।
25-12-1951	विश्रांति हेतु सिंहगढ़ किले पर लोकमान्य तिलक के आवास पर 25 दिन निवास।
9-5-1952	स्वातंत्र्यवीर सावरकर की क्रान्तिकारी संस्था 'अभिनव भारत' के समापन समारोह में पुणे में, प्रमुख अतिथि के रूप में उपस्थित।
15-10-1952	गोहत्या बंदी के लिए सभी राजनीतिक दल व सामाजिक संगठनों के प्रमुखों को पत्र लिखे।
सितम्बर 1952	सार्वभौम साधु सम्मेलन में सहभाग।
7-12-1952	गोहत्या बंदी के समर्थन में दिल्ली के रामलीला मैदान में विशाल सभा में भाषण।
8-12-1952	दिल्ली के महापौर लाला हंसराज गुप्ता के साथ राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद से भेंट कर गोरक्षा आन्दोलन की जानकारी दी।
9-3-1954	सिंदी (महाराष्ट्र) में अखिल भारतीय कार्यकर्ताओं के आठ दिवसीय चिंतन शिविर में सहभाग।
23-5-1954	'भाषावार प्रान्त रचना विरोधी मंच' के अध्यक्ष के रूप में मुंबई की सार्वजनिक सभा में भाषण।
21-7-1954	पिता श्री सदाशिवराव गोलवलकर का स्वर्गवास।
1956	श्री गुरुजी के 51वें जन्म-दिवस पर देशभर में श्रद्धानिधि-संग्रह व अभिनंदन कार्यक्रम।
21-11-1958	भारतीय सेना के प्रथम थलसेनाध्यक्ष जनरल करिअप्पा से उनके निवास पर भेंट।
5-3-1960	इंदौर (मध्यप्रदेश) में संघ की सात दिवसीय अखिल भारतीय चिंतन बैठक में सहभाग।

28-9-1960	श्री अटलबिहारी वाजपेयी की पहली अमरीका यात्रा के समय उनके माध्यम से अमरीकावासियों के नाम संदेश भेजा।
5-4-1962	वर्ष प्रतिपदा के दिन रेशमबाग में पूजनीय डाक्टर जी की समाधि पर नवनिर्मित स्मृतिमंदिर के उद्घाटन समारोह में।
20-7-1962	बर्मा की 'वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट' के अध्यक्ष न्यायमूर्ति उ-थांट की श्री गुरुजी से भेंट।
12-8-1962	माताजी 'ताईजी' का स्वर्गवास।
29-10-1962	अलवर व चित्तौड़ में स्वयंसेवकों को संबोधित करते हुए चीन द्वारा आक्रमण किए जाने की चेतावनी दी व सन्नद्ध रहने का आह्वान किया।
3-2-1963	स्वामी विवेकानन्द जन्म-शताब्दी समारोह के अन्तर्गत कोलकता में सार्वजनिक कार्यक्रम में भाषण।
1963	रामनवमी पर वनवासी कल्याण आश्रम, जशपुर में आयोजित धर्मजागरण सम्मेलन की अध्यक्षता की।
23-3-1964	नियमित प्रवासक्रम में हजारीबाग, बिहार (संप्रति झारखंड) जाना हुआ। परन्तु वहाँ जारी सांप्रदायिक दंगे के कारण राज्य-सरकार ने श्री गुरुजी के राज्य प्रवेश पर रोक लगा दी। इसलिए हजारीबाग पहुँचने पर गिरफ्तार किया।
2-4-1964	पवनार आश्रम में विनोबा भावे से प्रदीर्घ चर्चा।
14-4-1964	स्वामी विवेकानन्द जी द्वारा अल्मोड़ा में स्थापित अद्वैत आश्रम में जाना हुआ।
11-8-1964	केन्द्रीय शिक्षा मंत्री श्री मोहम्मद करीम छागला से भेंट।
28-8-1964	स्वामी चिन्मयानंद आश्रम, पवई 'मुंबई' में प्रमुख संत-महंतों की उपस्थिति में कृष्ण जन्माष्टमी के दिन विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना के समय उपस्थित।
6-9-1964	सांगली में प्रान्त संघचालक श्री काशीनाथ पंत लिमये के सम्मान समारोह में उपस्थित।
30-10-1964	दिल्ली में लालकिले में आयोजित सरदार पटेल जयंती समारोह में राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन, प्रसिद्ध समाजवादी नेता डा० राममनोहर लोहिया की उपस्थिति में भाषण।
24-11-1964	त्रिनिदाद के संसद सदस्य श्री शंभुनाथ कपिलदेव ने बेलगाँव में श्री गुरुजी से भेंट कर विदेशस्थ हिन्दुओं के लिए संस्कार व्यवस्था करने की प्रार्थना की।
6-9-1965	पाकिस्तान युद्ध के प्रसंग पर प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री द्वारा बुलाई गई सर्वदलीय बैठक में सम्मिलित हुए।
15-10-1965	अंबाला छावनी में सैनिकों के सम्मुख 'भारत-पाक युद्ध' विषय पर भाषण।
12-1-1966	स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को श्रद्धांजलि अर्पित करने उनके निवास पर गए।
6-10-1966	पारडी (गुजरात) में संस्कृत के विद्वान श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी का अभीष्ट चिन्तन किया।
जनवरी 1966	कुंभ मेले के अवसर पर प्रयाग में विश्व हिन्दू परिषद् के प्रथम जागतिक सम्मेलन में उपस्थित।
1-11-1966	मुंगेर (बिहार) में योग सम्मेलन का उद्घाटन तथा गोरक्षा अभियान के अन्तर्गत जनसभा में भाषण।
20-11-1966	पंढरपुर के संत पूज्य धुंडा महाराज देगलूरकर के सत्कार समारोह में संबोधन।
30-1-1967	प्रसिद्ध क्रान्तिकारी डा० खानखोजे के निधन पर आयोजित शोकसभा में भाषण।
6-4-1967	पूजनीय डाक्टर जी के अनन्य सहयोगीवर्धा के मानवीय अप्पाजी जोशी के सत्कार समारोह में उपस्थित।
14-4-1968	दिल्ली में पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर के अभिनंदन समारोह में उपस्थित।
17-5-1968	मुंबई में स्वर्गीय पं० दीनदयाल उपाध्याय की पुस्तक 'पालिटिकल डायरी' के विमोचन कार्यक्रम में भाषण।
18-9-1969	श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के साथ बद्रीनारायण धाम की यात्रा। ब्रह्मकपाल पर स्वयं का श्राद्ध किया।

15-4-1969	नागपुर महानगरपालिका में जनसंघ के नवनिर्वाचित पार्षदों का मार्गदर्शन।
2-10-1969	सांगली (महाराष्ट्र) में महात्मा गाँधी जन्म शताब्दी समारोह सभा में भाषण।
1969	उडुपी में आयोजित विश्व हिन्दू परिषद् के सम्मेलन में भारत की सामाजिक व्यवस्था को दिशा देने वाले युगांतरकारी प्रस्ताव को सारे धर्माचार्यों की सहमति दिलवाई।
1970	असम में विश्व हिन्दू परिषद् का सम्मेलन। महारानी गाइडिन्ल्यू से भेंट।
18-5-1970	कर्करोग (कैन्सर) होने की जानकारी होने के बाद भी संघ शिक्षा वर्ग का प्रवास यथावत किया।
1-7-1970	मुंबई के टाटा मेमोरियल चिकित्सालय में डा० प्रफुल्ल देसाई द्वारा कर्करोग पर शल्यक्रिया।
4-8-1970	शल्यक्रिया के पश्चात् नागपुर में संघचालक बाबासाहब घटाटे के निवास स्थान पर विश्राम हेतु आगमन।
13-8-1970	अस्वस्थता के बावजूद रक्षाबंधन उत्सव में स्वयंसेवकों को संबोधित किया।
4-10-1971	कोल्हापुर में कुलदेवी अंबा देवी के दर्शन कर घर से प्राप्त अलंकार व स्वर्ण का समर्पण।
2-11-1971	कर्णावती में भगवान ऋषभदेव समारोह में उपस्थिति।
4-12-1971	बाँग्लादेश मुक्ति संग्राम में सहयोग करने हेतु राष्ट्र को आह्वान।
दिसम्बर 1971	काशी में माघ वद्य (कृष्ण) एकादशी को रुद्रयाग की समाप्ति के अवसर पर उपस्थित होकर संत प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी व पं० राजेश्वर शास्त्री द्रविड़ से आशीर्वाद की प्राप्ति।
5-1-1972	श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी आश्रम में उनके द्वारा रचित श्रीमद्भागवत ग्रन्थ का विमोचन।
2-2-1972	कन्याकुमारी में देवी के श्रीविग्रह के दर्शन किए व विवेकानन्द शिलास्मारक को देखा।
11-3-1972	पांडिचेरी में योगीराज अरविन्द घोष की समाधि के दर्शन व श्री माँ से भेंट।
21-3-1972	स्वयं का जन्मदिवस चेन्नै स्थित रामकृष्ण आश्रम में ध्यान धारणा में व्यतीत किया।
20-8-1972	दिल्ली में 'दीनदयाल शोध संस्थान' का उद्घाटन किया।
28-10-1972	ठाणे (महाराष्ट्र) में दस दिवसीय अखिल भारतीय चिंतन बैठक में प्रतिदिन मार्गदर्शन।
19-12-1972	क्रान्तिवीर डाक्टर मुंजे जन्मशताब्दी समारोह के अन्तर्गत नागपुर में उनकी प्रतिमा अनावरण समारहो में उपस्थित।
4-2-1973	बंगलौर में सार्वजनिक कार्यक्रम में संबोधन (यह उनका अंतिम सार्वजनिक कार्यक्रम रहा)।
12-3-1973	अखिल भारतीय प्रवास-क्रम को विराम।
14-3-1973	मुंबई से नागपुर का अन्तिम विमान प्रवास।
25-3-1973	संघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा को भविष्यदर्शक संबोधन, जो लौकिक जीवन का अन्तिम संबोधन रहा।
26-3-1973	मोहिते संघस्थान पर प्रार्थना। इसके बाद संघस्थान पर उपस्थित होकर प्रार्थना करना संभव न हुआ।
2-4-1973	कांची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य पूज्य जयेन्द्र सरस्वती संघ कार्यालय में श्री गुरुजी से भेंट करने आए।
19-4-1973	रामटेक स्थित अपना पैतृक मकान 'उत्कर्ष मंडल' को दान दिया।
2-4-1973	अंतिम तीन पत्रों का लेखन।
मई 1973	तृतीय वर्ष के प्रशिक्षार्थी स्वयंसेवकों से गटशः परिचय व चर्चा।
5-6-1973	सायंकाल 6 बजे प्रार्थना की। रात्रि 9.05 पर जीवन का अवसान।
6-6-1973	रेशम बाग में डाक्टरजी की समाधि के सामने पार्थिव शरीर अग्निदेव को समर्पित।

✶

परिपूर्ण मानव

—श्री माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर

यह हमारे विद्यालय का सौभाग्य है कि इसकी नींव एक ऐसे तपस्वी ने रखी थी जिसकी कीर्ति युगान्त तक जीवित रहेगी । विद्यालय के उपासना कक्ष में हनुमान जी महाराज की प्राण-प्रतिष्ठित मूर्ति है । फाल्गुन शुक्ल नवमी संवत् 2028 वि० को मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा के सुअवसर पर विद्यालय में पूज्य गुरु जी द्वारा दिया गया भाषण हमको प्राप्त हुआ है, वही यहाँ प्रस्तुत है । — सम्पादक

भारतीय जीवन सिद्धान्तों के सम्बन्ध में आज फिर से विचार करने की आवश्यकता उत्पन्न हुई है । इसका कारण बड़ा स्पष्ट और सरल है । हमें पता है कि जब तक देश में एक परकीय राज्य था तब तक लोगों में अपना देश, अपना राष्ट्र, अपना स्वत्व यह विचार प्रबल था । लोग यह भी समझते थे कि अपने राष्ट्र के स्वातन्त्र्य के लिये, पुनर्निर्माण के लिए सद्‌गुणी जीवन, निर्दोष जीवन, स्वार्थरहित तथा त्याग-तपस्या से भरा हुआ जीवन आवश्यक है । इन दिनों प्रत्येक दल का कार्यकर्ता अत्यन्त सादगी और त्याग का जीवन व्यतीत करता था । उस समय कोई यह सोच भी नहीं सकता था कि आगे चलकर इस परम्परा में कोई विकृति आयेगी । सभी के मन में यही विश्वास होता था कि जब ऐसे श्रेष्ठ चरित्रवान, गुणवान, त्यागी पुरुष अपने देश की बागडोर संभाल लेंगे तो सभी प्रकार का उत्कर्ष होगा और अपने राष्ट्र की पुनीत परम्परा प्रकट होगी । परन्तु निरंकुश सत्ता जीवन में बहुत दोष उत्पन्न कर देती है । लोग कहते हैं कि भिन्न-भिन्न प्रकार के मदों से भी अधिक संकट उत्पन्न करने वाला सत्ता का मद होता है । यह मद आज किसी के भीतर आया है या नहीं, यह बताने की आवश्यकता नहीं, परन्तु यह कहा जा सकता है कि आज जीवन से सादगी, स्वार्थरहितता और त्याग का भाव समाप्त हो गया है । उनके साथ-साथ सद्‌गुण भी नष्ट हो गये हैं । सर्वत्र भ्रष्टाचार फैला है । उदाहरण देना ठीक नहीं, किन्तु आज जो भी अच्छे-बड़े पुरुष विद्यमान हैं, उनमें से अनेक ऐसे हैं जिनका (व्यक्तिगत जीवन कैसा है यह तो नहीं जानता पर) सार्वजनिक जीवन स्वीकृत आदर्शों से कोसों दूर है ।

चारित्र्य का संकट व उसकी उपायोजना

कई वर्षों पहले हमने सुना था कि अपने देश में चारित्र्य का संकट उत्पन्न हो गया है । इसे 'क्राइसिस आफ कैरेक्टर' कहते हैं । परन्तु उनके निर्माण का कोई कार्य नहीं करता । हमने सर्वसामान्य व्यक्ति से यह आशा की है कि वह चरित्रवान, गुणवान और स्वार्थशून्य बने । शायद इसीलिये छोटे-मोटे भ्रष्टाचार करने पर उसके लिए दण्ड की व्यवस्था भी की गयी, लेकिन जहाँ बहुत बड़े-बड़े घपले हो रहे हैं, उस ओर कोई देखता भी नहीं । यह बिल्कुल विपरीत बात है ।

समाज की योग्य धारणा

समाज और परिवार की उत्तम धारणा तथा सामान्य जीवन चलाने के लिए समाज के जनसामान्य की प्राथमिक आवश्यकताओं की उत्तम रीति से पूर्ति आवश्यक है । अर्थात् ऐहिक सम्पन्नता की जो आवश्यकता है, उसकी पूर्ति की व्यवस्था समाज की नींव से होनी चाहिये । इन सब प्रकार की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति नींव से आरम्भ करके ही ऊपर के लोगों की व्यवस्था की चिन्ता करनी चाहिये । ऐसा करने के लिये ऊपर के, बिल्कुल ऊपर के जो लोग हैं, उनको मानव की सहज आवश्यकताओं जैसे ऐश-आराम, खाना-पीना इत्यादि में कुछ संयम रखना पड़े तो रखना चाहिए। ऐसी स्थिति में किसी को किसी से कोई शिकायत नहीं होनी चाहिये । परन्तु चारित्र्य-निर्माण का क्रम इससे उल्टा चलता है । सम्पूर्ण समाज में जो लोग उच्च वर्ग के कहे जाते हैं, उनसे यह संयम, सादगी और सदाचार का जीवन आरम्भ होकर समाज की नींव तक, धीरे-धीरे झरता चला जाय, ऐसा जीवन बनाने की आज आवश्यकता है ।

लेकिन दिखायी यह देता है कि ऐश-आराम के भोग की सम्पन्नता उच्च वर्ग के लोग उठा रहे हैं और चरित्र-सम्पन्नता की अपेक्षा नींव के पास बैठे सामान्य मनुष्य से की जा रही है। यह बिल्कुल उल्टी बात है। इससे समाज का सच्चा विकास होना, समाज की योग्य धारणा होना सम्भव नहीं।

परकीय जीवन का अनिष्ट प्रहार

लेकिन आज उल्टी स्थिति देखने को मिलती है। साथ ही यह भी दिखाई देता है कि जब परकीय राज्य था तब अपने स्वत्व के, अभिमान के कारण अपनी परम्परा के अनुरूप जीवन बनाने का प्रयत्न चलता था। ऐसा होते हुए भी परकीय लोगों का अपने साथ सम्बन्ध आया और इस सम्पर्क का अपने अन्तःकरण पर जो कुछ आघात हुआ वह परकीय राज्य के विरोध की भावना से भरा हुआ था। परन्तु जैसे ही परकीय राज्य यहां से चला गया, वैसे उस आघात को दबा कर रखने वाली सम्पूर्ण प्रेरणा भी चली गयी। इस प्रकार परकीय जीवन का हमारे ऊपर बहुत बड़ा प्रहार हुआ। हमारा जीवन समूल बदल गया। यह बात तो ठीक है कि जगत में अन्यान्य लोगों से सम्बन्ध आने पर थोड़ा-बहुत जीवन प्रणाली का आदान-प्रदान होता है, होना भी चाहिये, परन्तु यहाँ आदान-प्रदान बिल्कुल नहीं हुआ। हम तो केवल ग्रहण कर रहे हैं। जो ग्रहण करने के योग्य नहीं है उसे भी ग्रहण कर रहे हैं। यदि हम अंग्रेजों की देशभक्ति की भावना, उनके विशिष्ट चरित्र और कर्मण्यता, कर्त्तव्यबोध के गुण को ग्रहण करते तो इसमें किसी को कोई शिकायत नहीं होती। परन्तु हमने यह नहीं ग्रहण किया। उनके कुछ अवगुण ग्रहण किए, उनकी ऊपर की रहन-सहन की प्रणाली ग्रहण की और उसके कारण अपने स्वत्व का निषेध करना प्रारम्भ किया। यह सब बातें बड़ी द्रुति गति से अपने सम्पूर्ण समाज को परिवर्तित कर रही हैं। रहन-सहन, चरित्र-निर्माण और कर्त्तव्यबोध सभी दृष्टियों से यह परिवर्तन दोषपूर्ण है। ऐसी स्थिति में हमें अपने स्वत्व का फिर से बोध करने के लिये विचार करना आवश्यक है। परन्तु स्वत्व का बोध कराना इतना सरल नहीं है। इसमें अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। एक बड़ी कठिनाई पिछले वर्षों की शिक्षा-दीक्षा है। शिक्षा का यह स्वरूप बनाने वाले उस अंग्रेज धूर्त पुरुष ने कहा था कि - ''यहाँ काले रंग के अंग्रेज बनेंगे।'' आज सब वैसे ही बने भी हैं। उन्हें अपना कुछ भी अच्छा नहीं लगता है। यदि कोई चाहे कि हमारे यहाँ जीवन का बहुत बड़ा सिद्धान्त है जो समग्र मानव के लिये उपकारक है तो अपना अच्छा पढ़ा-लिखा, अगुवायी की इच्छा रखने वाला व्यक्ति भी इसे मानने को तैयार नहीं होगा। यह तो ईश्वर की कृपा है कि कभी-कभी प्रसंग विशेष के कारण अपने नेतागण यह बोल जाते हैं कि हमारे यहाँ हजारों वर्षों का जीवन है। हमारी श्रेष्ठ धरोहर है। परन्तु वह बोलने तक ही सीमित रहता है। शब्द मात्र रहते हैं, उनके पीछे कोई भाव या उन विचारों के उज्वल स्वरूप को सबके सामने रखने का निश्चय, उन्हें अपने जीवन में प्रकट करने का प्रयास नहीं दिखता है। इसीलिए लगता है यह शब्द मात्र है। ऊपर का दिखावटी स्वरूप है।

आजकल धर्म की जो भाषा बोली जाती है, उसका भी कोई अर्थ नहीं है। अंग्रेजी फैशन के कारण यह कहने की पद्धति चल पड़ी है कि ''मैं धर्म पर विश्वास नहीं करता, ईवर को नहीं मानता। ऐसा मानने की आवश्यकता नहीं है।'' इस प्रकार अपने जीवन का जो मूलाधार है, उसे ही अस्वीकार करने का फैशन चल पड़ा है। आज वास्तविक रीति से यह विचार करने की आवश्यकता है कि जिन्होंने हमारे जीवन पर यह आघात किया है, उनका क्या कोई श्रेष्ठ दर्शन है ?

कम्युनिज्म एक अपूर्ण दर्शन

दर्शन के नाते आज एक बहुचर्चित दर्शन कम्युनिज्म है। हम उसका विचार करें। उसने कुछ सिद्धान्त बनाये हैं, कुछ समाज-रचना की बात की है और सम्पूर्ण समाज में सुख समान रीति से वितरित हो सके, इस प्रकार का प्रयत्न होना चाहिये, ऐसा बड़ा सिद्धान्त सबको खूब समझाकर बताया है। पश्चिम के अन्य जो देश हैं, उनके पास ऐसा कोई दर्शन नहीं है। सामान्य राजनीति की, प्रजातंत्र की, मानव की समानता की जो घोषणाएँ पहले फ्रांस में हुई थी, उन्हीं के आधार पर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन चलाने की बात करने के अतिरिक्त, उनके पास और कोई सिद्धान्त नहीं है। यदि कोई कहे कि सभी मानवों में समानता है तो यह बात अपने अनुभव के विरुद्ध जायेगी। कोई भी दो व्यक्ति समान नहीं। एक माता के दो लड़के समान नहीं होते। हाँ, शारीरिक आवश्यकताओं में समानता हो

सकती है। परन्तु बुद्धि, गुणों और सब प्रकार की शक्तियों में समानता की बात करना अनुभव विरुद्ध होगा, इसलिये इसमें कुछ दोष अवश्य ही हैं।

इस विचार-प्रणाली से ही आगे चलकर साम्यवादियों ने भी समानता निर्माण करने का प्रयत्न किया। इन सब बातों में एक विचारणीय प्रश्न यह भी है कि क्या मनुष्य का जीवन इसी लोक से सम्बन्धित है ? क्या मनुष्य को केवल भोजन, आवास और मन को सुख-सन्तोष देने वाले साधन ही चाहिए ? इसी का उत्पादन और वितरण ही उसका अभीष्ट है ? पश्चिम के लोकतांत्रिक कहलाने वाले और साम्यवादी कहलाने वाले देशों में केवल विकल्प का भेद है और कुछ नहीं।

यह जीवन इसलोक से सम्बन्धित है यानी अर्थ प्रधान है। मन की विषय वासना को तुष्ट करने वाले साधनों को जुटाना और रक्षा के लिए सत्ता को अधिकाधिक प्रबल करना यही आज की अर्थ-काम प्रधान व्यवस्था है। हमारे यहाँ कलियुग का वर्णन आता है। उसका अर्थ इतना ही है कि मनुष्य खाना-पीना, सुख-साधन और विषयोपभोग में ही फँसता चला जायेगा। एक ही जीवन को सर्वस्व मानेगा ऐसा उसका अर्थ है। भिन्न-भिन्न देशों की दशा को देखने से लगता है कि ''कलि'' का यह वर्णन सार्थक है। पता नहीं हमारे पूर्वजों ने किस दूर दृष्टि से इस उपभोग प्रधान और लोभ को ही आगे रखकर चलने वाले जीवन को देखा और उसका वर्णन किया।

वासना तृप्ति के प्रयत्न की विफलता

आज यह सभी लोग जानते हैं कि जीवन अर्थ-काम प्रधान है। अर्थ प्राप्ति के बाद उसकी रक्षा और उसका सम्वर्द्धन आवश्यक हो गया है। आवश्यक इसलिए कि आज तक वासना से कोई सन्तुष्ट नहीं हुआ है। इसलिए अपने यहाँ लोगों ने कहा, ''न जातुकामः कामानाम उपभोगेन शाम्यति।'' जैसे अग्नि में लकड़ी डालने से या आहुति देने से अग्नि धधक उठती है, उसी प्रकार से वासना विकार भी धधक उठते हैं, ऐसा अपने यहाँ कहा गया है। यह हमारा नित्य का अनुभव भी है कि भिन्न-भिन्न प्रकार के भोग करने के लिये शारीरिक दृष्टि से असमर्थ होने पर भी उन उपभोगों की चाह मन से नहीं जाती है। उसकी प्यास बनी रहती है। इसलिये कई लोगों ने कहा है कि ''क्या करें ? हम तो जीर्ण हो गए हैं, लेकिन हमारी तृष्णा अभी यौवन पर है - ''तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।'' किसी भी वासना का कभी संतोष नहीं होता इसी कारण इन वासनाओं की तुष्टि के लिये अधिकाधिक साधन जुटाना, अधिकाधिक संग्रह करना, अपनी भूमि से यदि वासना तृप्ति न हो तो दूसरे की भूमि पर प्रहार करके उसके धन का अपहरण करना यही स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है। जगत में चलने वाला एक प्रकार का साम्राज्यवाद इसी उपभोग की उद्दाम लालसा का ही परिणाम है। इसी के कारण अन्यान्य देशों पर बलात् अधिकार करने की इच्छा का भी निर्माण हो रहा है। इस नाते जगत में कभी शांति प्राप्त होने की आशा नहीं। मन की इस अशांति का प्रत्यक्ष व्यवहार में प्रकट होना अनिवार्य है। वासना अतृप्त रहने के कारण मन अशान्त रहता है और सभी प्रकार की भ्रान्ति जगत में बनी रहती है। आज यही स्थिति हमें दिखायी देती है। सब प्रकार सन्तोष पा जाने के कारण वासनाओं में विराम आ गया है, ऐसा कहीं भी दिखायी नहीं देता।

भगवत्गीता के 16वें अध्याय में दो प्रकार के लोगों का वर्णन किया गया है। एक सत् और दूसरे आसुरी गुण वाले। आज भिन्न-भिन्न प्रकार के लोग सम्पत्ति के मद में अन्यान्य देशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिये चेष्टाएँ करने में लगे हैं। यही आसुरी वृत्ति है। इसी का वर्णन सोलहवें अध्याय में हुआ है। इसमें ऐसे लोगों को असुर वृत्ति का कहा गया है जो कहते हैं - 'मैंने इसको मारा है और अब उसको मारूँगा, मैंने इसका धन छीना है और दूसरों का छीनूँगा। मैं हीबड़ा हूँ और मैं ही दाता हूँ। मैं ही यज्ञ करता हूँ। मेरे समान कोई नहीं है। मैं ही ईश्वर हूँ।' आज भी- मैं समाजवादी हूँ, मैं साम्यवादी हूँ, मैं प्रजातन्त्रवादी हूँ आदि बोलने वाले लोग, अर्थ और काम की प्रधानता के कारण, सभी देशों में मिलते हैं। पश्चिम के अनेक देशों में गीता के 16 वें अध्याय का जीता जागता स्वरूप दिखायी देता है। वहाँ दैवी शक्ति और दैवी सम्पत्ति देखने को नहीं मिलती।

विभिन्न प्रयास व उनकी असफलता

अब इस प्रकार के जगत में से हमें अपने मार्ग का आविष्कार करना है। लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार के मार्ग ढूँढ़ने के प्रयत्न किये। अपने धार्मिक आदर्शों के आधार पर जीवन चलाना चाहा पर उस मार्ग से भी लोगों को सन्तोष

नहीं हुआ। क्योंकि उन धर्मों के भीतर कोई सिद्धान्त और तत्वज्ञान नहीं है। केवल एक भगवान है और उसका एक पैगम्बर है। पैगम्बर के ऊपर विश्वास करो और भगवान से सब प्रकार की करुणा के लिए याचना करो, वह सब पापों को क्षमा कर देगा, ऐसी उनकी धारणा है। लेकिन अर्थ-काम के चक्कर में पड़ा जो मनुष्य ईश्वर को मानता ही नहीं वह क्षमा क्यों माँगेगा ? फिर भी उसे विश्वास करने को कहा जाता है। इस नाते बुद्धिमान व्यक्ति साधारणतः अपने भीतर ऐसी सिद्धता नहीं उत्पन्न कर पाता है। वह विश्वास के लिए बुद्धि का आधार लेता है। बुद्धि को सन्तुष्ट करके, उसके विश्वास को जाग्रत करना पड़ता है और कहना पड़ता है कि हे पुत्र विश्वास करो। बुद्धि की तुम्हारी जितनी दौड़ है वह सब समाप्त हो गयी, अब इसके आगे बुद्धि की गति नहीं है। अब शेष बातों पर विश्वास करो, यह सब बाद में कहा जाता है। परन्तु यदि प्रारम्भ में ही कह दिया कि विश्वास करो तो बुद्धिमान मनुष्य सोचता है कि यह बात तो मन में बैठती नहीं, क्योंकि जीवन को परिवर्तित करने की इसमें क्षमता नहीं। इस प्रकार विचार करनेवाले लोग आज दिखायी देते हैं।

यह ठीक है कि अपने यहाँ ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए बड़े-बड़े लोग काम कर रहे हैं। किन्तु उनके यहाँ भी गिरजाघर खाली पड़े हैं, बहुत कम लोग वहाँ जाते हैं। लोगों का विश्वास उठ गया है। वहाँ जाने से उनके भीतर कोई भावना नहीं उत्पन्न होती। इसलिए कोई ऐसा सिद्धान्त देना होगा जिसके द्वारा केवल अर्थ-काम को आधार मानकर चलनेवाले आसुरी जीवन पर नियन्त्रण किया जा सके।

हमारा पथ-प्रदर्शन

अब देखना यह है कि क्या अपने देश और समाज की परम्परा से हमारा कोई पथ-प्रदर्शन होता है ? निश्चय ही होता है। प्राचीन काल के महापुरुषों ने सांगोपांग विवेचन करके कहा कि केवल अर्थ-काम की उपासना करना पशुवत जीवन है, आसुरी जीवन है, राक्षसी जीवन है, त्याज्य जीवन है।

लेकिन अर्थ-काम से सर्वथा मुक्त होना असम्भव है। उसकी चाह प्रत्येक मनुष्य में थोड़ी बहुत मात्रा में रहेगी। पर उसके द्वारा जीवन में असुरता न आवे, इसकी उपाय योजना भी आवश्यक है। इसी नाते अपने यहाँ लोगों को एक बात यह बतायी गयी कि वासना कभी सन्तुष्ट नहीं होती और दूसरी बात यह बतायी कि जिन वस्तुओं का संग्रह करके मनुष्य उनसे सुख पाने की अभिलाषा करता है उन वस्तुओं में सुख देने की किसी प्रकार की कोई क्षमता नहीं है। सुख तो अपने पास है। बाहर से कुछ नहीं मिलता। हम तो अपने अज्ञान के कारण यह बोलते हैं कि अमुक चीज में सुख है। जबकि वास्तविकता यह है कि हम उस वस्तु को निमित्त बनाकर अपने ही अन्दर के महासागर के सुख को चखते हैं। मान लो कि किसी व्यक्ति को लड्डू बहुत प्रिय हैं, परन्तु यदि उसका पेट खूब भरा हो और फिर भी उसे कोई लड्डू खिलाए तो वह कहेगा कि 'भाई इस समय तो नहीं खा सकता।' यदि जबरदस्ती खिलाने का प्रयत्न किया गया तो उसे लड्डू से घृणा हो जायेगी, या पेट में दर्द होगा अथवा उल्टी हो जायेगी। यानी जो वस्तु भूख होने पर सुख देनेवाली है, उसी वस्तु को क्षुधा शान्त होने पर देखने की भी इच्छा नहीं होती। अब विचार करें, कि यदि सुख देना उस वस्तु का निजी गुण होता, तो वह क्षुधा न रहने पर भी उतना ही सुख देती। पर ऐसा दिखायी नहीं देता। जो कपड़े हम पहनते हैं वे कभी कभी बड़े सुखदायी मालूम होते हैं। जब सर्दी पड़ती है, शरीर में कंपकंपी और ठिठुरन होने लगती है तो अच्छे गर्म कपड़े पहन लेने से सुख मालूम होता है। परन्तु यह सुख भी परिस्थिति सापेक्ष है। कड़ी धूप में वहीकपड़े उतार कर फेंकने पड़ते हैं। यही नियम हर वस्तु के बारे में लागू होता है। कोई संगीत का प्रेमी है, बड़े मधुर गीत गा सकता है, सुनने में रस ले सकता है किन्तु यदि उसके घर में कोई दुःखद प्रसंग हो गया हो और उस समय पास में कोई गाना-बजाना करने लगे तो उसे चिढ़ होगी। वह सोचेगा गाने वाले भी कैसे हैं, मैं तो दुःख से रो रहा हूँ और ये गाना-बजाना कर रहे हैं।

सुख कहाँ है ?

ऐसी स्थिति में हम विचार करें कि आदमी को सुख कहाँ से मिलता है। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण देता हूँ। कुत्ते प्रायः हड्डी के लिए फिरते रहते हैं। सूखी हड्डी को भी वे बड़े प्रेम से चबाते हैं। उस हड्डी के भीतर कोई रस नहीं होता, वह बिलकुल पत्थर होती है। लेकिन जब हड्डी की तेज नोक कुत्ते की जीभ में धंसती है तो उसकी

जीभ से खून बहने लगता है, कुत्ता अपने ही रक्त को पीकर सुखी होता है। उसे लगता है कि हड्डी में ही रस आ गया है। इसी नाते कहा गया कि बाहर की किसी वस्तु में सुख नहीं है, सुख तो अपने भीतर भरा है। ''मनुष्य शरीरं सत् चित् सुखम्।'' यानी यह शरीर सत्य है, चिरन्तन है, चेतनामय है अर्थात् सुखमय है। हम अपने भीतर का ही सुख भोगते हैं और बाहर की वस्तु पर उसका आरोपण करते हैं। मनुष्य के जीवन का वास्तविक लक्ष्य अपने भीतर के इसी सुख को पाना है। यही मूल सिद्धान्त है जो अपने श्रेष्ठ पुरुषों ने बताया है, क्योंकि भीतरी सुख के उसी महासागर की अनुभूति ही जीवन का लक्ष्य है। मनुष्यसुख पाने के लिए जीता है। सुखानुभूति ही उसके जीवन का लक्ष्य है। सब प्रकार के इहलौकिक बंधन से मुक्त हो जानेवाला बाह्य वस्तुओं की कामना से निर्वाध हो जानेवाला ही यह चिरन्तन सुख प्राप्त कर पाता है। ऐसा सुख पाने वाले व्यक्ति के सभी बंधन छूट जाते हैं, क्योंकि किसी वस्तु की चाह के कारण उसका मन नहीं दौड़ता। यही बंधन-मुक्ति है। यही व्यक्ति का चरम लक्ष्य भी है। किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने तक उसे इहलोक के सुखों की तृप्ति के लिए कुछ प्रयत्न तो करना ही पड़ेगा। लेकिन यह तृप्ति व्यक्ति को अमर्यादित न कर दे, इसकी उपाय योजना भी करनी होगी।

समाज की योग्य व्यवस्था

इसके लिए हमारे यहाँ एक पुरुषार्थ बताया गया है - धर्म। सुख अनुभव करने के लिए जिस प्रकार व्यक्ति को मानसिक शान्ति और एकाग्रता चाहिए, उसी प्रकार व्यक्ति को अपना जीवन सुरक्षितता से चलाने के लिए एक सुस्थित समाज की आवश्यकता होती है। यदि समाज सुचारु रूप से परस्पर सम्बद्ध है, सब मिलकर एक दूसरे का कल्याण करने के लिए प्रयत्नशील होने के कारण परस्परानुकूल हैं तो ऐसे समुदाय में रहकर आश्वस्त जीवन चलाता हुआ व्यक्ति अपने अन्दर के चिरन्तन सुख की अनुभूति करने के लिए एकाग्र होकर सहज ही प्रयत्नशील हो सकेगा। इसलिए समाज की योग्य व्यवस्था यह धर्म का एक रूप, एक अर्थ है।

हम लोग जानते हैं कि धर्म की जो व्याख्याएँ की गयी हैं, उनमें जो सबसे प्रचलित और प्रसिद्ध व्याख्या है उसमें कहा गया है कि जो समाज की धारणा करता है, समाज को सुव्यवस्था से रखता है, समाज के सभी प्रकार के लोगों को ठीक अपने-अपने कार्यों में लगाता हुआ समग्र समाज के अभ्युदय के लिए, रक्षा के लिए, श्रेष्ठ जीवन के लिए सबके द्वारा परस्पर पूरकता से कर्म करवाने की जिसके अन्दर क्षमता है, वही धर्म है। समाज धारणा की सुस्थिति बनाना धर्म का एक रूप है। दूसरा रूप है मनुष्य को धर्म के अनुसार चलानेवाला। धर्म के बारे में हमारे यहाँ कहा गया है - वेदानुसार चलना या जो कुछ हमारा मूल प्रेरक विचार संग्रह है, उसके अनुसार चलना और सब प्रकार के सत्य एवं सज्ञनता का विचार करना अर्थात् अपने जीवन के गुणों का विकास करना। अपनी आत्मा अर्थात् चिरन्तन सत्य को जो श्रेयस्कर लगे, उसके अनुरूप प्रयत्न करते रहना, यह भी एक धर्म है। एतद् प्राप्ति हेतु गुण-सम्वर्द्धन करने को कहा गया है।

सदाचार

हमें उन गुणों का भी विचार करना है जिनका आविष्कार करने के लिए हमें प्रयत्नशील होना है। इसके लिए अनेक विवरण दिये गये हैं। हमारे शास्त्रकारों ने सदाचार के नाम से दस गुण बताये हैं और सबसे लोकप्रिय एवं सर्वमान्य शास्त्र गीता है। उसमें भी अनेक स्थानों पर हमें जिन गुणों का विकास करना चाहिए, उसका स्पष्ट उल्लेख हुआ है। उनको हम पढ़ें, विचारें और चिन्तन करें। अपने अन्दर उन गुणों का विकास हुआ है या नहीं, इसको देखें और यदि कहीं कमी दिखायी दे तो उसको परिपूर्ण करने का प्रयत्न करें। मन को संयमित कर सुव्यवस्थित जीवन का निर्माण करें। अपने को सब प्रकार के अवगुणों से परावृत्त, पराङ्मुख एवं निवृत्त करें। बुद्धि को नियंत्रित करें। ऐसा समग्र संयमित जीवन जीने को बताया गया है।

परिपूर्ण मानव

अपने भीतर के अनेक गुणावगुणों, विकारों को भलीभाँति नियंत्रित करके मानसिक सुव्यवस्था का निर्माण (जिसे अंग्रेजी में 'रिहैबिलिटेशन आफ अवर माइन्ड्स' कहा गया है) करना भी धर्म का एक महत्वपूर्ण अंग है। इस धर्म को अपने जीवन का आधार मानकर इसके अनुरूप अर्थ-काम को नियोजित कर और इस धर्म के सद्गुण-सम्पन्न जीवन

का पूरी तरह से अपने अन्दर आविष्कार करते हुए अन्तिम लक्ष्य की नित्य उपासना करते हुए चतुर्थ एवं अन्तिम पुरुषार्थ, मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना मनुष्य जीवन का सम्पूर्ण स्वरूप है। यही 'इंटीग्रेटेड मैन' परिपूर्ण मानव की कल्पना है। अर्थ-काम मात्र ही जिसके जीवन में है वह 'डिसिंटीग्रेटेड मैन' अपूर्ण और विश्रृंखलित मानव है। समाज की धारणा का विचार करनेवाला, समाज की धारणा, सुव्यवस्था पर आँच न आये, ऐसा गुणोत्कर्ष रखने वाला, समाज में विकृति उत्पन्न न हो, इस मात्रा में अर्थोपार्जन, कामोपभोग, और फिर संयमित एवं एकाग्र अन्तःकरण से अपने मनोनुकूल किसी भी प्रकार की उपासना पद्धति, या सम्प्रदाय का अवलम्बन कर ईश्वर की किसी भी मूर्ति की उपासना द्वारा चतुर्थ और अन्तिम लक्ष्यरूप पुरुषार्थ को प्राप्त करने का प्रयत्न करनेवाला ही परिपूर्ण मानव है, व्यवस्थित मानव है।

चतुर्विध पुरुषार्थ और हमारा दायित्व

आज के अशान्तिपूर्ण जगत में मनुष्य-मनुष्य के बीच बन्धुता के भाव का जो अभाव दिखायी देता है, उसे समाप्त करके जागतिक शान्ति की जीवन व्यवस्था निर्माण करने के लिए इन चार पुरुषार्थों को आधार बनाना होगा। अन्यथा और कोई विकल्प नहीं। संसार को इन चारों पुरुषार्थों के चिरन्तन सत्य का बोध कराने की हमारे अन्दर क्षमता आनी चाहिए। हमारे पूर्वजों, ऋषियों, महर्षियों और मनीषियों ने अपनी अनुभूति से इन चार पुरुषार्थों का ज्ञान रखा है। उसके द्वारा मनुष्य को अपने परिपूर्ण स्वरूप को प्रकट करने का साधन दिया है। हमारे ऊपर यह दायित्व है कि हम जगत को, जगत के यच्चयावत् मानव को अपने उदाहरण और आदर्श से इस सत्य का बोध करायें।

अर्थ और काम एवं अन्य अनेक दुर्गुणों का अनेकविध अनुकरण करके हम यह कार्य कदापि नहीं कर सकेंगे। हमें तो विदेशों में चलने वाले अर्थ-काम प्रधान आसुरी जीवन को नियंत्रित करके चतुर्विध पुरुषार्थ युक्त यानी समाज की सुव्यवस्था, अपने अन्दर के सद्गुणों का पूर्ण रूप से आविष्कार एवं अनुष्ठान युक्त एक दैवी जीवन उत्पन्न करने का प्रयत्न करना है। यह बात जगत के लिए कल्याणकारी भी है।

केवल भारतीय तत्वज्ञान ही जागतिक

आज कम्युनिस्ट कहता है कि - ''भाई क्या तुम्हारे पास कोई जागतिक सिद्धान्त भी है ? हमारे पास तो जागतिक सिद्धान्त है, इसीलिए सारे जगत के श्रमिकों को एकत्रित होने के लिए हम कहते हैं।'' परन्तु भारतीय तत्वज्ञान इसके ठीक विपरीत मानव में श्रमिक-गैर श्रमिक का भेद न करते हुए सम्पूर्ण मानव का आह्वान करते हुए कहता है कि - ''आओ, पूर्ण मानव बनो। पूर्ण मानव बनने के लिए चतुर्विध पुरुषार्थ ग्रहण करो। उसके आधार के ऊपर समाज की सुव्यवस्था, सुख-सम्पन्नता का पोषण करो। इस प्रकार एक नियंत्रित, व्यक्तिगत जीवन निर्माण करो। व्यक्तिगत जीवन के अर्थ-काम को सब प्रकार से काबू में रखो। कर्म पुरुषार्थ की उपासना करके अपने जीवन को धन्य बनाओ।''

इस प्रकार प्रत्येक मानव में श्रमिक और गैर श्रमिक का भेद न करते हुए सबको एक स्वर से आह्वान करने की क्षमता अपने जीवन की परम्परा में है। इस क्षमता को हमें जगत के कल्याण हेतु अपने भीतर लाना, उसको परिपूर्ण करने भर की गुण सम्पदा अपने भीतर आविष्कृत करना, उसके लिए अपने समाज को सुव्यवस्थित, सूत्रबद्ध, एकात्मक बनाना, उसके भीतर सम्पूर्ण सत्व और स्वाभिमान का जागरण करके उसको चतुर्विध पुरुषार्थों के परम श्रेष्ठ जीवन का अनुगामी बनाना और उसे सब तरह से प्रशिक्षित करके एक आदर्श और सर्वोत्तम समाज के रूप में खड़ा करना आवश्यक है।

दुःशक्तियों का नियन्त्रण सामर्थ्य से ही संभव

इस सम्बन्ध में मुझे एक बात और कहनी है। कोई सिद्धान्त बोल देने से ही जगत उसे ग्रहण नहीं करता, चाहे वह कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो। आज सत्ता की उन्मत्तता और जीवन में अर्थ-काम की विपुलता के कारण जिन्हें मानव की सज्जनता की परवाह नहीं है, ऐसे अत्यन्त उद्दण्ड लोगों को अपना सिद्धान्त बता देने से या उसका विवरण कर देने से कोई अर्थ नहीं निकलेगा वे हमारे सिद्धान्तों का अनुसरण करें, इसके लिए बल प्रयोग की भी आवश्यकता पड़ सकती है। अर्थ और काम के अमर्यादित उपभोग के कारण मनुष्य में जो पशुता आती है, उसका नियंत्रण सामर्थ्य से ही सम्भव होता है - 'दण्डेन गो-गर्दभैः।' गो (इन्द्रिय) और गधे (पशु) का नियन्त्रण गीता पढ़ाने से नहीं होता, दण्ड प्रयोग से ही होता है। आज हमें उसी पशुता में पलता हुआ मनुष्य दिखायी दे रहा है। अपना परम सामर्थ्य, अर्थ की

प्रचुरता, सत्ता की निरंकुशता और सब प्रकार की उपभोग-सामग्री की विपुलता के कारण उद्दण्ड बने हुए मनुष्य को राह पर लाने के लिए कभी-कभी कान पकड़ने की भी आवश्यकता पड़ती है। पर कान कौन पकड़ेगा ? वही, जिसके अन्दर प्रत्यक्ष और आन्तरिक दोनों प्रकार का सामर्थ्य है। सद्गुणों की, आत्मा की सर्वश्रेष्ठ धन-सम्पन्नता की पूँजी जिसके पास है, वही लोगों को प्रभावित कर सकता है। आत्मानुभूति के कारण लोगों को अपने बस में कर सकता है।

ऐहिक सामर्थ्य भी आवश्यक

ऐसी स्थिति में भी यदि उद्दण्डता करनेवाले अपनी ऐहिक सामर्थ्य के द्वारा समाज को अपने नियन्त्रण में रख सकते हैं तो हमारा यह दायित्व है कि हम भी ऐहिक दृष्टि से समर्थ बनें। व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन में सब प्रकार के सद्गुणों द्वारा मानसिक शक्ति भरें। अन्तिम पुरुषार्थ को प्राप्त करने की उपासना करते हुए सम्पूर्ण समाज को सूत्रबद्ध करके उसमें ऐहिक शक्ति का आविष्कार करें। इन तीनों शक्तियों के द्वारा अपने चतुर्विध पुरुषार्थ के अधिष्ठान के ऊपर एक ऐसे समाज का निर्माण करें जो सुखी हो, लेकिन सुख-लोलुप नहीं, जो समृद्ध हो लेकिन समृद्धि में फँसा, रुंधा नहीं। ऐसे ही समाज जीवन का आदर्श यदि हम जगत के समक्ष रखेंगे तो जगत का मानव हमारा अनुसरण करके सुखी हो सकेगा।

मानवता का उत्कृष्ट सेवक

अपने इसी विचार दर्शन की दृष्टि से हम प्रयत्न करें और परानुकरण द्वारा उत्पन्न होनेवाली समस्त आसुरी सम्पत्ति का त्याग करने के लिए समाज को प्रोत्साहित करें। साथ ही साथ चतुर्विध पुरुषार्थ की दैवी सम्पत्ति एवं सद्गुणयुक्त जीवन का अपने भीतर आविष्कार करने की समग्र समाज को प्रेरणा दें। ऐसी व्यवस्था बनने पर ही हम अपने देश, समाज और विश्व मानव का कल्याण करने में समर्थ हो सकेंगे। ऐसी व्यवस्था जो अपनी शक्ति और बुद्धि के अनुसार करता है वह अपने राष्ट्र का उपकारक है, वह मानवता का एक उत्कृष्ट सेवक है।

इस दृष्टि से यदि हम प्रयत्न करें तो यह अभिनन्दनीय होगा। एकात्म मानववाद के मंत्र-द्रष्टा पंडित दीनदयाल उपाध्याय बड़े विचारक और महान् चिन्तनशील व्यक्ति थे। उन्होंने मनुष्य का सम्पूर्ण स्वरूप सबके सामने रखा। मानव की एकात्मता व उसके अन्दर के गुणों का सम्पूर्ण विकास दोनों ही उन्हें अभीप्सित और अपेक्षित थे। इसी विचार दर्शन के बारे में मैंने भी ये बातें कही हैं।

*

न ह्रष्यत्यात्मसम्माने नावमानेन तप्यते ।
गाङ्गो ह्रद इवाक्षोभ्यो यः स पण्डित उच्यते ॥

अर्थ - जो अपना आदर होने पर हर्ष के मारे फूल नहीं उठता, अनादर से संतप्त नहीं होता तथा गंगा जी के कुण्ड के समान जिसके चित्त को क्षोभ नहीं होता, वह पंडित कहलाता है।

सत्वशक्ति के उद्गाता श्री विवेकानंद

(स्वामी विवेकानन्द जन्मशताब्दी समारोह समिति, दिल्ली द्वारा 13 जनवरी 1963 को गाँधी मैदान, में आयोजित समारोह में पूज्य गुरुजी द्वारा दिया गया भाषण) **— सम्पादक**

भारत की यह पुरानी परम्परा रही है कि कष्टों के अन्त तथा सुख-सम्पदा एवं आशा के आरम्भ के संधिकाल में निश्चित रूप से किसी आध्यात्मिक शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, न कि राजकीय पुनरुत्थान का। गत इतिहास की ओर दृष्टिपात करने पर हमें ज्ञात होता है कि विजयनगर साम्राज्य के उत्थान के समय मध्वाचार्य एवं शंकराचार्य जैसे द्रष्टाओं के आध्यात्मिक संदेश ही उपयुक्त हुए। छत्रपति शिवाजी की सफलताओं के पीछे भी संतों की परम्परा दृष्टिगोचर होती है। शिवाजी के साम्राज्य-गठन में समर्थ रामदास स्वामी का प्रत्यक्ष योगदान स्पष्ट रूप से था। इसी प्रकार पंजाब का भी यही इतिहास है। गुरु नानक से लेकर गुरु गोविन्द सिंह जैसे संतों की मालिका ही पंजाब को मुगलों के भय और आतंक से स्वतन्त्र होने की प्रेरणा देती रही है।

जिनकी जन्म-शताब्दी मनाने हम आज एकत्र हुए हैं, उन स्वामी विवेकानन्द जी ने स्वयं ही श्री गुरु गोविन्दसिंह जी को इस देश के महान आदर्श के नाते संबोधित किया है। उन्होंने केवल स्वयं को ही देश पर न्योछावर नहीं किया, अपितु अपने पुत्रों का भी बलिदान किया। जब उन लोंगों, जिनके लिए गुरु गोविन्द सिंह ने स्वयं के परिवार का उत्सर्ग किया था, ने उन्हें छोड़ दिया, उस समय कुछ भी बोले बिना शान्ति से वे दक्षिण की ओर निकल पड़े, जहाँ उन्होंने अपने भौतिक शरीर का त्याग किया। वे वास्तव में आदर्श एवं वंदनीय हैं।

इसी प्रकार आधुनिक समय में ब्रिटिश लोगों को खदेड़ने के लिए चलाए गए संघर्ष में, आध्यात्मिक पुनरुत्थान में, स्वामी जी का नाम विशेष देदीप्यमान है। स्वामी जी के बारे में शाब्दिक गौरवगान उचित नहीं होगा या उनकी प्रतिमा की प्रतिष्ठापना मात्र से उनकी प्रतिष्ठा व्यक्त नहीं होगी। हमें उनके विचारों, आदर्शों को सादर साकार करना होगा। हम पूरे समाज को उनके उपर्दिष्ट वेदांत आदर्शों से अवगत करा कर, पूर्णतः बदल कर, उनके आदर्शों पर चलने हेतु प्रेरित करें।

सुधार नहीं सेवा

उन्होंने समाजोत्थान का नारा लगाकर दिशा बदलने का दावा कभी नहीं किया। उनकी मान्यता थी कि यदि हर व्यक्ति स्वयं को वेदांत के प्रकाश में पहचान ले, तो वह स्वयं देवत्व का मार्ग खोज लेगा। तब वहाँ किसी मार्गदर्शक की आवश्यकता ही नहीं रहेगी।

किसी व्यक्ति ने भगवान रामकृष्ण परमहंस जी से कहा - 'हमें समाज को सुधारना होगा।' तब उत्तेजित होकर वे बोल पड़े थे - 'आप समाज सुधारनेवाले होते कौन हो ? सुधार नहीं, ईशभाव से सेवा करो।' उन्होंने सुधार पर नहीं, अपितु सेवा पर ही अधिक बल दिया। स्वामी जी का सारा जीवन श्री रामकृष्ण परमहंस द्वारा प्रदत्त शिक्षा से परिपूर्ण था। वे मातृभूमि के अनन्य उपासक थे। ईशभाव से मातृभूमि की सेवा अटूट विश्वास एवं दृढ़ भाव से करो, यही उनका प्रथम उपदेश रहता था।

सत्त्व सम्पन्न सामर्थ्य के पुजारी

स्वामी जी शक्ति के अनन्य पुजारी थे। उनकी धारणा थी कि दुर्बलता पाप है। उनकी ओर एक दृष्टिपात से ही यह समझ में आ सकता है कि वे कितने निडर एवं बलवान थे। उनके छायाचित्र मात्र से ही उनकी शक्ति का स्पष्ट

परिचय होता है। वे हर किसी को शरीर स्वस्थ एवं बलवान रखने की प्रेरणा देते थे। वे कहा करते थे- 'बड़े काम करने के लिए बलवान शरीर की आवश्यकता है। आपके स्नायु लोहे जैसे और धमनियाँ फौलाद जैसी होनी चाहिए। आपकी देशभक्ति आपसे शक्तिमान शरीर की आशा करती है।'

कोई कह सकता है कि मैं कुशाग्रबुद्धि हूँ, किन्तु इस कुशाग्र बुद्धि का क्या लाभ ? जब उसको सुदृढ़ शरीर का साथ मिलेगा तभी वह लाभप्रद होगी। किन्तु केवल सुदृढ़ शरीर भी उपयोगी नहीं है। कालान्तर में उसके आसुरी बनने का भय रहता है। इसलिए स्वामी जी इस बात पर भी अधिक जोर देते थे कि इसके साथ मन की पवित्रता भी आवश्यक है, जिससे शारीरिक बल पर अंकुश रखा जा सके। यदि समर्पण हो, स्थिरता हो और मन की एकाग्रता हो, तो मनुष्य बहुत सारी बातें जान सकता है, जो अन्यथा संभव नहीं।

हमारी परम्परा की शुचिता

जब स्वामी जी मन की पवित्रता और अध्यात्म के सम्बन्ध में चर्चा करते थे, तब कुछ व्यक्तियों ने उनसे मजाक करने की ठानी। उन्होंने एक नर्तकी को उनके कक्ष में छोड़ दिया। किसी को अपने कमरे में देखकर स्वामी जी आश्चर्यचकित हुए। जब उन्होंने उस महिला को देखा तो साष्टांग दंडवत प्रणाम करते हुए कहा - 'माताजी, आपको इस प्रकार से निकृष्ट जीवन जीने की क्या आवश्यकता है ? इस प्रकार अपने पापों की वृद्धि करने से क्या लाभ है ?' वह तरुणी इन शब्दों से बहुत प्रभावित हुई। उसने उन लोगों, जिन्होंने उसे स्वामी जी के कक्ष में भेजा था, को इस पापकर्म करने में प्रवृत्त किए जाने के लिए बहुत बुरा-भला कहा।

हमारी परम्परा ने सम्पूर्ण अंतर्बाह्य पवित्रता पर अधिक बल दिया है। पश्चिमी देशों में हमें ऐसे कई तत्त्ववेत्ता मिलेंगे जिनके चरित्र में खोट है, किन्तु अपने यहाँ शुद्ध चरित्र अनिवार्य है।

हम अनेक प्रकार के अवरोधो से घिरा अनुभव करते हैं। इन सब में स्वयं को अलिप्त रखना कोई सरल काम नहीं है, अपितु प्रेरणा एवं निष्ठा की आवश्यकता है। इस हेतु योगाभ्यास या हठयोग करने की आवश्यकता नहीं है। अपने दैनंदिन कार्य में यदि हम थोड़ा मन एवं कार्य पर अनुशासन का अंकुश रखें, तो हम मानसिक पवित्रता पा सकते हैं।

मिलनेवाले मित्रों से प्रायः मैं एक प्रश्न पूछता हूँ - 'कल्पना कीजिए कि आप अपनी परीक्षा की तैयारी में पुस्तकें लेकर पढ़ने बैठे हैं, उसी समय मार्ग से कोई शोभायात्रा आपकी मनपसंद धुन बजाती जा रही है, जो संभवतः आप सुनना चाहते हों। मैं जानना चाहूँगा कि क्या आपको वह धुन सुनाई देगी ? निश्चित रूप से आप का उत्तर होगा 'हाँ।' इसका अर्थ स्पष्ट है कि मन सरलता से धुन की ओर आकर्षित होगा एवं आपको पुस्तक में अक्षरों के स्थान पर केवल काले धब्बे मात्र दिखेंगे। ऐसी अवस्था में हम अपने मन को, अपने कार्य में लीन करने का प्रयास करें, यही ठीक है। प्रयत्नपूर्वक एकाग्रता से ही मानसिक शुद्धता पाई जा सकती है।

भारत पुण्यभूमि है

स्वामी जी की यह मान्यता थी कि यदि ऐसा कोई देश है जहाँ मनुष्य भगवान् की पूजा के माध्यम से भगवान से सुसंवाद स्थापित कर सकता है, तो वह केवल भारत ही है। हमारे पूर्वजन्म के पुण्यों के कारण ही हमें इस पावन भूमि में जन्म मिला है। वस्तुतः पूर्व सुकृत के बाद भी मोक्ष पाने हेतु भारतवर्ष में जन्म लेना ही भाग्य की बात है। अन्य भू-भाग में भोग अथवा उपभोग मिल सकता है। वैज्ञानिक उपलब्धियाँ भी संभवतः पा सकता है, चन्द्रमा पर पहुँच सकता है, किन्तु भगवान तक नहीं पहुँच सकता। इसके लिए उसे भारत में ही जन्म लेना होगा। इसी कारण स्वामी जी ने भारत के सपूतों को प्रेरित किया।

अभी विवेकानन्द शिला स्मारक का उल्लेख किया गया। उसे देखने का मुझे सौभाग्य मिला। स्वामी जी ने उस शिला पर खड़े होकर उत्तारभिमुख हो इस पवित्र धरती माँ को देखा, तथा उस शिला पर बैठकर ध्यान-धारणा की। वे इस ध्यान में कब तक मग्न थे यह तो ईश्वर ही जाने, पर वापस लौटने पर उन्होंने 'मार्ग मिल गया है। अपने देश को मुक्त कराने का मार्ग।' यह कहकर जनता को शिक्षित करने का आह्वान किया और स्पष्ट किया कि यह करते समय हमारी संस्कृति, धर्म को हीन मानने की कतई आवश्यकता नहीं है।

पूर्वजों का अनादर न हो

इसी प्रकार उन्होंने बालविवाह को अमान्य किया। पर इसी के साथ यह भी स्पष्ट किया कि यह प्रथा उस समय प्रचलित हुई, जब इस देश पर विदेशी आक्रमण हुए। इस कारण आक्रामकों से आतंकित होकर देशवासियों ने बालविवाह अपनाए।

जाति के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि 'बाल्यावस्था में मैं जाति विरोधी था, परन्तु अनुभवों से परिपक्व होने पर जाति-प्रथा समाज स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है', ऐसा मैं कहता हूँ।

स्वामी जी ने बारम्बार कहा कि बहुत सी प्रथाएँ आज हमें अनुपयुक्त लगती हैं, लेकिन उस समय उपयोगी थीं। आज उनको लेकर आक्रोश करने की आवश्यकता नहीं है। यथोचित परिवर्तन के समय यह ध्यान रखना होगा कि उन्हें बदलते समय पूर्वजों को दोषी समझकर उनका अनादर न करें।

हिन्दू राष्ट्र

आपको ज्ञात होगा कि स्वामी जी के भाषण एवं लेखों में 'हिन्दू राष्ट्र' का उल्लेख रहता था। भाषणों में कहीं उन्होंने गुरु गोविन्द सिंह का प्रश्रय लिया, तो कहीं छत्रपति शिवाजी का। उनके विचार से वे महान पुरुष जिस समाज से आए, वह सारा समाज पूरे देश में समाहित है। उनके लेखों से यह स्पष्ट है कि वे 'हिन्दू' और 'इंडियन' को समानार्थी मानते थे। इसको ध्यान में रखकर ही वे हिन्दू धर्म के उपदेशों के प्रसार पर अधिक बल देते थे। वे कहते थे कि, समाज को बलवान बनाएँ एवं समाज की सेवा करें।

आश्चर्य नहीं कि सत्तर वर्ष पूर्व उन्होंने आज की परिस्थिति को भाँप लिया था। उनकी दूरदृष्टि भविष्य जान सकती थी। अमरीका में पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा था - 'यद्यपि आज चीन सुप्त दिखता है, परन्तु वह शीघ्र ही जागेगा और जब जागेगा, तब विश्व के लिए संकट बनेगा।' प्रश्नकर्ताओं के यह पूछने पर कि 'क्या वह आपके देश के लिए भी संकट बनेगा ?' स्वामी जी ने उत्तर दिया वह भारत के लिए भी संकट बन सकता है।' यह भविष्यवाणी सत्तर वर्ष पूर्व की है। इससे यह सिद्ध होता है कि आज का राजकीय दृष्टिकोण दूरदृष्टि से पर्याप्त नहीं है। हमारे नेताओं को उसका अनुभव चीन के आक्रमण के बाद ही आया। अतएव सांस्कृतिक एवं धार्मिक रंग में रंगे सत्य दिव्यदृष्टि एवं दृष्टिकोण प्रदान करते हैं।

इस आक्रमण के सम्बन्ध में यह जानना होगा कि इस प्रकार के आक्रमण पुनः हो सकते हैं, तथापि स्वामी जी ने कहा कि 'उन्हें विश्वास है कि अंततोगत्वा यह राष्ट्र सफल होगा। यह समाज अमर है। यह समाज मरणातीत है, क्योंकि यह समाज स्वभाव से बहुत शांत और नम्र प्रकृति का है। नम्र स्वभाव का यह हिन्दू समाज अनेक आघातों को सहन करने पर भी जीवित है। हर किसी को इस जीवन में अपने जन्म का उद्देश्य पूरा करना पड़ता है। जब तक जीवन है, तब तक यह कार्य चलता रहता है।

ग्रीकों व रोमन ने अपना उद्देश्य पूरा किया और वे समाप्त हो गए। इसी प्रकार अनेक राष्ट्र लुप्त हो गए। कईयों ने बलावन साम्राज्य बनाए। उनमें से कईयों ने तो हम पर अनेक आक्रमण किए, किन्तु इस हिन्दू राष्ट्र ने सबका सामना कर शत्रु को परास्त किया। वह केवल इसीलिए कि उसके पास जीवन का अमूल्य भण्डार है। वह मनुष्य को प्रगति की चरम सीमा 'मोक्ष' तक पहुँचाने का गरिमामय ध्येय रखता है। जब तक मानव जीवित है, तब तक हिन्दू समाज भी जीवित रहेगा, यही ईश्वर की इच्छा है। हमारी प्रेरणा भी यही है।

मैं बार-बार जन्म लूँगा

अनेक अवरोध एवं संकट होने पर भी स्वामीजी श्रद्धा एवं विश्वास प्रकट किया करते थे। उनके स्वयं के जीवनक्रम से ही समाज सेवा के प्रति उनकी अभिप्रेत निष्ठा परिलक्षित होती है। स्वयं के विषय में वे कहते थे - 'मुझे मोक्ष की नहीं, इस अज्ञानी समाज की सेवा के लिए पुनर्जन्म की अभिलाषा है।' यह उनका आदर्श हिन्दू दृष्टिकोण था। महाभारत में भी यही अभिलाषा व्यक्त की गई है -

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥

(मैं न तो राज्य की कामना करता हूँ, न स्वर्ग और न ही मोक्ष की। मैं दुःखों से पीड़ित समाज के संकटों के नाश की कामना करता हूँ।)

प्रश्न यह है कि हमारी जनसेवा का उद्देश्य क्या होना चाहिए ? क्या हम नाम, अपनी जय-जयकार की अभिलाषा पूर्ति अथवा किसी पद के लिए यह करें ? हमारा लक्ष्य तो निःस्वार्थ परहित सेवा ही होना चाहिए। इस सम्बन्ध में स्वामी जी गुरु गोविन्द सिंह का उदाहरण दिया करते थे। इस प्रकार की निःस्वार्थ सेवा किसी भी अवरोध से परे है। अपनी वृद्धावस्था एवं विपन्नता में क्या होगा, यह विचार भी उनके मन में कभी नहीं आया। समाज हेतु की गई सेवा के बदले वृद्धकाल में कुछ पाने की अभिलाषा को छोड़कर समाजसेवा करें, यही स्वामी जी की शिक्षा है।

हमें अनेक संकल्प पूरे करने हैं। उन्हें पूरा करते समय ध्यान रहे कि अहंकार या अधिकार की अभिलाषा हमारे मन में क्षणमात्र भी न उभरे। दुर्भाग्य से इस अध्यात्ममयी भूमि में आज अनेक कार्यों का उद्देश्य स्वार्थपूर्ति होता है। किसी को पद की आकांक्षा है तो किसी को सम्मान की। हमें ऐसे कार्यकर्ता चाहिए जो निःस्वार्थ भाव से तथा स्वामी जी के उदाहरण से प्रेरित होकर सुसंगठित, शक्तिवान, चरित्रवान समाज का निर्माण कर सकें।

संस्कृत के अध्ययन का आग्रह

स्वामी जी की शिक्षा के कई पक्ष हैं, जिन्हें हम अपने में समाहित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ - उन्होंने संस्कृत पर अधिक बल दिया। उनसे किसी ने कहा - 'संस्कृत तो मृत भाषा है।' तब स्वामी जी ने कहा - 'हर किसी को संस्कृत पढ़ाइए। हमें संस्कृत अध्ययन के प्रसार के लिए सतर्क प्रयास करना चाहिए, क्योंकि हमारी मौलिक विद्वत्ता के रत्न इसी भण्डार में छिपे हैं। मानव के उच्चतम दर्शन बिन्दु इसी भाषा में निहित हैं। अपने अज्ञान के कारण हम इस सम्पत्ति से वंचित हैं। संस्कृत शिक्षा हमें अन्य धर्मों के सम्बन्ध में भी सम्यक् जानकारी करा सकती है। केवल ब्राह्मण ही नहीं, अपितु भारत को अपनी माता माननेवाले सभी लोग संस्कृत का अध्ययन करें।'

अपने केरल के प्रवास में स्वामी जी ने वहाँ के नंबूद्री ब्राह्मणों को संस्कृत में वार्तालाप करते देखकर अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की। केरल में बच्चे-बूढ़े-स्त्रियाँ सभी संस्कृत में पारंगत थीं। स्वामी जी का अनुभव तो यह था कि अन्य स्थानों पर तथाकथित पंडित भी संस्कृत बोल नहीं पाते थे। स्वामी जी की मान्यता थी कि केवल संस्कृत के द्वारा ही हम भारत को समझ पाएँगे।

मध्यप्रदेश की जानकारी मिली है कि वहाँ जिन्होंने अंग्रेजी माध्यम से संस्कृत का अध्ययन किया था, उन्हें शास्त्री, आचार्यों की अपेक्षा शिक्षक-नियुक्ति में अग्रक्रम दिया गया। परिणामस्वरूप पाठशालाओं में विद्यार्थियों की संख्या चिन्तात्मक रूप से घटी। इस विषय में स्वामी जी के मार्गदर्शक विचार बिल्कुल स्पष्ट हैं। वे इस नई व्यवस्था के प्रतिकूल थे।

आक्रामक भी भक्त बनें

हम स्वामी जी की अमरीका यात्रा का वृत्तान्त जानते हैं। उन दिनों वहाँ धर्म-संसद का अधिवेशन चल रहा था, पर हिन्दू धर्म का कोई प्रतिनिधि वहाँ नहीं था। स्वामी जी वहाँ गए और हम सबको ज्ञात है कि किस प्रकार उन्हें सम्मानित किया गया। अमरीका में वे कुछ दिन रहे। पश्चिम के प्रबुद्ध नागरिकों ने उनका गुरुत्व भी स्वीकारा। यह संख्या बहुत बड़ी थी। उन्होंने अमेरिका में कई आश्रमों की स्थापना की योजना बनाई। वर्तमान में रामकृष्ण मिशन के रूप में वहाँ अनेक वेदान्त-आश्रम विद्यमान है एवं सुचारु रूप से चल रहे हैं।

यह वह समय था जब ईसाई तत्त्वज्ञ भारत के सम्बन्ध में हीनता एवं वैमनस्य की भावना बढ़ाने में संलग्न थे। वे भारत की प्रतिमा ऐसी चित्रित करते थे मानो भारत राक्षसों का देश है।

संभवतः हम नहीं जानते कि विदेशों में, विशेषतः पश्चिम में भारत के प्रति कितनी घृणा की भावना फैली हुई थी। मुझे एक संस्मरण बताने की इच्छा है, जो रवीन्द्रनाथ ठाकुर जी ने जापान यात्रा के समय अनुभव किया था। महान कवि, दार्शनिक रवीन्द्रनाथ जी को भारतीय दर्शन पर व्याख्यानमाला हेतु जापान के विश्वविद्यालय में आमंत्रित किया गया था। भाषण के पहले ही दिन उन्होंने देखा कि आयोजकों के अतिरिक्त पूरा सभागृह खाली है। दूसरे दिन आयोजकों ने स्वयं घर-घर जाकर ठाकुर जी की महानता का वर्णन कर उनसे भाषण स्थल पर आने की विनती की। श्रोताओं के न आने से एक विद्वान का अपमान होने की बात भी वे कह रहे थे। लेकिन विद्यार्थियों ने यह कहते हुए

कि 'हमें इसमें कोई रुचि नहीं है, मुँह फेर लिया।' अरुचि का कारण पूछने पर उन्होंने स्पष्ट उत्तर दिया - 'हम पराजित जाति का दर्शन नहीं सुनना चाहते।'

यह घटना भारत के प्रति अश्रद्धा एवं अपमान की भावना का स्पष्ट प्रकटीकरण है। इस प्रकार की भावनाओं के बीच स्वामी विवेकानन्द उन धारणाओं का खण्डन कर भारतीय आध्यात्मिक श्रेष्ठता प्रस्थापित करने में सफल हुए एवं समस्त जगत् को अपने विचारों से नतमस्तक किया।

हम भली-भाँति समझ सकते हैं कि उनका सादा जीवन, उनका आत्मविश्वास कितना प्रभावशाली होगा, कि वे इस कार्य में सफलत हुए। किन्तु इसी देश में ऐसे भी विद्वान हैं, जिन्हें यह कहने में कोई संकोच नहीं होता कि 'एक बाइबिल 100 गीता के तुल्य है।' पोप के समक्ष ऐसा कहना संभवतः उनका राजकीय सौजन्य हो।

धर्म की पुनर्स्थापना हो

भारतीय विद्यार्थी विद्यार्जन के लिए विदेश जाते हैं और अपने स्वयं के चरित्र के कारण भारत की गरिमा गिराते हैं। उनका विदेश-गमन भले ही व्यापार, शिक्षा या केवल मौजमस्ती के हेतु हो, उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि उनका चरित्र भारत की गरिमा के अनुरूप हो। उन सभी के लिए स्वामी विवेकानन्द आदर्श उदाहरण हैं।

स्वामी जी कहा करते थे - 'मुझे अध्यात्म में सशक्त, प्रखर एवं सेवाभावी 100 कार्यकर्ता मिल जाएँ तो विश्व का रूप बदला जा सकता है।' हो सकता है कि हम उन आदर्शों को न छू सकें। किन्तु यदि 1000 कार्यकर्ता, भले ही उनके आदर्शों से कुछ कम हों, संगठित हों, एक साथ खड़े होकर, एक साथ कंधे से कंधा मिलाकर प्रयत्नशील हों, तो इस प्रकार की आध्यात्मिक शक्ति से हम स्वामी जी का इप्सित विश्व-परिवर्तन ला सकेंगे, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। यदि ऐसा हम करते हैं तो वह हितावह होगा, अन्यथा ऐसा मानना होगा कि हमने स्वामी जी की अवहेलना की है।

इसमें संशय नहीं कि आज हमारे बीच के ही कुछ प्रमुख लोग धर्म को भुला रहे हैं। इस प्रकार एक अमूल्य धरोहर हम खो रहे हैं। जैसा मेरे पूर्व वक्ता डा० वी०के०आर०वी०राव ने कहा है कि 'पुरोगामित्व के नाम पर हमारे पास की बची-खुची धरोहर छोड़कर हर बाहरी वस्तु का आकर्षण बढ़ रहा है। देश पर मँडराता यह संकट, इस प्रकार की मानसिकता से दूर नहीं किया जा सकेगा। हमें अपने धर्म की पुनर्स्थापना करनी ही होगी।'

समर्थ रामदास की शिवाजी को यही सीख थी। वही आज भी अनुकरणीय एवं उपयुक्त है कि हमारे सारे प्रयत्न तभी सफल होंगे, जब हम पूर्ण शक्ति से उस परम सत्य के प्रति समर्पण भाव से प्रयत्नशील हों।

स्वामी जी के लेखों का पठन कितने आदर से होता है यह सर्वविदित है। इस विषय में हमारी अनभिज्ञता उस कस्तूरी मृग के समान है, जो कस्तूरी की खोज में जंगल में भटक रहा हो। ऐसा नहीं होना चाहिए। हमें स्वामीजी का संदेश इस देश के घर-घर में पहुँचाना होगा। यदि स्वामीजी के कार्य का उचित परिशीलन नहीं हुआ, तो वह अपना सबसे बड़ा दुर्भाग्य होगा।

*

अश्रुतश्च समुन्नद्धो दरिद्रश्च महामनाः ।
अर्थांश्चाकर्मणा प्रेप्सुर्मूढ इत्युच्यते बुधैः ।।

अर्थ - बिना पढ़े ही गर्व करने वाले, दरिद्र होकर भी बड़े-बड़े मनसूबे बाँधनेवाले और बिना काम किये ही धन पाने की इच्छा रखनेवाले मनुष्य को पण्डित लोग मूर्ख कहते हैं।

क्रान्तिकारियों को वंदन

(10 और 11 मई 1856 को पुणे में अभिनव भारत संस्था का विसर्जन समारोह स्वातन्त्र्यवीर सावरकर जी द्वारा आयोजित किया गया था । उस समारोह में श्री गुरुजी द्वारा क्रान्तिकारियों को दी गई श्रद्धांजलि)

— सम्पादक

क्रान्तिकारियों को पागल, सिरफिरा आदि कहकर स्वयं बड़े बुद्धिमान बनने का नाट्य कुछ लोगों द्वारा किया जाता है । लेकिन सत्य यह है कि उनको क्रान्तिकारियों की राष्ट्रभक्ति की उग्रता सहन नहीं होती । क्रान्ति की अग्नि में आत्मसमर्पण करके उस क्रान्ति की ज्वाला तरुणों के अंतःकरण में धधका देने के लिए जीवित रहनेवाले, पूजनीय डा० हेडगेवार के पदचिह्नों का अनुसरण करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है । इस दृष्टि से, क्रान्तिकारियों की आदरपूर्वक वंदना करना और उनकी स्मृति में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करना मेरा कर्तव्य ही है ।

क्रान्ति का मनमाना अर्थ लगाने से अब काम नहीं चलेगा । स्थायी स्वरूप की क्रान्ति करने के लिए दिन-रात कष्ट सहन करना और शान्तिपूर्वक उत्कृष्ट प्रयास करना आवश्यक है । अपने अन्तःकरण में क्रान्ति की ज्योति सदा जागृत रखना और जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ उसे प्रज्वलित करने का निश्चय हृदय में रखना आवश्यक है । इसके लिए उग्र तपस्या करनी ही होगी ।

दारिद्र्यग्रस्त लोकजीवन को समाप्त कर सच्चे अर्थों में सुखी एवं समृद्ध भारत निर्माण करने के लिए, राष्ट्रभक्तिशून्य अराष्ट्रीय भावनाओं पर आघात करने के लिए, भारत अर्थात् हिन्दू-राष्ट्र का राष्ट्रीय जीवन सब दृष्टियों से पूर्ण करने के लिए और इस राष्ट्र के राष्ट्रध्वज 'भगवाध्वज' को यावचंद्रदिवाकरौ फहराता रखने के लिए, समारोह के इस शुभावसर पर हमें संकल्प करना चाहिए ।

✶

पराजय भी फिर जय है ...

यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ।
भूलुंठित भुजचक्र, किरीट, कवच, कल-कुण्डल ।
टूक टूक तूणीर, खंड कोदंड दंड बल
श्री हत शयित धरायित, सैन्य सनी शोणित में,
क्षत-विक्षत शिर-वक्ष, न कोई साथी संबल ।
पर जब तक लालसा समर की शेष रक्त में ।
हार-हार यह नहीं विजय ही अमर अभय है ।।

—पद्मश्री गोपालदास 'नीरज'

साधना के दीप

—श्री ओमशंकर त्रिपाठी
प्रधानाचार्य

यह वर्ष योगी, तपस्वी श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर जी की जन्म शताब्दी का है । मा० प्रधानाचार्य जी ने श्री गुरु जी पर दो कविताएँ लिखी हैं, जो क्रमशः प्रकाशित की जा रही हैं । दोनों ही कविताएँ प्रेरक तथा प्रभावी हैं ।
— **सम्पादक**

ओ तपस्वी !
सिन्धु से गंभीर हिमनग से अचल उज्ज्वल यशस्वी
ओ तपस्वी
ओ तपस्वी

साधना के दीप, शुचिता की धरोहर
कर्म के संगीत, शुचि मानस मनोहर
भाव-धन, विश्वास के विग्रह, जगत के ओ जयस्वी ॥1॥
ओ तपस्वी ...

राष्ट्र की प्रेरक कथा, कविता समय की
आर्ष-कुल की सत्प्रथा, शुचिता मलय की
ओ भगीरथ के अदम्य प्रयास जैसे ऊर्जस्वी ॥2॥
ओ तपस्वी ...

शक्ति की आराधना, सेवा सनातन
भक्ति की उद्भावना ममता चिरन्तन
मातृ-मन्दिर के अखण्डित दीप से पावन वचस्वी ॥3॥
ओ तपस्वी ...

सहज सेवा-भावना, निष्काम तन-मन
पावनी भागीरथी सा दिव्य जीवन
दिव्य देवोपम हिमालय से परम पावन पयस्वी ॥4॥
ओ तपस्वी ...

प्रखर प्रतिभा के प्रकीर्ण प्रकाश अनुपम
सत्व की संकल्पना से मूर्त संयम
ओ यती, सेवाव्रती, त्यागी, विरागी, ओ मनस्वी ॥5॥
ओ तपस्वी ...

✶

ध्रुव देश भक्ति के अमिट नाम

श्री ओमशंकर त्रिपाठी
प्रधानाचार्य

युग-पुरुष, तुम्हें युग का प्रणाम ।
सदियों से सोया पड़ा शौर्य, निस्पंद मौन मन स्वाभिमान
जब पौरुष हुआ प्रमाद-भ्रमित वैभव में खोया महीयान
आत्मस्थ आत्मरत चिन्तन केवल 'भूमा' से संयुक्त हुआ
कर्मानुराग सेवा संयम के आदर्शों से मुक्त हुआ
तब उस कलिमल से ग्रसे समय, तुम प्रकटे शिव संकल्पवान ॥1॥
युग पुरुष .....

प्रकटे तुम वीरव्रती अवतारी ज्योति-पुरुष सत के प्रतीक
ऊर्जस्वी कुल के आदि पुरुष जैसे तेजस्वी ऋषि ऋचीक
सद्धर्म-मर्म की व्याख्या तुम पावन तप की परिभाषा से
संयम के उर में बसी कर्म-कौशल की चिर अभिलाषा से
हे विजयव्रती, वैरागी, अनुरागी, त्यागी शुभ आप्तकाम ॥2॥
युग पुरुष.....

आजीवन परिव्राजक-व्रत के पालन-कर्ता, प्रच्छन्न यती
कामना-शून्य तपव्रती सिद्धयोगी, अविकारी कर्मव्रती
क्षण-क्षण जीवन कण-कण तन का भारत माता-हित होम किया
भर मानस में अनुराग प्राण-गीतों से माँ का स्तोभ किया
ओजस्वी धीर मनस्वी हे, हे यज्ञ-अर्चि से शुभ ललाम ॥3॥
युग पुरुष .....

मुख में अमोघ वैखरी हृदय में अमर भक्ति भारत माँ की
तूफान मचलता चरणों में नयनों में भारत की झाँकी
संकल्प-सिद्ध स्रष्टा युग-द्रष्टा युग-तरणी के कर्णधार
युग के विश्वास सनातन जीवन-शैली के अनुपम विचार
हे युग-तरुणाई के नायक ध्रुव देश भक्ति के अमिट नाम ॥4॥
युग पुरुष .....

तप, त्याग, तितिक्षा, शुचिता, संयम के अखण्ड साधना-पुरुष
तम-पंगु निराशा-निशा निविड़ घन अंधकार के दीप्त अरुष
तुम जिए देश के लिए देशहित तिल-तिल करके जले सतत
जीवन का हर पल जीवन भर साधना धर्म में रहा निरत
देशानुराग, ओ चिर विराग, युग-युग तुमको युग का प्रणाम ॥5॥
युग पुरुष .....

*

दिव्य गुण निधान - महावीर श्री हनुमान

—मा० श्री हरिकृष्ण सेठ

'एडवोकेट'

मा० श्री हरिकृष्ण जी सेठ ख्याति प्राप्त अधिवक्ता, समाजसेवक, शिक्षाविद् तो हैं ही वास्तव में वे एक अच्छे व्यक्ति हैं । उनकी यह अच्छाई उनकी भगवत्-भक्ति के रूप में हमारे समक्ष है । यह लेख मात्र नहीं है वरन् हनुमान जी महाराज के प्रति उनकी भक्ति-भावना है । ऐसा लगता है कि जीवन के उत्तरार्द्ध में वे भक्ति-रस में लीन हैं । उनकी भावनाओं को प्रणाम करते हुए मैं उनका लेख यथावत् प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

— सम्पादक

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल एवं हिन्दू अनाथालय में सुन्दर काण्ड का सस्वर पाठ हुआ । उन पवित्र क्षणों में महावीर श्री हनुमान के शौर्य पाण्डित्य एवं उनके दिव्य गुणों का संक्षिप्त वर्णन लिपिबद्ध करने का विचार मन में आया जिसे निम्नवत् प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

श्री हनुमान, भगवान श्रीराम के अनन्य सेवक रहे । उनके समान कोई दूसरा श्रीराम सेवक नहीं हुआ । भगवान श्री राम के प्रति वह प्रत्येक प्रकार से समर्पित रहे । राम काज करने के लिए ही वे अवतरित हुए थे । उनका विश्वास था कि भगवान श्रीराम की कृपा प्राप्त होने के कारण उनका कोई कभी कुछ बिगाड़ नहीं सकता । सुन्दर काण्ड में जब भगवान श्रीराम, माता सीता के वियोग में दुखी थे, उस समय श्री हनुमान ने दुख निवारण हेतु जो कार्य किया वह अतुलनीय है ।

श्री हनुमान अति बलवान व पराक्रमी थे । सीता माता की खोज में रघुपति श्री राम के अमोघ बाण की तरह उन्होंने लंका को प्रस्थान किया । अपने अतुलनीय शौर्य, बल, बुद्धि से श्री हनुमान ने मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को पार किया । उन्हें अष्ट सिद्धि का वरदान प्राप्त था । वह अदृश्य होकर कठिन से कठिन पदार्थ में प्रवेश कर सकते थे । इच्छा करने पर बड़े से बड़ा रूप और लघु से लघु रूप धारण कर सकते थे । पृथ्वी में समा सकते थे । आकाश में उड़ सकते थे । प्राप्त इन सिद्धियों के कारण ही सुरसा, लंकिनी व अन्य निशाचर जिन्होंने उनका मार्ग अवरुद्ध करने का प्रयास किया, उनका वध उन्होंने किया और माता सीता की सुधि लेने के लिए समुद्र पार कर लंका की ओर बढ़ते गये ।

आवश्यकतानुसार रूप परिवर्तन करने में भी वे सक्षम थे । सुरसा हो या लंकिनी उनके वध के लिए उन्होंने कभी लघु रूप धारण किया और कभी विशाल रूप । लंका में भी लघु रूप धर कर प्रवेश किया ताकि वहाँ किसी को उनकी उपस्थिति का भान न हो और वे सारी स्थिति का सूक्ष्म अध्ययन कर सकें । विभीषण से लंका में विप्र रूप धर कर मिले । माता सीता से मिलने पर उनके इस संशय पर कि लंका में महाभट बलावन योद्धा हैं, उन पर विजय कैसे प्राप्त हो सकती है, माता जानकी को अपना भूधराकार अतिबलवान रूप दिखलाया और संशय को दूर किया । रावण ने दण्ड स्वरूप जब उनकी पूँछ में आग लगाने का निर्देश दिया उस समय भी श्री हनुमान अपनी पूँछ इतनी बढ़ाते चले गये कि लंका का सारा तेल और घी का भण्डार पूँछ में समा गया और विकराल रूप धर कर लंका नगर को जला कर राख कर दिया । पुनः अग्नि शमन कर माता सीता के सामने लघु रूप धर कर उपस्थित हुए ।

श्री हनुमान गहन पारखी भी थे । लंका में विभीषण को पहचान लिया कि वह निशाचर होते हुए भी सज्जन और राम भक्त है । श्री हनुमान जब विभीषण से मिले तब स्वयं को बहुत दीन हीन व राम कृपा पर आश्रित प्रकट किया।

श्री हनुमान वीरता के साथ न्याय और नीति पालक भी थे । लंका में माता जानकी को दुखी और विरह संतप्त स्थिति में देखकर श्री हनुमान स्वयं भी परम दुखी हुए और माता जानकी को हर प्रकार से आश्वस्त किया । भगवान

राम के विरह में उनके प्रति उनके अनुराग व दुख का वर्णन कर उन्हें सान्त्वना दी। लंका में मेघनाद के साथ युद्ध में जब श्री महावीर ने उसे विरथ कर दिया और जब उसने देखा कि कपि हनुमान पर विजय पाना सम्भव नहीं है तब उसने उन पर ब्रह्म अस्त्र साधकर प्रहार कर दिया। वे कुछ क्षण के लिए मूर्छित हो गये, तब मेघनाद ने उन्हें नागपाश में बाँधा। महावीर श्री हनुमान ब्रह्मअस्त्र के प्रभाव को भी निष्फल कर सकते थे लेकिन उन्होंने ब्रह्मअस्त्र की महिमा रखने के लिए नीति पालनवश समर्पण कर दिया। रावण के समक्ष उपस्थित किये जाने पर भी निडर होकर उन्होंने उसके समक्ष भी रघुपति श्रीराम की महिमा का गुणगान किया और उसे सहस्त्रबाहु और बालि आदि से उसकी पराजय की यादें उसे दिलायीं। रावण को सलाह दी कि श्रीराम से बैर न कर माता जानकी को उन्हें सौंप दें और आश्वस्त किया कि भगवान करुणा सिन्धु हैं और वह उसके अपराधों को क्षमा कर देंगे।

माता सीता जिस स्थिति में लंका में थीं वे कल्पना भी नहीं कर सकती थीं कि कोई राम दूत उन तक पहुँच सकेगा। निशाचरों के रूप परिवर्तन व कपटपूर्ण व्यवहार को वे समझ व देख चुकी थीं। श्री हनुमान उनकी इस मनःस्थिति से अनभिज्ञ नहीं रहे। अतः उन्होंने अपनी उपस्थिति और राम दूत होने के साक्ष्य स्वरूप और भरोसा उत्पन्न करने के लिए भगवान श्रीराम की मुद्रिका माता सीता के समक्ष डाल दी। उसी प्रकार माता से वापसी में विदा लेते हुए उन्होंने भगवान श्रीराम को भरोसा दिलाने के लिए कि वे माता जानकी से मिलकर आ रहे हैं, उनसे भी निशानी के रूप में चूड़ामणि ले आये।

श्री हनुमान आज्ञाकारी रामसेवक थे। अतः समर्थ होते हुए भी चूँकि राम की आज्ञा नहीं थी इसलिए माता जानकी को लंका से नहीं लाये। उन्हें अजर अमर एवं शस्त्रादि से अप्रभावित रहने का वरदान प्राप्त था।

महावीर श्री हनुमान निरभिमानी थे। लंका से सीता की सुधि लेकर लौटने पर उन्होंने भगवान श्रीराम से अपनी प्रशंसा सुन विनम्रता पूर्वक उनके चरणों में सिर रख दिया। बार बार उठाने पर सिर चरणों से हटाने को तैयार नहीं हो रहे थे। श्री हनुमान के समान विनम्र, पराक्रमी, विद्यानिधान, कार्यकुशल, अनुपम चातुर्य और पाण्डित्य और दिव्यगुण सम्पन्न दूसरा कोई नहीं है। भगवान श्रीराम को स्वयं कहना पड़ा कि श्री हनुमान के समान दूसरा उनका उपकारी नहीं है और वे उनके ऋण से उऋण नहीं हो सकते।

★

परं क्षिपति दोषेण वर्तमानः स्वयं तथा।
यश्च क्रुध्यत्यनीशानः स च मूढतमो नरः।।

अर्थ - स्वयं दोषयुक्त बर्ताव करते हुए भी जो दूसरे पर उसके दोष बताकर आक्षेप करता है तथा जो असमर्थ होते हुए भी व्यर्थ का क्रोध करता है, वह मनुष्य महामूर्ख कहलाता है।

युग-पुरुष श्रीगुरू जी

—श्री ओमशंकर त्रिपाठी

प्रधानाचार्य

परमपूज्य श्री गुरूजी अर्थात् श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर विश्वविख्यात संगठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक। प्रखर प्रतिभा के धनी। मनस्वी अध्येता। यशस्वी अध्यापक। तेजस्वी देशभक्त ऊर्जस्वी संगठक। वर्चस्वी वक्ता, संस्कारी सत्पुरुष, अविकारी सन्त और साक्षात्कारी महात्मा; इस प्रकार के जाने कितने विशेषण जोड़ने के बाद भी मन सन्तुष्ट नहीं होता क्योंकि वह थे ही कुछ ऐसे लोकोत्तर व्यक्तित्व वाले। इसलिए उनको 'युग-पुरुष पूज्य श्री गुरूजी' कहकर विषय को आगे बढ़ा रहा हूँ। सर्वप्रथम उनका संक्षिप्त लौकिक परिचय कराना इसलिए आवश्यक समझता हूँ ताकि विद्यालय के छात्र जानें कि विश्वविख्यात अतिमानव स्वामी विवेकानन्द के देहत्याग के ठीक तीन वर्ष सात माह और पन्द्रह दिन बाद उन्हीं की संस्करी आत्मा धारण कर महामानव श्री माधवराव अपनी भारत माँ को परमवैभव के आसन पर विराजमान करने का उद्देश्य लेकर ही अवतरित हुए थे। मनस्वियों का विश्वास है कि जन्मभूमि के प्रति अगाध भक्ति रखने वाली आत्माएँ तीन और चार वर्ष की अवधि में ही अपने अनुकूल कुलवंश, परिवार और जनक-जननी खोजकर पुनः जन्म ले लेती हैं। सर्वप्रथम निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण तिथियों को संक्षेप में एक साथ लिख देना उचित होगा, ताकि जिज्ञासु पाठकों को कम परिश्रम से ही एक ही स्थान पर उनके लौकिक जीवन की झाँकी देखने को मिल जाए।

उनका जन्म फाल्गुन कृष्ण एकादशी (विजया एकादशी) सम्वत् 1963 विक्रमी अर्थात् 19 फरवरी 1906 ई० को प्रातः 4.34 बजे हुआ था।

1915 में नौ वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत संस्कार के साथ ही प्रारम्भिक (प्राइमरी) शिक्षापूर्ण हुई। पूरे विभाग में प्रथम स्थान पाकर प्रतिभा-छात्रवृत्ति भी प्राप्त की। यज्ञोपवीत के साथ नित्य-नियमित संध्या-वन्दन तथा सूर्य नमस्कार की अखण्ड उपासना का प्रारम्भ भी उसी क्षण से हो गया था।

1922 में 16 वर्ष की आयु में चन्द्रपुर जुबली हाईस्कूल से हाईस्कूल परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इस अवधि में बाँसुरी वादन में भी प्रवीण हुए। बाँसुरी वादन के प्रशिक्षक थे सुप्रसिद्ध बाँसुरी वादक पण्डित साँवलाराम खर्डेनवीस। ज्ञातव्य है कि श्री साँवलाराम जी स्वयं नेत्रहीन थे और एक अन्धविद्यालय में संगीत के शिक्षक भी थे। कालान्तर में वही उनके विरक्ति-मार्ग के सहयोगी भी बने। सन् 1936 में शिक्षा, अध्यापन और वकालत सभी में सफलता प्राप्त होने के बाद भी मन न लगने पर जब श्री गुरू जी ने अध्यात्म मार्ग पर पग बढ़ाने का निश्चय कर लिया और स्वामी अखण्डानन्द का सान्निध्य पाने को व्यग्र हुए तब अपनी पत्नी के गहने बेंचकर इन्हीं साँवलाराम जी ने उनको 200/- रु० चुपचाप प्रदान किए थे क्योंकि श्री गुरु जी बिना परिवार और सम्बन्धियों को बताए ही जाना उचित समझ रहे थे धन्य हैं आदर्श मित्र पं० साँवलाराम।

18 वर्ष की आयु (1924) में नागपुर के ख्यातनाम महाविद्यालय (हिस्लाप कॉलेज) से विज्ञान वर्ग में पूर्व स्नातक परीक्षा सम्मान सहित उत्तीर्ण की। इसी अवधि में अपने ''बाइबिल'' ज्ञान से कॉलेज के प्राचार्य को विस्मयमुग्ध कर अपनी अलौकिक प्रतिभा का संकेत दे दिया था। इसी वर्ष जुलाई मास में उच्च अध्ययन हेतु विश्व प्रसिद्ध काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और सन् 1926 में स्नातक उपाधि तथा 1928 ई० में प्राणिशास्त्र (Zoology) विषय से स्नातकोत्तर (M.Sc.) की उपाधि प्रथम श्रेणी प्रथम स्थान लेकर उत्तीर्ण की। सन् 1929 में शोध कार्य प्रारम्भ किया और 1931 ई० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में ही व्याख्याता हो गए। इसी वर्ष राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरकार्यवाह स्वनामधन्य श्री भइया जी दाणी के सम्पर्क से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक एवं शाखा-कार्यवाह भी बने। यह

वर्ष ही उनके जन्मजात आध्यात्म की ओर रुचि होने के कारण श्री रामकृष्ण आश्रम के सम्पर्क का भी था। सन् 1935 में कानून की डिग्री प्राप्त कर वकालत प्रारम्भ की किन्तु व्यवसाय में मन न लगने के कारण अपने व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त पुस्तकें (आलमारियों सहित) श्री मनोहर पंत ओक वकील को सौंप दीं और जाग्रत प्रचण्ड वैराग्य के कारण सन् 1936 के अक्टूबर मास में बंगाल प्रान्त के मुर्शिदाबाद जिले में स्थित अध्यात्म-सिद्ध केन्द्र 'सारगाछी आश्रम' ले गए अपने अध्यात्म-गुरू स्वामी अखण्डानन्द की सेवा में। ध्यान रखना होगा कि स्वामी अखण्डानन्द विश्वविश्रुत योद्धा संन्यासी स्वामी विवेकानन्द के गुरुभाई थे। लगभग छः महीने आश्रम में गुरू सेवा परायण रहकर स्वामी अखण्डानन्द जी के देहत्याग के बाद पुनः नागपुर लौटे और लगभग एक वर्ष के आत्मचिन्तन के पश्चात् सन् 1938 से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य में पूरे मन, वचन, कर्म से जो सक्रिय हुए तो रुकने का नाम न लिया और जीवन पर्यन्त अखण्ड प्रवहमान गोमुखी भागीरथी की भाँति अपनी अलौकिक क्षमताओं के साथ अखण्ड गतिमान रहते हुए, हँसते मुस्कराते उसी अगाध परमात्मोदधि में समा गए जहां से कभी आए थे।

परमपूज्य श्री गुरुजी के सांसारिक जीवनवृत्त को अति संक्षेप में प्रस्तुत करने के पश्चात् उनके भाव, विचार और कर्तृत्व की झलक यदि नहीं दिखायी गयी तो सारा परिश्रम ही व्यर्थ हो जाएगा। अतः अगले अनुच्छेदों में पहले उस महापुरुष के भावजगत की चर्चा, इसके पश्चात् उनके विचारों का परिचय तत्पश्चात् उनके अविश्रान्त अलौकिक कर्तृत्व का दर्शन कराना चाहता हूँ।

स्वामी विवेकानन्द अपने गुरुभाइयों और शिष्यों के बीच कहा करते थे, 'अपनी सांस्कृतिक परम्परा से प्राप्त मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, अतिथि देवो भव के साथ आर्तदेवो भव, दरिद्रदेवो भव जोड़ना कभी मत भूलो इसी भाव से समाज को हर व्यक्ति के पास जाकर उसकी परमेश्वर भाव से पूजा करनी चाहिए।' श्री गुरुजी की भावभूमि इसी गहन सेवाव्रत पर आधारित थी और सदा उर्वरा भी बनी रही। भारत माता का आसेतु हिमाचल सुजला, सुफला कलेवर ही उनका उपास्य था और उसकी अहर्निश सेवा ही उनकी उपासना। वास्तव में उनका जन्मजात वैराग्य अपनी भारत माता की उपासना में लहलहा उठा था, उनका भावजगत भारतभूमि के साथ एकाकार हो गया था इस प्रकार उन्होंने अपनी भावभूमि पर भारतमाता की प्राण प्रतिष्ठा की और अपने तन को ही उनका पूजा-मन्दिर बना कर 'त्वदीयं वस्तु .....' के भाव से उन्हीं को सौंप दिया।

सेवा के लिए समर्पण और आत्म-विस्मृति परमावश्यक सद्‌गुण है। श्री गुरुजी इसके पर्याय थे। वह सेवा चाहे गुरू अखण्डानन्द की हो या फिर मार्गदर्शक डॉ० हेडगेवार की अथवा किसी सामान्य जन की हो। इन विविध मूर्तियों में उन्होंने देशमाता की सेवा का ही आनन्द पाया। उनके कानों में अपने आध्यात्मिक गुरू अखण्डानन्द की यह वाणी सदा गूँजती रही कि ''गोवलकर'' (गुरू अखण्डानन्द जी ''गोलवलकर न कहकर 'गोवलकर' ही कहते थे।) सेवा करना बहुत कठिन कार्य है। सेवा करते समय मैं किसी व्यक्ति की कर रहा हूँ। ऐसा भाव मन में कभी न लाना। तुम्हारा सारा कर्म ईश्वर को समर्पित होना चाहिए। किसी की भी सेवा- चाहे वह समाजसेवा हो या व्यक्ति-सेवा हो - करते समय निजी प्रतिष्ठा की ओर देखने या उसे बढ़ाने की आकांक्षा बिल्कुल न होनी चाहिए।'' उन्होंने सूत्र रूप में कहा था -

''जे जा चाय से ता पाय।
जे ना चाय से सब पाय॥''

अर्थात् तुम जो भी चाहोगे वह सभी कुछ तुम्हें मिलेगा, किन्तु जब तुम कुछ न चाहोगे, तब तुम को सर्वस्व मिल जायेगा। कालान्तर में सद्‌गुरू की वह अमोघ वाणी सत्य सिद्ध हुई। ध्यान रखना होगा कि उनकी यह सेवा-भावना उनके भाव जगत् का ही सुफल थी।

पूज्य श्री गुरुजी अद्वितीय सन्त स्वामी रामकृष्ण परमहंस की शिष्य-परम्परा के दीक्षित संन्यासी थे। यद्यपि उन्होंने कभी संन्यास के वाह्य कलेवर को धारण नहीं किया, फिर भी उस कलेवर के प्रति उनके मन में आजीवन भक्तिभाव बना रहा। दुनिया जानती है कि श्री रामकृष्ण परमहंस की शिष्य-परम्परा विचारक संन्यासियों की है।

स्वदेश-भक्ति उनका स्वभाव है, सेवा उनकी रुचि तथा समाज-कल्याण उनका लक्ष्य और श्री गुरू जी विवेकानन्द के विचारों से ही अनुप्राणित थे, यह भी निर्विवाद है।

स्वामी विवेकानन्द कहते थे "यदि तुम पाश्चात्यों की नकल करोगे, तो तुम्हें न उनकी क्रियाशक्ति प्राप्त होगी, न ही उनके द्वारा की गयी भौतिक उन्नति ही मिल सकेगी। सिंह की खाल ओढ़कर गधा, सिंह नहीं बनता। अतः ओ अमृत पुत्रों! अपने स्वत्व को पहचानो, अपनी संस्कृति का पारायण करो और अपनी स्वर्गतुल्य भारतभूमि के प्रति अखण्ड भक्ति रखो।"

स्वामी विवेकानन्द के विचारों और उनके कर्तृव्य से वह कितने प्रभावित थे। सन् 1950 में उनके जन्मदिवस पर उनके द्वारा दिए गए भावपूर्ण किन्तु विचारोत्तेजक उद्‌बोधन से स्पष्ट हो जाता है। उन्होंने अपने उस उद्‌बोधन में जो कहा था उसे अविकल रूप में प्रस्तुत करना ही सर्वथा उपयुक्त होगा।

"भारत के रोग का सुस्पष्ट निदान कर अभ्युदय का मार्ग बताने वाले हिन्दू समाज के वैभव-प्रासाद की नींव, धर्म, संस्कृति का ऐकात्म्यबोधक तत्त्वज्ञान ही हो सकता है, केवल आर्थिक या राजनैतिक सूत्रबंधन ही नहीं" - इस सत्य की घोषणा करनेवाले, तमोगुण व्याप्त अकर्मण्य एवं प्रमत्त हिन्दू समाज को सन्मार्ग प्रदर्शन कर तेजस्वी कर्मयोग का संदेश सुनाने वाले, ऊँच-नीच आदि भेदभावों के विध्वंसक, व्यक्तिमात्र में नारायण का दर्शन कर उसकी सेवा करने का आदेश प्रदान करने वाले हैं! महाविभूति, भारत की पराधीन अवस्था में भी संसारभर को उसके तत्त्वज्ञान का जयजयकार करवालनेवाले जगद्‌गुरो! जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परकीयों का अंधानुकरण कर अपनी बुद्धि का खोखलापन, हीनता, दासता प्रकट कर भारत को अभारतीय जड़वाद की ओर ले जानेवाले मूढ़ हिन्दुओं के तथाकथित नेताओं के नेत्रों में स्वाभिमान का प्रखर अंजन डालकर उन्हें जगाने वाले भारत ही संसार का परमगुरु है इस सत्य को सिद्ध करनेवाले हे! विश्ववंद्य महात्मन्! आज फिर से परानुकरण एवं अधार्मिकता के पथ पर चलनेवाले, मानवता से पशुत्व की ओर बढ़ने वाले चारों ओर फैल रहे हैं। आज आपका पुण्य स्मरण कर हम आपसे धर्म और सन्मार्ग का पथप्रदर्शन चाहते हैं।

आपके आशीर्वाद से आज के अज्ञानजन्य अवगुणों को नष्ट कर, भेदरहित सूत्रबद्ध हिन्दू समाज प्रबल एवम् स्वाभिमानपूर्ण होकर अपने महान् सांस्कृतिक गुणों का पुनरुज्जीवन कर प्रत्येक व्यक्ति को सुखपूर्ण जीवन प्राप्त कराता हुआ संसार के सम्मुख ईर्ष्याशून्य शांतिमय समाज जीवन का आदर्श खड़ा कर सकेगा। इस उद्दिष्ट को पाने के लिए हम आपके उपासक आपसे यही वरदान माँगते हैं कि हमारा सम्पूर्ण जीवन इस महान् उत्थान-कार्य में व्यतीत हो, मार्ग में आने वाले कष्ट भी सुखदायी हो सकें, ऐसी हममें लगन हो और आपने जिस भारतमाता का जग में सम्मान बढ़ाया उसकी सेवा में हम लोगों का जीवन समर्पित हो। प्रभु आपके स्मृतिदिवस के अवसर पर ये कुछ रूखे-सूखे शब्दपुष्प, जैसे भी हों, अर्पण कर रहा हूँ। यह अल्पपूजा स्वीकार हो।"

पूज्य श्री गुरूजी का कर्तृत्त्व आज विश्वविदित है। विश्व के अध्येताओं द्वारा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर लिखी गयी अनेक पुस्तकें। दुनिया के शताधिक देशों में फैला हुआ संघ - कार्य, देश-सेवा में संलग्न लक्षावधि जीवनव्रती कार्यकर्त्ता, विविध क्षेत्रों को अपनी शुचिता, सहिष्णुता एवं सेवा से आप्लावित करने वाले अनेक विध सुदृढ़ संगठन और विश्व को प्रभावित करने वाली उदात्त हिन्दू परम्परा का प्रभावी उद्‌घोष करने वाली उभरती हुयी वैश्विक विचारधारा के मूल में यदि कोई साधना आज फलवती हुई है, तो वह है पूज्य श्री गुरू जी की तपश्चर्या। जीवनपर्यन्त परिव्राजक का अखण्डव्रत निर्वाह करने वाले उस परम तपस्वी सन्त के कर्मकौशल को आज प्रत्येक अध्येता और चिन्तक सश्रद्ध स्मरण करता है। उनके कर्तृत्व का दर्शन हम उनके ही शब्दों में झाँककर करें तो और अच्छा होगा। वह समाजसेवा के क्षेत्र में पूज्य डॉक्टर हेडगेवार को प्रमाण मानते थे और कर्मशीलता के बारे में उनसे अच्छा उदाहरण उनकी दृष्टि में शायद ही कोई हो। वह उनका कथन प्रायः उद्धृत करते रहते थे। "मेरा अस्तित्व तो मेरा कार्य ही है। इससे भिन्न मैं अपने किसी अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकता।" उनका स्पष्ट मत था कि - "जवानी के कुछ दिन यदि आराम के लिए ले लिए तो बुढ़ापे के निकम्मे दिन ही काम करने के लिए बचेंगे।" वास्तव में इसी अविश्रान्त कर्तृत्वशीलता का निर्वाह वह जीवन पर्यन्त करते रहे। श्री गुरू जी कहते थे बड़े-बड़े महापुरुष अल्पकाल में ही शरीर

छोड़कर चले गए। शंकराचार्य 32 वर्ष की अवस्था में, विवेकानन्द 39 वर्ष में और शिवाजी 52 वर्ष की आयु में इस लोक से प्रस्थान कर गए । उन्हें अधिक काल तक जीने की इच्छा न थी । प्रचण्ड परिश्रम की तपस्या में शरीर को होम कर देना ही हमारी परम्परा है ।''

वह कहते थे - ''कार्य में घिस-घिस कर यदि प्राण जाएँ, शरीर को सुखा-सुखा कर यदि कार्य बढ़े तो उसके लिए कटिबद्ध रहना हमारा आदर्श है ।' कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए वह कहते थे - ''कार्य करते-करते कभी विभ्रम उत्पन्न होने लगता है कि ''चारों ओर इस कोलाहल में मेरी क्षीण वाणी कौन सुनेगा ।' परन्तु यह धारणा व्यर्थ है। सब सुनेंगे और अवश्य सुनेंगे । मैं कहता हूँ यदि अपने शब्दों के पीछे त्याग, तपस्या और चारित्र्य है, तो लोग सिर झुकाकर सुनेंगे ।''

उनका विश्वास था कि - 'सफलता आयेगी ही । हमें तो तपस्वी जीवन बिताने और सर्वस्व होम करने की तैयारी करनी है ।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि परमपूज्य श्री गुरूजी के भाव, उनके विचार और उनकी कर्तृत्वशक्ति एक समय पर आकर धनीभूत हो गयी थी और इसीलिए उनको युगपुरुष कहना ही सर्वथा समीचीन है । युग-पुरुष की दृष्टि गहरी और उसके विचार शाश्वत होते हैं, इसका यदि प्रमाण ही देना हो तो शताधिक हो सकते हैं । मैं केवल एक उदाहरण देना ही पर्याप्त समझता हूँ । आज से 43 वर्ष पूर्व 3 फरवरी 1963 ई० को चेन्नई नगर में व्यक्त किए गए अपने उद्‌बोधन में उन्होंने कहा था - ''हमारे चारों ओर संकट मँडरा रहे हैं । अपने देश की सीमाओं पर आक्रमण हो रहे हैं । इस परिस्थिति में पौरुष की आवश्यकता है । घुटने टेकने की प्रवृत्ति से काम न चलेगा । यदि अपनी श्रेष्ठ सांस्कृतिक धरोहर, अपने दर्शन और जिसके लिए इस विश्व में हमारा अस्तित्व है उस जीवनोद्देश्य में हमारी जड़ें पक्की जमी रहती हैं, तब स्वाभाविक रूप से हमारे हृदय में निर्भयता का संचार होगा । फिर शांति, विश्वशान्ति जैसी लचर दलीलों में अपना हृदय-दौर्बल्य छिपाने की चेष्टा नहीं करेंगे ।'' कहना न होगा कि उनकी वह अमोघ वाणी आज भी सर्वथा प्रासंगिक है।

उनके सम्बन्ध में और भी बहुत कुछ लिखा जा सकता है किन्तु इतना ही ध्यान से पढ़ लिया गया, तो छोटे बड़े सभी के लिए कल्याणकारी और प्रेरक पाथेय होगा ।

इतिशम् ।

✶

लखि सुबेष जग बंचक जेऊ । बेष प्रताप पूजिअहिं तेऊ ।।
उघरहिं अंत न होइ निबाहू । कालनेमि जिमि रावन राहू ।।

अर्थ - जो वेषधारी ठग हैं उन्हें भी अच्छा (साधु का सा) वेष बनाये देखकर वेष के प्रताप से जगत् पूजता है, परन्तु एक न एक दिन उनकी सच्चाई सामने आ ही जाती है, अन्त तक उनका कपट नहीं निभता है, जैसे कालनेमि, रावण और राहु का हाल हुआ ।

एकात्म मानववाद आज की आवश्यकता

दीनदयाल विद्यालय के वार्षिकोत्सव [25 सितम्बर 2005] में पायनियर के यशस्वी सम्पादक, सांसद मा० श्री चंदन मित्रा का वक्तव्य

— सम्पादक

मंच पर आसीन पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय के संचालक गण, माननीय अतिथियों, अभिभावकों और छात्र-बंधुओं। पं० दीनदयाल उपाध्याय के नब्बेवें जन्म दिवस समारोह पर जो आपने मुझे अपने विचार व्यक्त करने के लिये बुलाया है उसके लिये मैं हृदय से आपका आभारी हूँ। पिछले एक घंटे में मैंने विद्यार्थियों के द्वारा जो शारीरिक योगाभ्यास के कार्यक्रम तथा अनुशासन की भावना देखी है उससे मैं बहुत प्रभावित हूँ। आजकल हम देख रहे हैं कि स्कूलों कॉलेजों में अनुशासनहीनता बढ़ती ही चली जा रही है और इसकी वजह से समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। युवा-पीढ़ी भटक रही है। आपने इस आदर्श विद्यालय की स्थापना करके तथा शिक्षा के साथ-साथ अनुशासन को भी बहुत महत्त्व देकर प्रदेश और देश के सामने एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। मैं आपसे यह आशा करता हूँ कि आप पं० दीनदयाल उपाध्याय के बताये हुए आदर्शों पर चलेंगे और उनसे प्रेरित होकर इस विद्यालय को कौशल के साथ चलाते रहेंगे और समाज को एक दिशा देते रहेंगे।

पं० दीनदयाल उपाध्याय के दर्शन से आप सभी परिचित हैं और मैं नहीं समझता हूँ कि इस पर मैं कुछ ज्यादा प्रकाश डाल सकता हूँ। लेकिन फिर भी इतना मैं जरूर कहना चाहूँगा कि बीसवीं शताब्दी में जो विचारधाराएँ, जो दर्शन समाज के सामने रखे गये उनमें से आज 'एकात्म मानववाद' का एक विशेष स्थान है। बीसवीं शताब्दी में हम चार मुख्य वाद देखते हैं। पूँजीवाद, साम्यवाद, कल्याणवाद और एकात्म मानववाद (मानववाद)। इनमें से तीन दर्शनों ने दुनिया के कई देशों के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक चिन्तन को प्रभावित किया है। इन दर्शनों के आधार पर समाज का निर्माण हुआ है। पूँजीवाद, साम्यवाद और कल्याणवाद को दुनिया के कई देशों में अपनाया गया। परन्तु इसका जो नतीजा हुआ हमें उस पर ध्यान देने की जरूरत है। क्या पूँजीवाद, साम्यवाद या कल्याणवाद से मनुष्य और समाज प्रगति के उस स्तर तक पहुँच पाये हैं जहाँ तक पहुँचना चाहिये था। हम इसमें इतने विफल हुए हैं कि आज विश्व में 120 करोड़ लोग ऐसे हैं जिनकी एक दिन की जीविका एक डॉलर से कम है। एक डॉलर अर्थात् 44 रुपये एक दिन की आय है 120 करोड़ लोगों की। 240 करोड़ लोग ऐसे हैं जिनको कोई स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। 170 करोड़ लोग ऐसे हैं जिनको स्वच्छ पेय जल की सुविधा उपलब्ध नहीं है। संयुक्त राष्ट्र संघ के आँकड़ों के मुताबिक दुनिया में प्रति घंटे 1200 बच्चों की मृत्यु हो जाती है क्योंकि उनको पौष्टिक भोजन नहीं मिलता है, स्वास्थ्य की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। वे कुपोषण का शिकार होते हैं। इन आँकड़ों को यदि हम एक बड़े पैमाने पर देखें तो इसका अर्थ यह हुआ कि अभी जो भारत और आसपास के देशों में भयंकर सुनामी की जो लहरें आयी थीं उसमें जितने लोगों की मृत्यु हुई थी उसकी तीन गुनी मौतें प्रतिमाह हो रही हैं अर्थात् तीन सुनामी लहरें प्रतिमाह आ रही हैं। 1200 बच्चे प्रति घंटे मर जाते हैं क्योंकि हम उनको संरक्षण देने के काबिल नहीं हैं। यह आज दुनिया का हाल है यानी जो भी वाद या आर्थिक सामाजिक व्यवस्थाएँ दुनिया में आयी हैं वे असफल रही हैं। पूँजीवाद, साम्यवाद यहाँ तक कि कल्याणवाद भी विफल हो चुका है। क्योंकि इन तीनों व्यवस्थाओं के लिये किसी बाहरी शक्ति की जरूरत है। पूँजीवाद के लिए बाजार की जरूरत है क्योंकि बाजार की नीतियों के अनुसार पूँजीवाद आगे बढ़ता है। साम्यवाद के लिये राज्य (State) की जरूरत पड़ती है और कल्याणवाद के लिये भी राज्य की आवश्यकता है। पूँजीवाद, साम्यवाद तथा कल्याणवाद में मनुष्य का कहीं कोई जिक्र (चर्चा) नहीं है।

मानवरहित या मनुष्य के हित को केन्द्र में न रखकर जो व्यवस्थाएँ बनती हैं उनमें कुछ कमियाँ रह जाती हैं। पिछले सौ वर्षों में हमने देखा है कि इन्हीं कमियों की वजह से मनुष्य विकास के रास्ते पर रुक-रुक कर चल पा रहा है। दुनिया की आधी जनता गरीबी रेखा के नीचे है, उन्हें पीने का पानी नहीं है, शिक्षा नहीं है, स्वास्थ्य सुविधाएँ नहीं हैं। मानव को अलग रखकर किसी राष्ट्र या समाज की बात बेमानी है। यही बात आज से कई दशक पहले पं०

वे ऐतिहासिक पावन क्षण जब परम पूज्य श्री गुरु जी ने अपने विद्यालय का शिलान्यास किया...

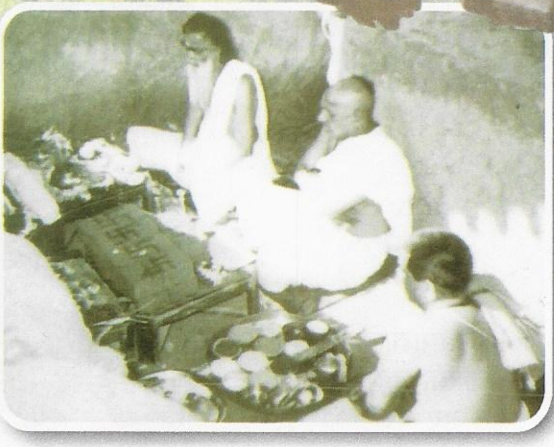

२३ फरवरी सन् १९७० को विद्यालय का शिलान्यास–पूजन करते हुए परम पूज्य माधवराव सदा शिवराव गोलवलकर 'गुरु जी' तथा पूजन करवाते हुए वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के वेद विभागाध्यक्ष डा० श्री कृष्णदेव।

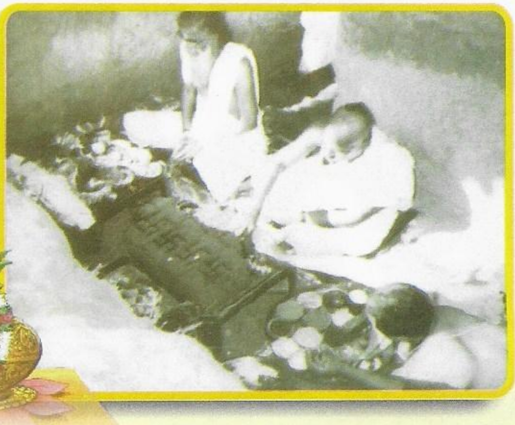

विद्यालय की नींव में रोप दिया तप-त्याग!

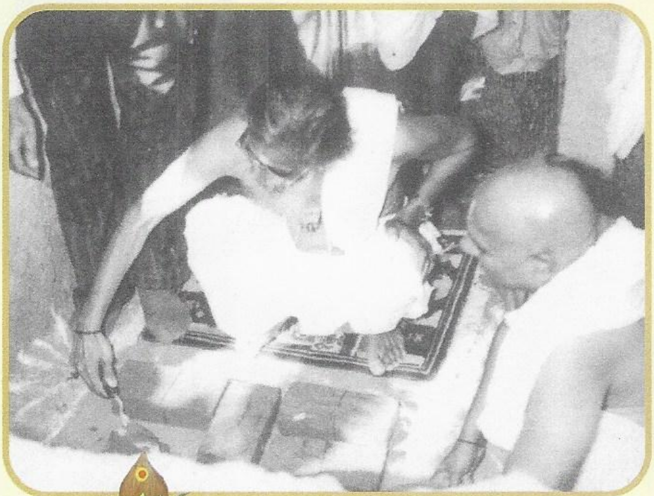

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर की आधार शिला रखते हुए परम पूज्य श्री गुरू जी।

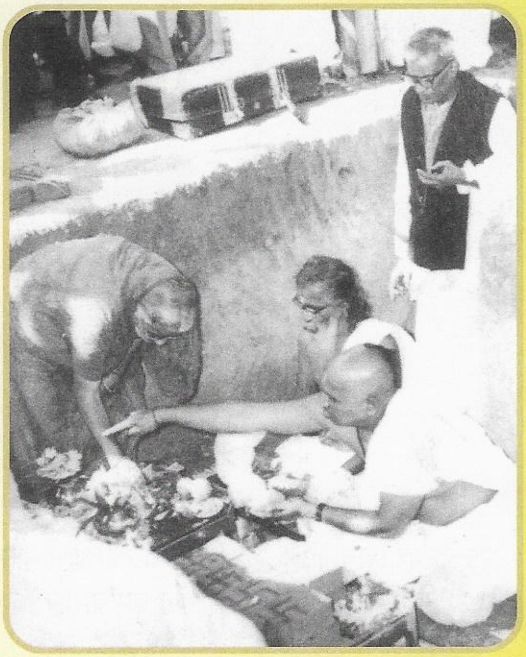

विद्यालय के शिलान्यास के अवसर पर भूमि पूजन करती हुई श्रद्धेया बूजी, बैठे हुए पूज्य श्री गुरु जी पूजन करवाते हुए डा० श्री कृष्णदेव तथा पीछे खड़े हुए श्रद्धेय भाउराव देवरस।

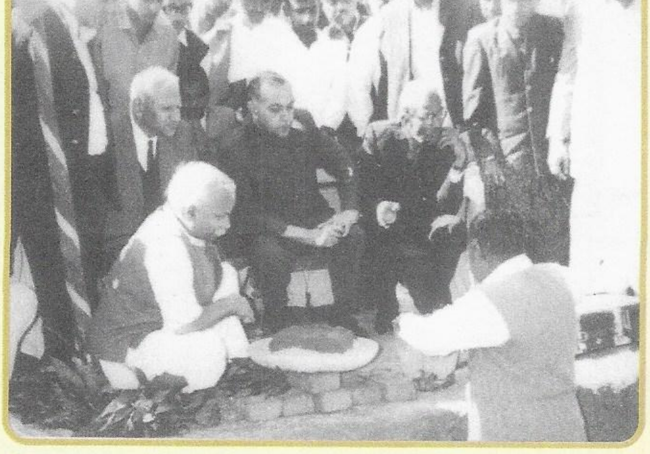

विद्यालय के भूमि – पूजन के अवसर पर श्रद्धेय बैरिस्टर नरेन्द्रजीत सिंह, श्रद्धेय गौरीशंकर जी भार्गव तथा श्रद्धेय माधवराव देशमुख व अन्य।

दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय शास्त्रों तथा परम्पराओं का अध्ययन करने के बाद कही थी। उस समय दुनिया में साम्यवाद और पूँजीवाद के बीच लड़ाई चल रही थी। कोई सुनने वाला नहीं था। सब यही साबित करने में लगे थे कि पूँजीवाद बेहतर है। दूसरे देश कहते थे कि साम्यवाद बेहतर है। इस लड़ाई का नतीजा हम सबने देखा है। इसके चलते साम्यवाद तो समाप्त हो गया। सोवियत-गोष्ठी खत्म हो गयी। पूर्वी यूरोप में बड़ी दुर्दशा हुई है। पूँजीवाद ने भी क्या प्राप्त किया ? अगर पूँजीवाद से समाज का विकास संभव होता तो आज यह स्थिति नहीं होती जिसका वर्णन मैंने आपके सामने किया है। इन सभी वादों के विफल होने के बाद हमको उस वाद की ओर देखना चाहिये जिसको हम पूरी तरह से अमल में नहीं लाए हैं। भविष्य में देश की अर्थ-नीति की बागडोर आपके हाथों में होगी, युवा पीढ़ी के हाथों में होगी। इन प्रचलित वादों पर बहुत ध्यान दिया गया है परन्तु मानववाद पर इतना कम ध्यान दिया गया है कि लोग इसको भूल जाते हैं। एकात्म मानववाद में शाश्वत बातें कही गयी हैं जो हमको सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संकटों से निकाल सकती हैं।

एकात्म मानववाद को हमारे नेता नजर अंदाज कर देते हैं यह बड़े दुःख की बात है। एकात्म मानवदर्शन भारतीय परम्पराओं और विश्वास के धरातल पर खड़ा हुआ है। हमारे जीवन के चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। मानव-विकास इसमें सर्वोपरि है। जब तक व्यक्ति का विकास नहीं होगा, समाज का विकास नहीं हो सकता। जब तक समाज का विकास नहीं होगा, तब तक राष्ट्र का विकास नहीं हो सकता। इसके लिये एकात्म मानववाद का अध्ययन बहुत आवश्यक है। चारों तरफ समाज में मूल्यों का अवमूल्यन हो रहा है। मूल्यों के बाजारीकरण हो रहे हैं। मैं एक दैनिक पत्र का सम्पादक हूँ और मैं ये देख रहा हूँ कि मीडिया नैतिक मूल्यों के प्रचार प्रसार से दूर हटता चला जा रहा है। सभी ये कहते हैं कि अखबार आज कितना बिक रहा है तथा उसको और बेचने के लिये हमको क्या करना है ? टेलीविजन चैनल्स के टी०आर०पी० को कैसे बढ़ाया जाए ? अपराध जगत की बातों को किस तरह से प्राइम टाइम के अन्तर्गत लाकर लोगों को दिखाया जाए ? ताकि दर्शक प्रलोभित हों अपराध से। ज्यादा दर्शक देखेंगे तो ज्यादा विज्ञापन आयेगा। विज्ञापन आयेगा तो और मुनाफा कमाया जायेगा। मूल्यों का अवमूल्यन इस स्तर पर चला गया है कि कोई इस स्तर पर सोच नहीं रहा है, विचार नहीं कर रहा है। मीडिया, राजनीति, शिक्षा, समाज हर जगह अवमूल्यन हो रहा है और हम एक बहाव में बहते चले जा रहे हैं। यदि इस बहाव को न रोका गया तो हमारे देश का भी वही हश्र होगा जो दुनिया के अन्य कई बड़े देशों का हुआ है। इसको रोकने के लिये जरूरी है कि हम भारतीय शास्त्रों और परम्पराओं को समझें और एकात्म मानववाद को समझें। हम जीवन शैली में, अपनी नीतियों और कार्यों में उस एकात्म मानववाद को प्रतिबिम्बित करें। यह और भी आवश्यक इसलिये हो गया है क्योंकि देश के राजनैतिक दर्शन में हम आज ऐसी प्रवृत्तियाँ देख रहे हैं जिनको हम विकृति के अलावा कुछ नहीं कह सकते हैं।

कुछ इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ और राजनीतिक व आर्थिक नीतियाँ बदली जा रही हैं लेकिन हम अपने नेताओं से, सरकार से और बुद्धिजीवियों से कोई प्रश्न नहीं पूछ रहे हैं। 'धर्म' शब्दका गलत तरीके से प्रचार प्रसार और व्यवहार हो रहा है। इस बारे में कोई सोच नहीं रहा है। हम जब धर्म निरपेक्षता की बात करते हैं तो हमको सोचना चाहिये कि धर्म निरपेक्ष होना क्या होता है ? हम कैसे धर्म से निरपेक्ष हो सकते हैं ? धर्म है नैतिकता। पं० दीनदयाल उपाध्याय ने कहा था -"The classes proximation to dharma in English is the rule of law." कानून के द्वारा प्रतिष्ठित समाज जिसको आज हम Civil Society कहते हैं। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, चर्च इस धर्म के सिर्फ एक अंग हैं। धर्म शब्द जो गलत प्रयोग हो रहा है हमको उससे बचना चाहिये। धर्म बहुत महत्त्वपूर्ण चीज है। हर व्यक्ति को धर्म परायण होना चाहिये। इसके लिये हमारे नीति निर्धारकों, बुद्धिजीवियों और हम सभी को पं० दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रणीत एकात्म मानववाद का अध्ययन करना चाहिये और उसको अमल में लाना चाहिये। यह बड़े दुःख की बात है कि एक आध आपके जैसे संस्थानों को छोड़कर कहीं भी इस पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। जिसको हम एक आदर्श समाज कह सकते हैं उसको दीनदयाल जी धर्म राज्य कहते थे; वह हमको कैसे प्राप्त हो सकता है ? वह आदर्श समाज हमको तभी प्राप्त हो सकता है जब हमको आत्म-प्राप्ति हो। एक व्यक्ति जब अपने आपको अपनी बुद्धिमत्ता से, अपनी कर्मठता से जब पूरी तरह विकसित करेगा तभी वह 'आत्म तत्त्व' की प्राप्ति करेगा। अपने आपको प्राप्त कर लेना ही सबसे बड़ी प्राप्ति है। व्यक्ति के लिये। जब व्यक्ति विकसित होगा तो समाज भी विकसित होगा।

इसी दिशा में हमको आगे बढ़ना है। यह कभी नहीं हो सकता कि ऊपर से कोई कानून लायेगा, या आदेश देगा कि इस पथ पर चलो, ऐसे खड़े हो जाओ। रूस में जो Collective farming के प्रयास किये गये वे विफल हो गये। हर मनुष्य को अपने आपको अभिव्यक्त करना है। यदि प्रत्येक मनुष्य स्वयं अपने आपको प्राप्त कर ले तो समाज

का विकास हो सकता है। एकात्म माननवाद हमको इसी दिशा में प्रेरित करता है। एकात्म मानववाद के तत्त्व को हम जब तक समझते नहीं हैं तब तक हम भटकाव की ओर जा रहे भारतीय समाज को नहीं रोक पायेंगे। जिस प्रकार से प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं को विकसित और अभिव्यक्त करने के लिये सर्वदा प्रयत्नशील होना चाहिये उसी प्रकार से समाज के विकास के लिये भी प्रयास करना चाहिये। पूँजीवाद, साम्यवाद और कल्याणवाद इसलिये विफल हुए क्योंकि वे व्यक्ति और समाज के बीच सम्बन्ध को समझ नहीं पाये। पूँजीवाद में बाजार को खुली छूट दे दी गयी। साम्यवाद में हर चीज में सरकार का नियंत्रण और दखल आ गया। सरकार पर किसी राजनीतिक दल का नियंत्रण होने लगा। इससे नाराज होकर लोगों ने विद्रोह कर दिया। यह व्यवस्था एकाध देशों को छोड़कर हर जगह समाप्त हो चुकी है। 'कल्याणवाद' साम्यवाद और पूँजीवाद के बीच की स्थिति है जो नार्वे और स्वीडन आदि देशों में लागू की गयी थी वहाँ भी समाज में बड़ी विकृतियाँ आ गयी हैं और वहाँ इनके कारणों पर सोचा जा रहा है। प्रत्येक वाद और व्यवस्था में कुछ गल्तियाँ रही हैं। भारत में हमारे शास्त्र और गुरु हमेशा कहते रहे कि अपने आपको समझो, अपने आपको विकसित करो। अपने शरीर, बुद्धि और मानस को विकसित करो। बीसवीं सदी में स्वामी विवेकानन्द की भी यही वाणी थी। वे कहते थे कि शरीर और मन दोनों को ताकतवर बनाओ। दोनों के विकास से ही आत्म-प्राप्ति संभव है। जब प्रत्येक व्यक्ति धर्म के अनुसार अर्थ और काम को भी प्राप्त कर लेगा तो वह मोक्ष प्राप्त करेगा और तभी व्यक्ति के साथ-साथ समाज का विकास भी संभव होगा।

आज की पीढ़ी जो है वह 'Me generation' है। अगर हर व्यक्ति सिर्फ अपने आप के बारे में सोचेगा 'कैसे और पैसा कमाया जाए ?' और इसके लिये यदि ''धर्म और नैतिकता को छोड़ना हो तो छोड़ दो'' इस प्रकार के Me generation के चिन्तन से जो विकृतियाँ आ सकती हैं, वे हमारे सामने हैं। जिन पर समाज में मूल्यों की स्थापना का दायित्व है वे भी पीछे हट रहे हैं। मीडिया पर भी यह दायित्व है, वह हमारे लोकतंत्र का एक स्तम्भ है परन्तु वह भी अपने दायित्व का पालन नहीं कर रहा है। अन्त में मैं यही कहना चाहूँगा कि एक आदर्श संवेदनशील समाज की स्थापना हो। जहाँ हर व्यक्ति दूसरे के कुशलक्षेम की चिन्ता करे। दूसरे की सुविधा असुविधा का भी ध्यान हो और साथ ही व्यक्ति अपने आप को शारीरिक और बौद्धिक रूप से विकसित करे। यह संवेदनशीलता तभी आ सकती है जब हम एकात्म मानववाद का सही ढंग से अध्ययन और परिपालन करेंगे। मैंने देश-विदेश में कई वादों का अध्ययन किया है परन्तु जिस सरलता के साथ पं० दीनदयाल उपाध्याय ने अपने दर्शन को समझाया है उसकी कोई तुलना नहीं है। मुझे आश्चर्य है कि इस दर्शन को आगे नहीं बढ़ाया जाता है। कहीं separanisation (अलगाववाद) की बात होती है। कहीं मार्क्सवाद बच्चों के ऊपर थोपा जाता है। यदि हम एकात्ममानववाद को समझते उसको अमल में लाते तो हमारा देश काफी प्रगति करता। पाँच हजार वर्षों में हमने जो अपने भीतर प्राप्त किया है, जहाँ कहीं भी हमने उसका सही उपयोग किया है वहाँ हम आगे बढ़े हैं। भारत ने दुनिया को 'शून्य' जैसा महत्त्वपूर्ण आविष्कार दिया है। 'सांख्यिकी' को भारतीयों ने दुनिया में आगे बढ़ाया आज कम्प्यूटर और Information technology की दुनिया में भारत सबसे आगे है। भारतीय मेधा (genious) सबसे आगे इसलिये है क्योंकि उसको यह पाँच हजार वर्षों की परम्परा से प्राप्त हुआ है। दुनिया में सभी वाद असफल रहे हैं ऐसे में यदि हम एकात्ममानववाद को अपनाएँ तो परिवर्तन संभव है। दुनिया में आतंकवाद बढ़ता चला जा रहा है, आपस की लड़ाइयाँ बढ़ रही हैं इससे निकलने का रास्ता यही है कि हम व्यक्ति विकास के साथ समाज का विकास करें। इससे हम भारतीय लोकतंत्र को सफल बना सकते हैं। एकात्म मानववाद से हम लोकाधिकार और लोक कर्तव्य को भी जोड़ पायेंगे। अधिकार और कर्तव्य यदि हम साथ-साथ निभाएँ तो सफलता हमें जरूर मिलेगी। यदि हम स्वयं को विकसित करें और आत्म तत्त्व को पहचानें तो हम भारत को ऋषि मुनियों, कवियों के कल्पित आदर्श तक पहुँचा सकते हैं। यदि दुनिया के विफल वादों की ओर हम न देखें और अपने आप में देखें तो यह संभव होगा। पं० दीनदयाल जी के जन्मोत्सव पर हमको एकात्म मानववाद का फिर से अध्ययन करना चाहिये। मैं आपको बधाई देता हूँ कि आपने अध्ययन और चिन्तन के क्रम को जारी रखा है। दीनदयाल शोध संस्थान जैसी संस्थाएँ भी इस पर काम कर रही हैं।

आज मैं बहुत ही Inspired (अनुप्राणित) होकर दिल्ली वापस जा रहा हूँ। मैं पुनः आपको बधाई देता हूँ कि आपने इस परम्परा को जारी रखा है। बहुत-बहुत धन्यवाद।

✶

दूरदृष्टि के धनी गुरुजी

—डा० रमेश शर्मा
विभागाध्यक्ष- हिन्दी विभाग
वी०एस०एस०डी० कॉलेज, कानपुर

चिंतक, लेखक, वी०एस०एस०डी० कॉलेज के हिन्दी के विभागाध्यक्ष डा० रमेश शर्मा ने अपने इस चिन्तनपरक लेख में पूज्य गुरु जी के कुछ महत्त्वपूर्ण सामाजिक कार्यों का उल्लेख किया है।

— सम्पादक

ऋषि रूप, उन्मुक्त अट्टहास, चित्तवेधक दृष्टि, चरैवेति चरैवेति के मूर्तिमंत साधक प्रातः स्मरणीय माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर उपाख्य 'गुरुजी' भारतीय जन में राष्ट्र-अस्मिता व राष्ट्र की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा के प्रति गौरवबोध जगाकर स्वदेश को स्वाभिमानयुक्त परमवैभव सम्पन्न राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित करने का व्रत लेकर आजीवन हर पल हर क्षण साधनारत रहे।

वह अपने स्वयंसेवकों को कहा करते थे कि

'पानी में लवण के समान' स्वयंसेवक सम्पूर्ण समाज के साथ तादात्म्य स्थापित करें। पानी में एक चुटकी भर नमक डालो। नमक पानी में घुल जाता है पर पीने वाले को पीने पर 'लावण्य' का अनुभव होता है। वैसे ही संघ के स्वयंसेवक अपने को समाज से अलग न समझें अपितु समाज के साथ समरस हों पर समाज की बुराइयों से हटे रहें, अपने संघ-संस्कारयुक्त जीवन को समाज में बाँटें और समाज भी उस श्रेष्ठत्व का अनुभव करे।

इस्लाम व ईसाई मतानुयायियों ने भारत को अपना चारागाह समझकर हिन्दू जनता को अपना ग्रास बनाना चाहा। भारत के ही अनेक क्षेत्रों में विशेष रूप से उत्तर पूर्व सीमान्त क्षेत्रों में हिन्दू संन्यासियों का आवागमन प्रतिबंधित कर दिया गया फिर क्या था, छल, प्रलोभन आदि से वनवासी, गिरिजनों को ईसाई बनाया गया। हालात यहाँ तक हो गए कि विदेशी पादरियों के इशारों पर मतांतरित वनवासी व गिरिजन, 'आदिवासी' कहलाकर अपने देश, समाज व धर्म से प्रतिघात करने को तैयार हो गए। अपनी सरकार के विरुद्ध हथियारबन्ध होने लगे। स्वदेश में नागालैण्ड बनने लगे। जहाँ बाइबिल व कुरान हदीस के अनुसार व्यवस्था चलाई जाने लगी या चलाई जाने की माँग उठाई जाने लगी। कोढ़ में खाज की उक्ति चरितार्थ करते हुए अपने देश के एकता-अखण्डता की दुहाई देने वाले व धर्मनिरपेक्ष कहलाने वाले राजनेता, शासक अपनी चुनावी घोषणाओं में- घोषणापत्रों में उन अनुचित माँगों को मानने का आश्वासन देने लगे। इस षड्यंत्र को भाँपकर गुरु जी ने आदिवासी संज्ञा के स्थान पर वनवासी व गिरिजन संज्ञा देते हुए उनके बीच विदेशी षड्यंत्रों का पर्दाफाश करने तथा अपनों का अधिकाधिक सम्पर्क बढ़ाने की योजना को मूर्त रूप दिया। विश्व हिन्दू परिषद, वनवासी कल्याण आश्रम आदि संगठन इस दिशा में सक्रिय हो उठे। एकतरफा मतान्तरण-अभियान पर रोक लगी। मतान्तरित जन स्वधर्म में वापस आने लगे।

इसी क्रम में विश्व हिन्दू परिषद व वनवासी कल्याण आश्रम के संयुक्त प्रयास से वनवासी अंचल में संत सम्मेलन आयोजित किया गया। स्थानीय संतों तथा सत्ताधिकारियों के साथ जगद्गुरु शंकराचार्य भी उपस्थित हुए। बात चल रही थी कि इन वनवासियों को ॐ मंत्र दिया जाए या नहीं। अनेक आचार्य ॐ मंत्र दिए जाने के पक्ष में नहीं थे। इसी दौरान सम्मेलन की खबर पाकर अनेक वनवासी बन्धु अपने परम्परागत वाद्य यंत्रों के साथ सम्मेलन स्थल

पर अपने यहाँ आए हुए संतों, आचार्यों का स्वागत करने के लिए एकत्र होने लगे। एकत्रित वनवासियों में से कुछ जनों का समूह खड़ा हुआ और अपनी भाषा में कुछ गा उठा। उनके गाने का आरोह-अवरोह गुरुजी के कानों में पड़ा। उनका ध्यान उन स्वरलहरियों पर केन्द्रित हो गया। दो मिनट तक उन स्वरों को सुनने के बाद गुरुजी ने आचार्यों की ओर उन्मुख होकर कहा कि आप लोग विचार विमर्श न कर इन स्वरलहरियों को ध्यान से सुनें। मुझे तो ॐकार ध्वनि ही सुनाई दे रही है। सभी संतों व आचार्यों ने भी ध्यानपूर्वक सुना तथा गुरुजी से सहमत होकर एक मत हुए कि ॐकार मंत्र इन वनवासी बंधुओं को पहले से ही मिला हुआ है। अतः अब आवश्यकता है कि इन बंधुओं की भावी पीढ़ी को संस्कार सम्पन्न बनाने की दृष्टि से इनके बीच संचरण करने की और इस हेतु प्रत्येक आचार्य गाँव या क्षेत्र गोद लेकर इन वनवासियों को विदेशी मिशनरियों के चंगुल से बचाए। ऐसी अनेक दूरदृष्टि सम्पन्न रचनाएँ उन्होंने अपने जीवनकाल में कीं जिनके सुपरिणाम आज आने प्रारम्भ हो गए हैं।

धार्मिक जगत में संतों के बीच अनेक प्रकार की दूरियाँ थीं। गुरुजी व्यक्तिगत रूप से कुंभ आदि अवसरों पर संत समाज से मिलते थे और उन दूरियों के निराकरण का प्रयास करते थे। संतगण व आचार्यगण अपने अपने मठ मंदिरों से बाहर आकर अपने अपने क्षेत्र में संचरण करें तथा समाज का साक्षात्कार करें- ऐसा आग्रह उन्होंने किया। फलतः कांचीकामकोटि के उत्तराधिकारी जयेन्द्र सरस्वती महाराज ने 'पदयात्रा' प्रारम्भ की। स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि भानुपुरा पीठ के शंकराचार्य पद से निवृत्त होकर 'समाज-साक्षात्कार' हेतु निकल पड़े। गोरक्षपीठाधीश्वर ने सुदूर आसाम (आहोम) के अनेक गाँवों को गोद लिया। शैव वैष्णव, शाक्त आदि सम्प्रदायों के परमाचार्य अब समय की आँच अनुभव कर एक मंच पर एकत्र होकर 'हिन्दू समाज' के रक्षण हेतु विचार विमर्श कर कार्यसन्नद्ध होने लगे। विश्व हिन्दू परिषद के मंच पर बौद्ध, जैन, शैव, शाक्त, वैष्णव आदि आचार्य एकजुट होने लगे हैं।

विहिप के द्वितीय विश्व हिन्दू सम्मेलन में प्रयागराज में अर्द्धकुंभ के अवसर पर अस्पृश्यता वेद सम्मत न होने के कारण हिन्दू समाज को स्वीकार्य नहीं। इस प्रकार का प्रस्ताव उडूपी (आंध्र) मठ के जगद्गुरु मध्वाचार्य विश्वेश तीर्थ जी महाराज ने जब किया तो समस्त सम्प्रदायों के आचार्यगण एक स्वर से सहमत हो गए।

ये कुछ उदाहरण हैं उस महापुरुष की दूरदृष्टि, कठिन परिश्रम और संगठन कौशल के।

कार्यकर्त्ताओं (स्वयंसेवकों) के हृदय को जीतना कोई उनसे सीखे। अपने अत्यन्त व्यस्त प्रवास-कार्यक्रम में से समय निकालकर शोक संतप्त स्वयंसेवक-परिवारों में पहुँचना और सान्त्वना देना, आवश्यकतानुसार योगक्षेम का दायित्व भी स्थानीय बंधुओं को सौंपना वह नहीं भूलते थे। इसीलिए वह स्वयंसेवकों के हृदय में बसते थे। स्वयंसेवकों के प्राण प्यारे थे।

शाखा ही अनेकानेक समस्याओं का समाधान है। अतः प्रत्येक दिन शाखा जाना चाहिए। यह ध्येय वाक्य केवल स्वयंसेवकों के लिए ही नहीं है अपितु सर्वोच्च अधिकारियों के लिए भी पालनीय है। गुरुजी भले ही ज्वर से पीड़ित हों या किसी अन्य व्याधि से, पर शाखा जाकर ध्वज प्रणाम करना तथा प्रार्थना करना नहीं चूके। अस्तु उनका समग्र जीवन 'मन एकः वचन एकः कर्मन् एकः सः महात्मनाः' उक्ति को चरितार्थ करता था। उन्होंने विवेकानन्द व महर्षि अरविन्द की भाँति सिखाया था - हमारा मन, वचन, कर्म, हमारी शिक्षा, विद्या, साधना, सामर्थ्य- सब कुछ राष्ट्रदेव को समर्पित होनी चाहिए। 'इदम् न मम, इदम राष्ट्राय' - यह मंत्र, उद्गाता के समान हम सब अपने जीवन में सिद्ध करें। यही उस वीरव्रती साधक के प्रति उस साधना पथ के हम जैसे पथिकों की सच्ची श्रद्धांजलि होगी। शांति, शांति, शांति।

★

(श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल, कानपुर द्वारा संचालित)

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय
कानपुर - 208002

—श्री ओमशंकर त्रिपाठी

प्रधानाचार्य

वार्षिक आख्या - 2004-2005

युग-दधीच पं० दीनदयाल उपाध्याय को इस धराधाम पर अवतरित हुए 90 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। तेरा वैभव अमर रहे माँ, हम दिन चार रहें न रहें का जीवन-मंत्र लेकर चलने वाले इस आर्ष परम्परा के ध्वजवाहक ने भारत माता के चरणों में अपना जीवन न्योछावर कर दिया। सामान्य जनमानस के लिए यह वाक्य एक रूढ़ शब्दावली हो सकती है; किन्तु हम उनके वंशज अपनी पूरी आस्था के साथ कहते हैं कि पण्डित जी का जीवन हमारे राष्ट्र की अनुपम थाती है और उनकी साधना देश का जीवन्त इतिहास।

वास्तव में यह विद्यालय उनके आदर्शों को मूर्त रूप देने का शपथ-पत्र है। इसका एक-एक अक्षर अंकित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य जिन महनीय पुरुषों ने किया, उनमें इस विद्यालय की कल्पना-मूर्ति गढ़ने वाले मौन तपस्वी पूज्य **भाऊराव**, इसकी आधारशिला रखने वाले युगद्रष्टा **परम पूज्य श्री गुरु जी**, भव्य भवन को मूर्त रूप देने वाली त्यागमूर्ति **ममतामयी बूजी** और इसकी कंचन-काया में प्राण भरने वाले निष्काम कर्मयोगी **माननीय बैरिस्टर साहब सदा ही स्मरणीय रहेंगे।** विद्यालय के पूर्व अध्यक्ष ब्रह्मलीन प्राचार्य श्री शिवशरण शर्मा का व्रती जीवन और संकल्प सिद्ध अध्यवसाय जहाँ हमारे लिये सतत प्रेरणा है वहीं पूज्य श्री इन्द्रजीत जैन की उदारता हमारा संबल।

संवत् 2026 की गुरु पूर्णिमा (18 जुलाई 1970) के पावन पर्व से प्रारम्भ अपना यह विद्यालय अपने जीवन के पैंतीस बसंत देख चुका है।

इस विद्यालय के कल्पना-शिल्प का आधार उदात्त भावना तथा प्रारूप जाग्रत विवेक है। हमारा लक्ष्य यह भी है कि जिन देशद्रोहियों के घिनौने षड्यंत्र तथा सत्ता की गर्हित लिप्सा के कारण पण्डित जी की क्रूर हत्या की गयी, उन विषैले विचारों को आमूल समाप्त कर दिया जाये और ऐसे विष-वृक्ष फिर कभी न पनपें, इसकी सुनिश्चित व्यवस्था भी की जाये।

पं० दीनदयाल जी भारत, भारती और भारतीयता के मूर्तिमान स्वरूप थे। इस विद्यालय के प्रयोग और परिणाम उनकी इसी भावना की प्रतिकृति हैं। विद्यालय द्वारा संस्कारित दृढ़ इच्छा-शक्ति सम्पन्न आदर्श प्राण पीढ़ी शनैः-शनैः समाज को अपने अस्तित्व का बोध कराने लगी है।

अतः हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि ब्रिटिश दासता के काल से चली आ रही पब्लिक स्कूलों की भ्रामक चकाचौंध से सर्वथा अलग यह विद्यालय **भारतीय संस्कारों की पुनर्स्थापना में एक सुस्पष्ट, गतिमान, तेजोदीप्त और प्रभावी उपक्रम है** तथा वर्तमान व्यावसायिक प्रलिप्सु कर्दम में एक उन्नत-अडिग शैल-शृंग।

कलेवर

षष्ठ कक्षा के मात्र 24 छात्रों से प्रारम्भ होकर निरन्तर प्रगति करता हुआ यह विद्यालय आज विज्ञान वर्ग में मान्यता प्राप्त पूर्ण विकसित इण्टरमीडिएट विद्यालय है।

जिस भूमि पर यह विद्यालय स्थित है, वह श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल द्वारा प्रदत्त है। महामण्डल की इस उदारता का विद्यालय चिर ऋणी रहेगा। **प्रारम्भिक अर्द्धचन्द्राकार दुमंजिले भव्य भवन का निर्माण श्रद्धेया**

बूजी ने अपने नितान्त व्यक्तिगत साधनों से करवाया, जो अपने में एक महिमामय उद्धरण है। आवश्यकतानुसार धीरे-धीरे इस भवन का विस्तार तथा अन्य भवनों का भी निर्माण होता गया यथा विज्ञान-वीथी, भाऊराव-भवन, नरेन्द्र-निवास छात्रावास, प्राचार्य-आवास, माधव-स्मृति, क्रीड़ा-परिसर व प्रेक्षागार तथा आचार्य और कर्मचारी आवास आदि।

वर्तमान समय में लगभग 7500 वर्ग फीट क्षेत्रफल का एक भव्य विशालकक्ष भी बनकर तैयार हो चुका है। इसके लिये विद्यालय, विद्वान सांसद, संपादक स्वर्गीय श्री नरेन्द्र मोहन जी का आभारी है कि उन्होंने कृपापूर्वक अपनी सासंद निधि से पच्चीस लाख रुपये का अनुदान देकर विद्यालय परिवार को कृतार्थ किया।

इस समय षष्ठ से द्वादश कक्षा तक 7 कक्षाओं के 16 अनुभागों में छात्रों की संख्या 777 है। इनमें से 195 छात्रावासीय हैं जो कि विद्यालय के ऊपरी खण्ड, पीछे भाऊराव-भवन तथा नरेन्द्र-निवास में रहते हैं। इनमें उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों के साथ ही उत्तरांचल, बिहार, झारखण्ड, बंगाल, मध्यप्रदेश तथा अरुणांचल प्रदेश के छात्र भी हैं, जिनके भोजन, स्वास्थ्य, स्वाध्याय, अनुशासन आदि की चिन्ता विद्यालय-परिसर में ही निवास करने वाले सुयोग्य आचार्यों द्वारा की जाती है। वास्तव में **हमारी अभिलाषा इस विद्यालय को पूर्णरूपेण आवासीय विद्यालय बनाने की है,** जिससे अपना सुचिंतित व्यक्ति-निर्माण का कार्य हम और अधिक प्रभावी ढंग से कर सकें।

विद्यालय में पढ़ाने वाले आचार्यों की संख्या प्रधानाचार्य सहित वर्तमान समय में 29 है। लगभग सभी प्रशिक्षित परास्नातक हैं।

विद्यालय के पास लगभग **एक लाख रु० से अधिक मूल्य की 15000 से अधिक पुस्तकों से सम्पन्न पुस्तकालय** भी है। वाचनालय में 6 दैनिक, 3 साप्ताहिक तथा 10 मासिक पत्र-पत्रिकायें आती हैं। मुख्य समाचार, सुभाषित, सामान्य ज्ञान इत्यादि श्याम-पटों पर लिखे जाते हैं।

इस विद्यालय को शासन द्वारा विशिष्ट विद्यालय के रूप में कुछ विशेषताओं के आधार पर ही मान्यता दी गयी थी, जिनमें छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान प्रमुख है। इसी विशेषता के प्रति सचेत रह कर हम विद्यालय के छात्रों का समग्र विकास करने में सफल भी हैं।

शैक्षिक उपलब्धियाँ

परिषदीय परीक्षाएँ

विद्यालय की दशम कक्षा का प्रथम दल 1975 में तथा द्वादश का प्रथम दल 1981 में उत्तर प्रदेश की माध्यमिक शिक्षा परिषद की परीक्षा में सम्मिलित हुआ। परीक्षा-परिणाम प्रारम्भ से ही अत्युत्तम रहा है। प्रदेश में सर्वोत्कृष्ट परीक्षा परिणामों के आधार पर ही शासन विगत वर्षों से विद्यालय को लगातार **सर्वश्रेष्ठ विद्यालय घोषित कर रहा है। वर्ष 2006 का परीक्षा-परिणाम निम्नांकित है :-**

	दशम	द्वादश
कुल छात्र	141	111
उत्तीर्ण	141	111
प्रदेश में स्थान	X	01 (21वाँ)
ससम्मान	55	63
प्रथम श्रेणी	80	48
द्वितीय श्रेणी	06	X
तृतीय श्रेणी	00	00

अद्यतन समेकित (Cumulative)

	दशम (31 वर्षों का)		द्वादश (25 वर्षों का)	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
कुल छात्र	2964	–	2449	–
उत्तीर्ण	2948	99.43	2432	99.30
ससम्मान	1111	37.40	620	25.31
प्रथम श्रेणी	1487	49.84	1440	58.79
द्वितीय श्रेणी	0340	11.83	367	14.98
तृतीय श्रेणी	0010	00.35	05	00.20
प्रदेश में स्थान	105 (लगभग 3.5%)		86 (लगभग 3.51%)	

अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

1. राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र द्वारा आयोजित विज्ञान संगोष्ठी 2005 में विद्यालय के नवम ख कक्षा के छात्र चि० रणविजय ने पूरे प्रदेश में द्वितीय स्थान प्राप्त कर विद्यालय का गौरव बढ़ाया है ।
2. पूर्व छात्र चि० दिव्य मिश्र आई०ए०एस० में चयनित हुए तथा इस समय आई०ए०एस० एकेडमी मंसूरी में प्रशिक्षणरत् हैं ।
3. 1998 बैच के चि० रुद्र प्रताप सिंह आई०ए०एस० में 219वें स्थान पर चयनित हुए ।
4. 1999 बैच के चि० विपिन गुप्त (I.I.T. B.H.U.) से बी०टेक० के बाद प्रथम प्रयास में ही I.A.M.-अहमदाबाद में चयनित हुए ।
5. इसी वर्ष (2006) में इण्टरमीडिएट परीक्षा में प्रदेश में 21वाँ स्थान लाने वाले चि० रोहित कटियार ने I.I.T. की प्रवेश परीक्षा में कानपुर परिक्षेत्र में प्रथम स्थान तथा पूरे देश में 17वाँ स्थान प्राप्त किया।
6. वर्ष 2006 की I.I.T. की प्रवेश परीक्षा में विद्यालय के 20 विद्यार्थियों का चयन हुआ ।
7. IIT Kanpur द्वारा आयोजित Communication and Computing प्रतियोगिता में चि० निशान्त तृतीय स्थान प्राप्त किया ।
8. HBTI Kanpur द्वारा आयोजित विविध प्रतियोगिताओं के अन्तर्गत
   - A. प्रश्नमंच में चि० रोहित कटियार प्रथम तथा चि० जीत सिंह आर्य द्वितीय स्थान पर रहे।
   - B. विज्ञापन प्रदर्श में चि० जीत सिंह आर्य प्रथम स्थान पर रहे।
   - C. प्रतिभा खोज प्रतियोगिता में चि० प्रत्यूष प्रांजल द्वितीय स्थान पर रहे।

प्रतियोगी परीक्षाएँ

इंजीनियरिंग, मेडिकल तथा प्रशासनिक प्रतियोगी परीक्षाओं में विद्यालय के छात्रों की सफ़लता का गौरवशाली अध्याय भी अत्यन्त उत्साह जनक है। गत वर्ष की कतिपय उपलब्धियाँ इस प्रकार हैं :

जे०ई०ई०/संयुक्त प्रवेश परीक्षा (आई०आई०टी०, मर्चेण्ट नेवी तथा धनबाद खनन महाविद्यालय हेतु) तथा (सी०बी०एस०ई०) 20

यू०पी०टी०यू०/(क्षेत्रीय अभियान्त्रिकी विद्यालय)	74
अन्य	05
कुल (इंजीनियरिंग) में चयनित	99
सी०पी०एम०टी०/संयुक्त चिकित्सा प्रवेश परीक्षा (मेडिकल कॉलेजों हेतु) चयनित	03
अन्य	03

NDA और CDS के माध्यम से सेना में पहुँचे हुए लगभग 36 सैन्य अधिकारी और संघ लोक सेवा आयोग से चयनित लगभग 20 प्रशासनिक अधिकारी विद्यालय से प्राप्त संस्कारों एवं जीवन के उदात्त आदर्शों का प्रकटीकरण करते हुए आगे बढ़ रहे हैं। विशेष बात यह है कि इन सबके विद्यालय से सतत् जीवन्त सम्बन्ध बने हुए हैं।

शिक्षा विभाग द्वारा संचालित 'एकीकृत छात्रवृत्ति' तथा 'राष्ट्रीय प्रतिभा खोज' परीक्षाओं में भी हमारे छात्र कीर्तमान स्थापित करते आ रहे हैं।

विद्या भारती द्वारा संचालित 'संस्कृति ज्ञान परीक्षा' तथा हिन्दी समिति की 'हिन्दी ज्ञान परीक्षा' में भी अपने छात्र प्रति वर्ष शत् प्रतिशत सफलता पाते हैं। श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल द्वारा आयोजित मानस तथा गीता परीक्षाओं में अपने विद्यालय को सदैव महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता है।

छात्रवृत्तियाँ

शासन द्वारा स्वीकृत छात्रवृत्तियों का वर्तमान सत्र का विवरण इस प्रकार है -

1.	राष्ट्रीय प्रतिभा छात्रवृत्ति	01
2.	राष्ट्रीय योग्यता छात्रवृत्ति	22
3.	एकीकृत तथा अन्य	61

इसके अतिरिक्त हमारे अनेक छात्र अन्य स्रोतों से भी छात्रवृत्ति पा रहे हैं। इन छात्रवृत्तियों के दाता महानुभावों तथा न्यासों/संस्थाओं के नाम निम्नांकित हैं। हम इनके प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक शिक्षा समिति

श्री जयनारायण चेरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सरस्वती देवी एवं श्री हरि मोहन गर्ग छात्रवृत्ति

श्रीमती सावित्री अग्रवाल

श्री कन्हैयालाल गोपालदास अग्रवाल

श्री इन्द्रजीत जैन स्मारक छात्रवृत्ति

श्री प्रेम नारायण जी सोमानी

आई०जे०एस० ट्रस्ट कानपुर

श्रीमती प्रेमा गुप्ता छात्रवृत्ति

श्रीमती भाग्यवती त्रिपाठी द्वारा श्री रवीन्द्र नाथ त्रिपाठी, पाण्डुनगर, कानपुर

श्रीमती संजना मित्तल

श्री खैराती लाल जी चावला

पूर्व छात्र चि० प्रवीण भागवत,

पूर्व छात्र चि० संदीप मेहरोत्रा

पूर्व छात्र चि० हृदयेश गुप्त

पूर्व छात्र चि० अजय गुप्त

कुल मिलाकर इस समय 32 छात्र इन सभी न्यासों और संस्थाओं की आर्थिक सहायता से लाभान्वित हो रहे हैं।

विद्यालय के पूर्व छात्र स्व० गुरुवर शरण अवस्थी की स्मृति में उत्कृष्ट अभिनेता छात्र को पुरस्कार दिया जाता है । यह स्थायी पुरस्कार उनके पिता डॉ० सन्त शरण अवस्थी ने प्रारम्भ किया था ।

पाठ्येतर गतिविधियाँ

खेल-कूद व शारीरिक शिक्षा

विद्यालय में शारीरिक शिक्षा की भी व्यवस्थित योजना है । सामूहिकता की भावना विकसित करने हेतु योगासन व समता पर विशेष ध्यान दिया जाता है । साथ ही अपने सीमित साधनों में हमने खो-खो, कबड्डी, वॉलीबॉल, टेबिल टेनिस तथा बाक्सिंग जैसे खेलों में पर्याप्त कौशल प्रदर्शित किया है । राज्य सब जूनियर मुक्केबाजी प्रतियोगिता वर्ष 2005 में 07 छात्रों ने मण्डल का प्रतिनिधित्व किया । जिसमें चि० प्रत्यूष प्रांजल ने रजत पदक तथा शशांक कुमार, रोहित सिंह, संजीव कुमार एवं दृश्यमुनि चाकमा ने कांस्य पदक प्राप्त किया । दो छात्र चि० प्रत्यूष प्रांजल तथा शशांक कुमार राष्ट्रीय प्रतियोगिता हेतु प्रादेशिक शिविर में चयनित किये गये ।

विद्यालय में सैनिक शिक्षा को भी महत्व दिया जाता है । इस दृष्टि से राष्ट्रीय कैडेट कोर (एन०सी०सी०) की वरिष्ठ तथा कनिष्ठ इकाइयाँ विद्यालय में सफलतापूर्वक चलायी जा रही हैं । इनके प्रभारी विद्यालय के ही आचार्य हैं ।

घर के सुरक्षित व सुविधा-सम्पन्न वतावरण से निकलकर छात्र स्वावलम्बन एवं कठोर जीवनचर्या का अभ्यास करते हुए देश का प्रत्यक्ष अध्ययन करें, इस दृष्टि से विद्यालय के छात्र प्रायः प्रतिवर्ष ही देशदर्शन हेतु जाते रहते हैं । इस योजना के अन्तर्गत अपने छात्र देशदर्शन हेतु देश के लगभग सभी कोनों में जा चुके हैं ।

नैतिक शिक्षा

हमारी समय-सारणी में नित्य प्रातः मानस, गीता आदि ग्रन्थों के शिक्षाप्रद अंशों से युक्त प्रार्थना के बाद सदाचार वेला का प्रावधान है, जिसमें पूर्व निर्धारित आचार्य, कथा, जीवनी आदि के माध्यम से छात्रों को आदर्श जीवन का पाठ पढ़ाते हैं । छात्रों में सर्वगुण-सम्पन्न व्यक्तित्व की स्थापना के प्रोत्साहन हेतु नियत मापदण्डों पर खरा उतरने वाले सर्वश्रेष्ठ छात्र को विद्यालय-रत्न पुरस्कार दिये जाने की भी व्यवस्था है ।

समग्र व्यक्तित्व विकास

निर्भीक-सुचारु अभिव्यक्ति, उत्तरदायित्व- निर्वहन की पात्रता तथा नेतृत्व-क्षमता का विकास हो, इस दृष्टि से विद्यालय में तीन छात्र-संस्थाएँ कार्य करती हैं - अष्टम कक्षा तक बाल-भारती, नवम-दशम में किशोर-भारती तथा एकादश-द्वादश में तरुण-भारती । इनके अन्तर्गत छात्र विद्यालय के विविध कार्यक्रमों का संचालन करते हैं । छात्रावास में भी विभिन्न पदों पर नियुक्त छात्र निर्णय-प्रक्रिया तथा छात्रावास-संचालन में गंभीर भूमिका निभाते हैं ।

विद्यालय के बाहर नगर, जनपद, प्रदेश स्तरों पर आयोजित वाद-विवाद, लेखन, ललित कला आदि विभिन्न प्रतियोगिताओं में विद्यालय के छात्र भाग लेकर प्रतिष्ठा पाते रहते हैं ।

कम्प्यूटर शिक्षण

विद्यालय का कम्प्यूटर-विभाग सुव्यवस्थित और आधुनिकतम सुविधाओं से सुसम्पन्न है । सॉफ्टवेयर के माध्यम से कम्प्यूटरों पर ही पूर्ण अध्यापन तथा स्वनिर्मित सॉफ्टवेयर द्वारा ऑन-लाइन परीक्षा हमारी विशिष्टता है । इसके साथ ही हमने अपने विद्यालय में छात्रों की प्रवेश-प्रक्रिया को भी कम्प्यूटरीकृत कर लिया है । प्रवेश-परीक्षा का परिणाम भी विगत वर्षों से इण्टरनेट पर जारी किया जा रहा है ।

युग-भारती

बाल, किशोर और तरुण-भारती की श्रृंखला में अगली कड़ी है युग-भारती अर्थात् विद्यालय के पूर्व छात्रों की संस्था । जिस उदात्त लक्ष्य की प्राप्ति हेतु इस विद्यालय की स्थापना की गयी थी, उसकी पूर्ति हेतु यह अनिवार्य था कि

दशम या द्वादश उत्तीर्ण होना ही छात्र का विद्यालय के साथ सम्बन्धों की समाप्ति न माना जाये, इसीलिए बहुत पहले ही पूर्व छात्रों की संस्था के रूप में संविधान, कार्यकारिणी इत्यादि के साथ तरुण-भारती की स्थापना हो गयी थी, जो कि अब युग-भारती के नाम से पंजीकृत हो चुकी है । युग-भारती ने अपने शिविरों, ग्राम-सम्पर्क-योजनाओं एवं संचार-साधनों के प्रसार आदि से समाज को अपनी लगन और निष्ठा का परिचय दिया है ।

पूर्व छात्रों का विद्यालय से यह जुड़ाव विद्यालय की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है और समाज के लिये एक अनुकरणीय उदाहरण भी । प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी दिनांक 25 सितम्बर (रविवार) को प्रातः 10 बजे से युग-भारती का वार्षिक अधिवेशन नवीन विशाल-कक्ष में सम्पन्न हुआ है

माँ सुशीला वात्सल्य मंदिर

विद्यालय द्वारा प्रारम्भ यह एक पावन प्रकल्प है, जिसका उद्देश्य समाज के सुविधा-वंचित शिशुओं को जीवन की आवश्यक सुविधाओं के साथ पालन-पोषण तथा समुचित अध्ययन की व्यवस्था करना है ।

इसके लिये विद्यालय के दाहिने पार्श्व में वी०एस०एस०डी० महाविद्यालय के अनुग्रह से प्राप्त भूमि पर एक भव्य भवन निर्मित हो चुका है । युग-भारती के ही एक सक्रिय सदस्य (पूर्व छात्र) श्री यतीन्द्र जीत सिंह के द्वारा इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये पूरा व्यय भार वहन करने का अनुकरणीय संकल्प लिया गया है । भविष्य में इस वात्सल्य मंदिर के द्वारा पालित-पोषित एवं मार्गदर्शित छात्रों का यशस्वी जीवन समाज के लिये भी अनुकरणीय उदाहरण बन सकेगा, इसी विश्वास के साथ विद्यालय का यह पावन प्रकल्प 23 सितम्बर 2004 से कार्यरत है । वर्तमान समय में 12 शिशु शिक्षा एवं संस्कार प्राप्त कर रहे हैं । इस सेवाभावी पावन प्रकल्प में आप सबके सक्रिय सहयोग की अपेक्षा है ।

भारतीय चिन्तन में शिक्षा का उद्देश्य विषय का कक्षा-शिक्षण मात्र नहीं, अपितु व्यक्ति-निर्माण के माध्यम से समाज-जागरण माना गया है । समाज का प्रज्ञा-प्रवाह अवरुद्ध होना भी स्वाभाविक है, अतः आदर्श स्थिति यह होगी कि विद्यालय समाज को ऐसे सुयोग्य नागरिक प्रदान करें जो समस्त सामाजिक विकृतियों से अछूते रह कर अपनी तेजस्विता से निरन्तर नवजीवन का संचार करते हुए इस जीवन-प्रवाह की निरन्तरता बनाए रखें । दुर्भाग्यवश आज अधिसंख्य शिक्षा संस्थान इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर पा रहे हैं । ऐसे में इस विद्यालय की प्रभवी भूमिका निश्चय ही भारत के स्वर्णिम भविष्य की दिशा में एक आश्वस्ति है ।

अन्त में ईश्वर से प्रार्थना है कि छात्रों में राष्ट्र-निष्ठा से परिपूर्ण समाजोन्मुखी व्यक्तित्व के उत्कर्ष में आप सभी समाज-बंधुओं का सहयोग हमें निरन्तर मिलता रहे ।

✶

एकः क्षमावतां दोषो द्वितीयो नोपपद्यते ।
यदेनं क्षमया युक्तमशक्तं मन्यते जनः ॥

अर्थ - क्षमाशील पुरुषों में एक ही दोष का आरोप होता है, दूसरे की तो संभावना ही नहीं है । वह दोष यह है कि क्षमाशील मनुष्य को लोग असमर्थ समझ लेते हैं ।

शिक्षा क्या है ?

—श्री गणेशशंकर वाजपेयी
आचार्य

'शिक्षा' और 'समाज' दोनों अविच्छिन्न रूप से परस्पर गुँथे हुए हैं। शिक्षा समाज में ही फलती-फूलती है और समाज भी शिक्षा की छाया में अपने को अधिक प्राणवान्, गतिशील, सजग एवं सुसंस्कृत बनाता है। एक की प्रगति पर दूसरे की प्रगति निर्भर है एवं एक की अवनति बहुत अंशों तक दूसरे के विनाश का कारण भी बन जाती है। किसी भी समाज में प्रचलित शिक्षा के दृष्टिकोण एवं विधियों का उस समाज की अन्य सामाजिक संस्थाओं पर अति महत्वपूर्ण तथा व्यापक प्रभाव पड़ता है। किसी भी समाज में प्रचलित शिक्षा की प्रणाली उस समाज को प्रभावित करती है और वह उस समाज से प्रभावित भी होती है। 'शिक्षा' समाज के हाथ में ऐसा अद्वितीय उपकरण है, जिसके द्वारा वह व्यक्ति को और इस प्रकार स्वयं (अपने) को उन परम्पराओं, नियन्त्रणों एवं सांस्कृतिक तत्त्वों को हस्तान्तरित करता है, जो उसने मानव के लम्बे एवं सतत प्रयासों के फलस्वरूप संग्रहीत किये हैं।

शिक्षा से हमारा अभिप्राय औपचारिक अथवा संस्थागत शिक्षा से है। यों तो हमको अपने जीवन में जन्म से मृत्यु पर्यन्त प्रतिक्षण शिक्षा प्राप्त होती रहती है। ज्ञात एवं अज्ञात रूप में हम कुछ न कुछ सीखते रहते हैं। पर यह स्वीकार किया गया है कि व्यक्ति के व्यवहार की उस समाज पर, जिसका कि वह सदस्य है महत्वपूर्ण प्रतिक्रियायें होती रहती हैं अतः यह आवश्यक है कि उसे उसके प्रारम्भिक जीवन के कतिपय निश्चित वर्षों में नियमित रूप से शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए, जिससे कि वह समाज से अपना अनुकूलन कर सके और समाज की सेवा भी कर सके।

''शिक्षा विकास का वह स्रोत है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ-प्रदर्शन करती है।'' किसी विद्वान का कथन है कि - ''ज्ञान मनुष्य का तीसरा नेत्र है, जो उसे समस्त तत्त्वों के मूल को समझने की क्षमता प्रदान करता है एवं उचित व्यवहार करने में प्रवृत्त करता है।'' शिक्षा से हमें इस संसार में सुख, समृद्धि एवं सुयश प्राप्त होता है तथा परलोक में मोक्ष। शिक्षा द्वारा प्राप्त प्रकाश से हमारे संशयों का उन्मूलन एवं कठिनाइयों का निवारण होता है और जीवन के वास्तविक महत्त्व को समझने की शक्ति उत्पन्न होती है। प्राचीन भारतीयों का दृढ़ विश्वास था कि - ''शिक्षा से विकसित बुद्धि ही यथार्थ बल है। उन्होंने दृढ़ता से कहा था कि शिक्षा कल्पलता के समान हमारे समस्त मनोरथों को सिद्ध करती है।'' भर्तृहरि ने नीतिशतक में लिखा है - विद्या विहीनः पशुः।

शिक्षा व्यवस्था का प्रमुख कर्त्तव्य

शिक्षा व्यवस्था का कर्तव्य उन प्रथागत विधियों तथा क्षमताओं के ज्ञान को सम्प्रेषित करना है जिनको समाज अपने दीर्घ जीवन और प्रगति के लिए अनिवार्य समझता है। ज्ञान तथा क्षमतायें प्रदान करने के साथ-साथ शिक्षा समाज के नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्वों को भी सम्प्रेषित करती है और इस प्रकार विचारात्मक तथा भावनात्मक-दोनों तत्त्वों के शिक्षण का, व्यक्ति निर्माण का उत्तरदायित्व लेती है। अतः शिक्षा मानव-समाज के उत्थान तथा प्रगति दोनों के लिए आवश्यक है।

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है जिससे कि उसके हितों का समाज के हितों के साथ न्यूनतम संघर्ष हो, और जिससे कि वह समाज के आदर्शों के अनुसार अपने जीवन व्यतीत कर सके और साथ ही उन आदर्शों का उन्नयन करके समाज के स्वस्थ तथा वांछित विकास में योगदान कर सकें।

शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य - व्यक्ति के मानसिक विकास के लिए साधनों को जुटाना है। शिक्षा के इस पहलू के प्रति उतना ही ध्यान दिया जाना आवश्यक है, जितना कि शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को समाज के अनुकूल बनाने

के पहलू के प्रति । वास्तविक शिक्षा न केवल चरित्र, आदत तथा मानसिक अनुशासन - अपितु बुद्धि, विवेक एवं गुण-दोष, विवेचन-शक्ति के निर्माण में भी सहायता करती है । विवेकपूर्ण निर्णय एवं गुण-दोष विवेचन की शक्ति के विकास के अभाव में मानव एक यन्त्र के समान समाज के हित अथवा अहित के लिए कार्य करने वाला हो जायेगा, और उसे इस बात का ज्ञान न हो सकेगा कि उसके कार्य किस प्रकार उत्तम अथवा अधम हैं, और वे किस प्रकार सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करते हैं ।

शिक्षा का उद्देश्य 'व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार का निर्माण' उसकी तर्क शक्ति एवं विवेक पर आधारित करना होना चाहिए । किसी भी प्रकार के बाह्य तत्वों से प्रभावित हुए बिना मानव के मस्तिष्क को विकसित करना- शिक्षा का प्रधान कर्तव्य होना चाहिए । जो शिक्षा-व्यवस्था मानव के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करती है वह उसे निश्चित रूप से तर्कपूर्ण विवेचन की शक्ति प्रदान करती है । ऐसी शिक्षा-व्यवस्था मस्तिष्क में उन रूढ़िगत तथा अनुदार विचारों का प्रादुर्भाव नहीं होने देती है जो सामाजिक, राजनैतिक तथा चारित्रिक क्षेत्रों में नवीन धारणाओ को अंगीकार करने में संकोच करते हैं ।

वस्तुतः वास्तविक शिक्षा का महत्व मानव के व्यक्तित्व को विकसित करने और इसके साथ ही व्यक्ति का समाजीकरण करने तथा इस प्रकार उसकी समाज की नैतिक तथा भौतिक संरचना के अनुकूल बनाने में है । शिक्षा के उचित आदर्शों में इन दोनों उद्देश्यों का समन्वय होना आवश्यक है ।

सारांशतः ईश्वर भक्ति तथा धार्मिकता की भावना चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का पालन, सामाजिक कुशलता की उन्नति तथा राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण और प्रसार प्राचीन भारत में शिक्षा के मुख्य उद्देश्य एवं आदर्श थे ।

✶

अनाहूतः प्रविशति अपृष्टो बहु भाषते ।
अविश्वस्ते विश्वसिति, मूढचेता नराधमः ॥

अर्थ - मूढ़ चित्तवाला अधम मनुष्य बिना बुलाए ही भीतर चला आता है, बिना पूछे ही बहुत बोलता है तथा अविश्वसनीय मनुष्यों पर भी विश्वास करता है।

एकं हन्यान्न वा हन्यादिषुर्मुक्तो धनुष्मता ।
बुद्धिर्बुद्धिमतोत्सृष्टा हन्याद् राष्ट्रं सराजकम् ॥

अर्थ - किसी धनुर्धर वीर के द्वारा छोड़ा हुआ वाण सम्भव है एक को भी मारे या न मारे । मगर बुद्धिमान द्वारा प्रयुक्त की हुई बुद्धि राजा के साथ-साथ सम्पूर्ण राष्ट्र का विनाश कर सकती है ।

अनुपम है इतिहास हमारा

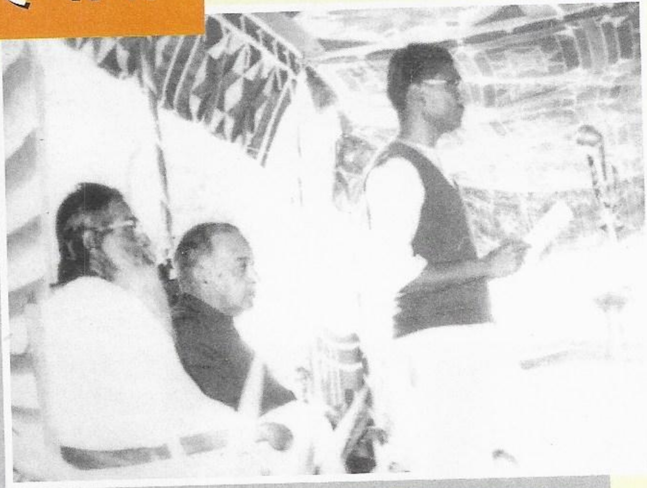

विद्यालय के शिलान्यास के बाद
परम पूज्य श्री गुरू जी के बौद्धिक से पूर्व
मा० अशोक जी सिंहल मार्मिक गीत गाते हुए
पीछे बैठे हैं परम पूज्य श्री गुरू जी
व श्रद्धेय बैरिस्टर साहब

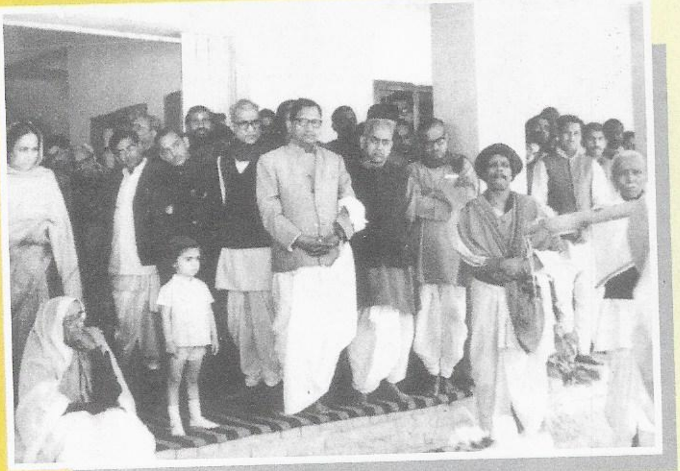

विद्यालय के उपास्य देवता हनुमान जी के विग्रह
की प्राण–प्रतिष्ठा के अवसर पर एकत्र गण्यमान्य
महानुभाव जिनमें प्रमुख हैं :
सर्व श्रद्धेय भाउराव जी देवरस, बापू रावजी मोघे,
देवड़े जी, पुरोहित गण व अन्य अनेक महत्वपूर्ण
सदस्य साथ ही शिशु अवस्था में वर्तमान विद्यालय
प्रबन्ध समिति के सह सचिव श्री यतीन्द्र जीत सिंह।

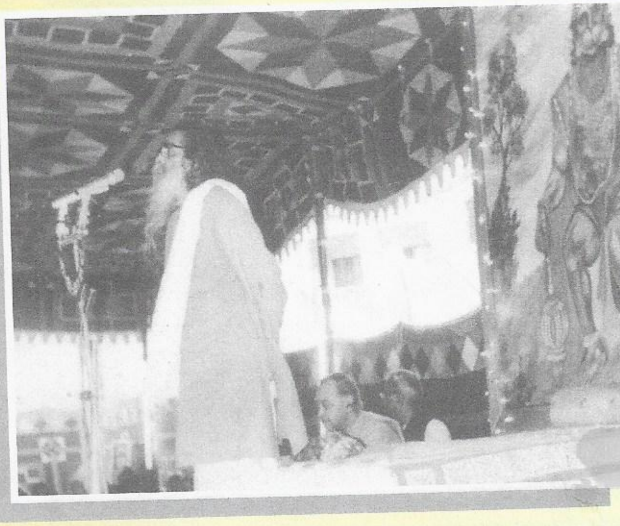

विद्यालय में हनुमान जी की मूर्ति प्राण
प्रतिष्ठा के बाद सभी का मार्ग दर्शन
करते हुए प० पू० श्री गुरू जी तथा
पीछे बैठे हैं श्रद्धेय बैरिस्टर साहब व
श्रद्धेय भाउराव जी।

वार्षिक खेलकूद में तीन टांग की दौड़ में दौड़ते हुए ध्रुव दल के छात्र

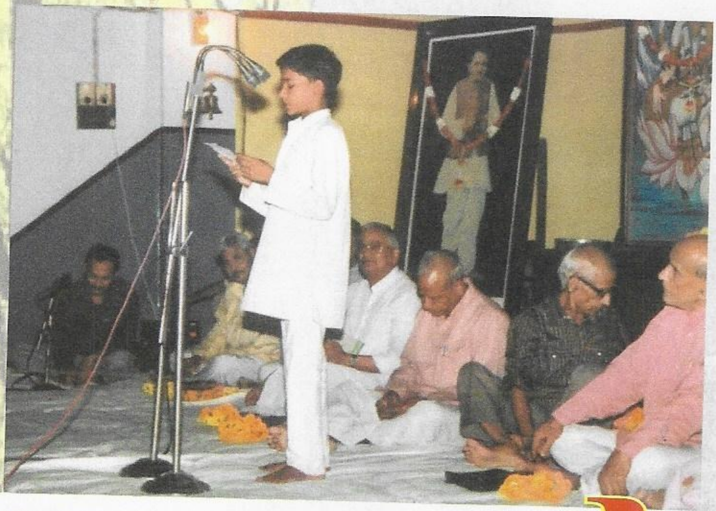

कवि गोष्ठी में कविता सुनाते हुए
अष्टम कक्षा के छात्र
चि० दीपक कुमार

वार्षिक खेलकूद में १०० मीटर दौड़ में दौड़ते हुए लवकुश दल के छात्र।

जाति व्यवस्था - प्राचीन एवं अर्वाचीन

—डॉ० मनोज शुक्ल
आचार्य

श्री मनोज जी ने इस लेख में जो विचार व्यक्त किये हैं उनकी मैं भूरि-भूरि सराहना करता हूँ। आज के इस दौर में जब कि राजनेता शिक्षा में भी आरक्षण लादकर प्रतिभाओं का गला घोटने और समाज में विद्वेष की आग भड़काने का कुचक्र रच रहे हैं तब ऐसे विचार ही जोड़ सकते हैं। **— सम्पादक**

ईश्वर द्वारा निर्मित सम्पूर्ण सृष्टि में मनुष्य ही एकमात्र सर्वोत्कृष्ट प्राणी है। उसमें सहृदयता, संवेदनाएँ, परोपकारी भावनाएँ एवं सम्पूर्ण जीवधारियों में स्वयं को सर्वोच्च सिद्ध करने की कल्पनाएँ होती हैं। पाश्चात्य दार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि ''मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जो मनुष्य समाज से सम्बन्ध नहीं रखता वह या तो देवता है या राक्षस।''

चूँकि मनुष्य विवेकशील प्राणी है इसलिए वह प्राचीन काल से ही चिन्तन परम्परा से जुड़ा रहा है। उस समय से ही उसने एक ऐसे स्वस्थ समाज की कल्पना को साकार रूप प्रदान किया जहाँ पर समाज संचालन हेतु एक संविधान बनाया गया। परमपुरुष परमात्मा के विराट स्वरूप से ही चारों वर्णों की उत्पत्ति दिखाई गई -

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः।
ऊरुतदस्ययद्वैश्यः पद्भ्या ं शूद्रोऽजायत्॥ (पुरुषसूक्त ग्यारहवाँ मन्त्र)

अर्थात विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघाओं से वैश्य एवं पैरों से शूद्र की उत्पत्ति हुई। जब परमात्मा से ही चारों वर्णों की उत्पत्ति हुई है तब आपस में इतना वैमनस्य क्यों?

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया है -

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्॥ (गीता 4/11)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र- इन चार वर्णों का समूह, गुण और कर्मों के विभाग पूर्वक मेरे द्वारा रचा गया है। इस प्रकार उस सृष्टि रचनादि कर्म का कर्ता होने पर भी मुझ अविनाशी परमेश्वर को तू वास्तव में अकर्ता ही जान।

गीता के इस श्लोक में भी गुण एवं कर्म के अनुसार जाति मानी गई है। प्राचीनकाल में सूत जी को निम्न जाति का होने पर भी शौनक इत्यादि अट्ठासी हजार ऋषियों ने व्यासगद्दी पर बैठाकर नैमिषारण्य की पावन भूमि मे अठारह पुराणों की कथाएँ सुनीं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान की पूजा होती थी जाति की नहीं। स्वयं रामजी ने निषादराज से मित्रता की, केवट को गले लगाया तथा शबरी के झूठे बेर खाकर उसे भक्ति का वरदान दिया। सन्त कबीर एवं सन्त रविदास का नाम कौन आदर के साथ नहीं लेता? या फिर इन सन्तों की पूजा कौन नहीं करता? और उनकी कही हुई वाणी को कौन नहीं गुनगुनाता?

स्वायम्भुवं मनु ने इस सामाजिक व्यवस्था के संचालन हेतु एक संविधान बनाया जिसका नाम था मनुस्मृति। इसमें वर्णित है कि कार्य विभाजन के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र बनाए गए क्योंकि समाज में चिन्तनशील विचारधारा सम्पन्न ब्राह्मण, ओज या वीर्य सम्पन्न क्षत्रिय, उदारमना वैश्य एवं सेवाभावी शूद्र की महती आवश्यकता है जिसके बिना सामाजिक कार्य सुचारु एवं सुव्यवस्थित ढंग से हो ही नहीं सकता।

महाराज मनु की व्यवस्था पर टीका टिप्पणी करने वाले लोगों से पूछा जाये कि क्या वर्तमान शासनतन्त्र मनु की व्यवस्था से क्या भिन्न है? आज भी शासनतन्त्र के संचालन हेतु चार ही भेद दिखाई दे रहे हैं 1. प्रथम श्रेणी Class), 2. द्वितीय श्रेणी (Second Class), 3. तृतीय श्रेणी (Third Class), 4. चतुर्थ श्रेणी (Fourth Class)। क्या प्रगतिशील वर्तमान शासनतन्त्र ने कोई पाँचवाँ वर्ग (Fifth Class) बनाया है? यदि नहीं तो क्या नाम बदलकर वर्ण को वर्ग (Class) मात्र कह देने से व्यवस्था बदल जायेगी?

रामजी के राज्य में सभी चारों वर्णों के लोग अपने-अपने कर्तव्य में रत रहकर सदैव सुखमय जीवन व्यतीत किया करते थे। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में लिखा है कि -

बरनाश्रम निज निज धरम निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग ॥ (उत्तरकाण्ड दोहा 20)
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ॥

अर्थात् सभी मनुष्य एक दूसरे से प्रेम करते थे स्वधर्म में लगकर वेदपथ एवं नीतिपथ पर चलते थे।

कार्यानुसार वर्णव्यवस्था प्राचीनकाल से चली आ रही है जहाँ सभी लोग आपस में प्रेम एवं सौहार्द्र का वातावरण बनाकर रहते थे किन्तु आज घृणित एवं कुत्सित स्वार्थों से परिपूरित राजनेताओं ने वर्ण व्यवस्था का इतना भयावह रूप प्रस्तुत किया कि मण्डल कमीशन रिपोर्ट की बात कहकर समाज में परस्पर ईर्ष्या, कलह एवं नफ़रत का जहर घोलकर समाज के मूलभूत स्वरूप की ही हत्या कर दी है। जहाँ प्राचीनकाल में विवाह इत्यादि कामकाज के अवसर पर समाज के सभी वर्गों को सम्मिलित कर सामाजिक समरसता का वातावरण तैयार होता था वहीं आज अगड़ा, पिछड़ा, दलित, ऊँच, नीच की खाई को और अधिक बढ़ावा दिया जा रहा है। आज से लगभग बीस वर्ष पूर्व जहाँ गाँव में रहने वाले ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक आपस में भैया, चाचा, दादा, मामा, बाबा, जीजा, फूफा आदि सम्बन्धों को फलाफूला देखते थे जबकि आज उसका विकृत स्वरूप दिखाई दे रहा है।

राजनेताओं ने अपने वोट बैंक को बढ़ाने के लिए वेद, शास्त्र एवं अन्य आध्यात्मिक ग्रन्थों की व्याख्या भी मनमाने ढंग से की जिसका विकृत स्वरूप हमारे सामने है। उदाहरण के लिए श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड की एक चौपाई पर प्रायः टीका टिप्पणी होती है कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा -

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी ॥
(सुन्दरकाण्ड दोहा 58 की छठी चौ०)

उपर्युक्त चौपाई का अर्थ विकृत मानसिकता के लोग यह लगाते हैं कि ढोल, गवाँर, शूद्र, पशु और नारी ये सभी ताड़ना अर्थात् 'पीटना' के अधिकारी हैं।

अब ध्यान देने की बात यह है कि श्रीरामचरितमानस् अवधी भाषा में लिखा हुआ ग्रन्थ है इसी कारण इसमें तालव्य 'श' का प्रयोग किसी भी चौपाई में नहीं हुआ क्योंकि अवधी एवं ब्रजभाषा में दन्त्य स तथा मूर्धन्य ष का प्रयोग तो होता है पर तालु 'श' का नहीं। इसी प्रकार अवधी भाषा में ताड़ना शब्द का अर्थ होता है निगरानी या देखभाल करना। जैसे जब हम अपना सामान किसी व्यक्ति को सौंपकर टिकट खरीदने जाते हैं तो कहते हैं - ''भैया। सामान तड़े रहना।'' तो यहाँ तड़े रहना का अर्थ देखे रहना होगा न कि सामान पीटे रहना होगा। यह तो मैंने एक उदाहरण दिया। इसी प्रकार के न जाने कितने उदाहरण ग्रन्थों में भरे पड़े हैं ;जिनका निजी-स्वार्थों में अर्थ का अनर्थ कर सद्ग्रन्थों की मूल भावनाओं को समूल नष्ट किया जाता है।

स्वार्थी लोगों को यह ज्ञान क्यों नहीं होता कि पहले हम सभी मनुष्य हैं बाद में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, मुसलमान या ईसाई हैं। जिस राष्ट्र में कभी विश्व भर के लोगों के सुखी एवं स्वस्थ रहने की बात कही जाती थी जैसा कि वेद में वर्णित है -

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद दुःखभाग्भवेत् ॥

उसी राष्ट्र में अपनी जाति तक ही सीमित रहकर हम जातीय सम्मेलन आयोजित करते हैं। जैसे ब्राह्मण सम्मेलन, क्षत्रिय सम्मेलन, वैश्य सम्मेलन, यादव सम्मेलन, पाल सम्मेलन, लोधी सम्मेलन, सविता सम्मेलन, कुशवाहा सम्मेलन आदि। तुच्छता की हद तो तब और पार हो जाती है जब एक ही जाति के विभाजन होकर सम्मेलन होते हैं यथा - कान्यकुब्ज ब्राह्मण, सरयूपारीण ब्राह्मण, गौड़ ब्राह्मण, सनाढ्य ब्राह्मण, सारस्वत ब्राह्मण सम्मेलन या इसी प्रकार माथुर वैश्य, अग्रहरि वैश्य, ओमर वैश्य, दोसर वैश्य या अग्रसेन सभा आदि आयोजन करते हैं। इसी प्रकार सभी जातियों की उपजातियों के सम्मेलन हो रहे हैं। जरा सोचिए क्या अलग-अलग बँटकर हमारे राष्ट्र का उत्थान सम्भव है ? या फिर 'संघे शक्तिः कलौयुगे' मन्त्र से यह सिद्ध होता है कि संगठन में शक्ति होती है। जातियों को उपजातियों में विभाजित करने वाले नेता भले ही अपना उत्थान कर लें पर अपने राष्ट्र का उत्थान कभी नहीं कर सकते। यदि देश की अगुवाई करने वाले राजनेताओं में तनिक भी कहीं राष्ट्रीय भावना हो तो मानव सम्मेलन करें जिसमें सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय की भावना भरी हो और राष्ट्रवादी चिन्तन की स्वस्थ विचारधारा हो।

★

पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक निबन्ध प्रतियोगिता में बालवर्ग में प्रथम स्थान

पं० दीनदयाल उपाध्याय का बाल्यकाल

—आदर्श तिवारी

अष्टम 'क'

केवल कुछ हँसती तस्वीरें मन के मंदिर में मत टाँको ।
बिन प्रयत्न तुम क्षणिक सफलता की उम्मीदें भी मत बाँधो ।।
यह मत समझो वे ही नायक जिनके कण्ठ पड़ी मालाएँ ।
प्रथम नमन के वे अधिकारी जिनको लील गई ज्वालाएँ ।।

भारत भूमि सदा से ही चिंतकों, मनीषियों एवं विचारकों की भूमि रही है। जिन्होंने अपने तेज से, आचरण से, प्रतिभा से सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित तथा आलोकित किया है इन्हीं माँ भारती के वीर सपूतों में से एक थे पंडित दीनदयाल जी।

हृदय सरल संकल्प दृढ़, मेधा-मंडित भाल ।
सुरसरि सम सरसित सदा, पंडित दीनदयाल ।।

नेतृत्व की निस्सीम क्षमता के धनी, ऐसा प्रेरक एवं कर्मशील व्यक्तित्व जो साधना में उत्पन्न हुआ तथा साधना में ही तिरोहित हो गया। उन्होंने अपने सुकर्मों से समाज को नई दिशा प्रदान की थी। ऐसे युगद्रष्टा, महामानव पंडित दीनदयाल जी थे जिनके कार्यों से सम्पूर्ण विश्व आलोकित हो उठा।

सादा जीवन उच्च विचार ।
नहीं स्वयं का कभी प्रचार ।।
दीनबंधु थे दीनदयाल ।
हृदय सिंधु सा बड़ा विशाल ।।

पंडित दीनदयाल जी व्यक्ति नहीं सम्पूर्ण व्यक्तित्व थे। व्यक्तित्व तथा कृतित्व का अदभुत समन्वय देखना हो तो पंडित दीनदयाल जी का जीवन जाज्वल्यमान प्रतीक है। उन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में सदैव कर्म की श्रेष्ठता को प्रतिस्थापित किया। वे एक ऐसे व्यक्ति थे जो रिक्तता के समय आशा और विश्वास का ज्योति-स्तम्भ बनकर मार्गदर्शन का दायित्व सदा निभाते रहे।

मोहतम का सजगतम अविराम राही।
साधना भी रही जिसकी हृदयग्राही ।।
देवदुर्लभ प्रकृति संस्कृति का उपासक ।
'राष्ट्रधर्म' जगा बना उसका प्रकाशक ।।

संघर्षपूर्ण बाल्यकाल

1. पालन-पोषण
2. शिक्षा
3. बाल्यकाल : भावी जीवन का आधार
4. बालक दीनदयाल : कर्मठ युवक

पालन-पोषण

पंडित दीनदयाल जी का आविर्भाव विक्रम संवत् उन्नीस सौ तिहत्तर कृष्णपक्ष त्रयोदशी तदनुसार पच्चीस सितम्बर सन् उन्नीस सौ सोलह को हुआ था। जब पंडित दीनदयाल जी का जन्म हुआ तो सम्पूर्ण विश्व में भारत का, भारत में चन्द्रभान नगला का गौरव बढ़ गया था। इनका जन्म इनके नाना पंडित चुन्नीलाल शुक्ल जी के यहाँ हुआ था। इनके नाना ग्राम धनिकया रेलवे स्टेशन में स्टेशन मास्टर थे। इनके पिता जी का नाम श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय था जो कि जलेसर रोड रेलवे स्टेशन पर स्टेशन मास्टर थे। इनको अस्तित्व प्रदान करने वाली माता रामप्यारी देवी थीं। जब इनका जन्म हुआ तो परिवार के सभी लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए। धीरे-धीरे बालक खेलता खाता बढ़ने लगा। बालक का नाम 'दीनदयाल' और पुकारने का नाम 'दीना' रखा गया।

जब दीना लगभग दो वर्ष का हो गया तो इनकी माता ने एक नये पुत्र को जन्म दिया। इसका नाम 'शिवदयाल' या 'शीबू' रखा गया। अभी कुछ ही दिन बीते होंगे कि पंडित दीनदयाल जी के पिता जी की संदेहास्पद स्थिति में मृत्यु हो गई। पिता की मृत्यु का विछोह जैसे जैसे कम होने लगा वैसे ही आठ अगस्त उन्नीस सौ चौबीस का क्रूर दिन आया और उनकी माता जी भी उनको अकेला छोड़कर चल बसीं। बाल्यकाल में माता-पिता की स्नेह छाया से वंचित हो जाना सम्पूर्ण जीवन को जर्जर बना देता है। दुर्भाग्य की इस चोट से बिरले ही उबर पाते हैं। नन्हें बच्चे जब माता-पिता की थपकियाँ पा रहे हों, ऐसे में कोई एकाकी बालक सिसकियों को पीकर दुर्भाग्य को मुट्ठी में दबोचने का प्रयत्न करे तो निस्संदेह ही यह उसकी अपने प्रति कठोरता गिनी जायेगी।

सचमुच अपने प्रति कठोरता बरतना और कम में निर्वाह करने का मंत्र पंडित दीनदयाल जी ने बाल्यकाल में ग्रहण किया। उनके नाना श्री चुन्नीलाल शुक्ल ने उनकी शिक्षा के लिए उन्हें उनके मामा श्री रामधरण शुक्ल जी के यहाँ भेज दिया।

शिक्षा

पंडित दीनदयाल जी बाल्यकाल से ही अत्यधिक मेधावी थे। अपनी मेधा का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने कक्षा चतुर्थ में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उनकी इस सफलता पर उनके मामा श्री राधारमण जी अत्यन्त प्रसन्न हुए। तब गंगापुर सिटी विद्यालय में मात्र कक्षा चतुर्थ तक ही पढ़ाई होती थी। आगे की पढ़ाई के लिए उनके मामा श्री राधारमण शुक्ल ने उन्हें कोटा भेजा। वहाँ भी सफलता का क्रम जारी रखते हुए उन्हें कक्षा पंचम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम व नवम में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। उनके अध्यापक भी उनकी इस प्रतिभा से अत्यन्त प्रसन्न रहते थे।

उन्होंने हाईस्कूल की परीक्षा सीकर के कल्याण हाईस्कूल से दी। वहाँ उन्होंने सम्पूर्ण बोर्ड में प्रथम स्थान प्राप्त किया। फलस्वरूप महाराज सीकर ने उन्हें पुरस्कार के रूप में दस रुपये मासिक छात्रवृत्ति, एक स्वर्ण पदक, व दो सौ पचास रुपये प्रदान किये।

इंटरमीडिएट की परीक्षा उन्होंने पिलानी के एक श्रेष्ठ विद्यालय से दी। वहाँ भी उन्होंने सम्पूर्ण बोर्ड में प्रथम स्थान प्राप्त किया। फलस्वरूप बिरला जी ने उन्हें दस रुपये मासिक छात्रवृत्ति, एक स्वर्ण पदक व पुस्तकों आदि के लिए दो सौ पचास रुपये प्रदान किये। वास्तव में पंडित दीनदयाल जी सामान्य परिवार के थे परन्तु उनके कार्य असामान्य थे और सामान्य परिवार में जन्म लेकर असामान्य व्यक्तित्व धारण करना सामान्य कार्य नहीं है।

यद्यदाचरित श्रेष्ठः तत्तदेवेतरो जनाः।
सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥

पंडित दीनदयाल जी स्वयं के अतिरिक्त दूसरों के लिए भी चिन्तित रहते थे। उन्होंने इंटर में गणित विषय में कमजोर छात्रों का समूह बनाया और उसका नाम **जीरो एसोसियेशन** रखा। इस समूह के छात्रों की समस्याओं का समाधान वे स्वयं करते थे। इसका यह प्रभाव हुआ कि सभी छात्रों ने गणित विषय में अच्छे अंक प्राप्त किये। इस कार्य से दीनदयाल जी ने सिद्ध कर दिया था कि - **परोपकाराय सतां विभूतयः।**

एक बार पंडित दीनदयाल जी की बहन (सगी नहीं) बीमार पड़ गईं। तब दीनदयाल जी ने अपनी एम०ए० फाइनल की परीक्षा को त्यागकर बहन की सेवा को प्राथमिकता दी और सिद्ध कर दिया कि -

सेवाधर्मो परमगहवोयोगिनामपि अगम्यः।

बाल्यकाल : भावी जीवन का आधार

वास्तव में बाल्यकाल ही भावी जीवन का आधार होता है। यह देखना हो तो पंडित दीनदयाल जी का जीवन एक ज्वलंत उदाहरण है। विधाता ने उन्हें जन्म से ही विपत्तियों में ढकेलने के जाल रच रखे थे परन्तु उन्होंने कष्ट सहिष्णुता व धैर्य के बल पर निरन्तर प्रगति करने का ही संकल्प ले रखा था।

बाधाएँ कब बाँध सकी है, आगे बढ़ने वालों को।
विपदाएँ कब रोक सकी हैं, मरकर जीने वालों को।

पंडित दीनदयाल जी स्वयं के कार्य स्वयं करते थे। घर-परिवार में भी बड़ों के आदेश के बिना ही वे समस्त कार्य स्वयं कर लेते थे। वे बाल्यकाल से ही श्रमनिष्ठ थे अतः वह आगे भी कर्मठता का परिचय देते रहे।

एक बार पंडित जी को संपादकीय लेख लिखना था। विद्युत नहीं आ रही थी और रात्रि के बारह बज रहे थे। तब पंडित दीनदयाल जी ने कर्मशीलता का परिचय देते हुए स्वयं मसीन पर खड़े होकर संपादकीय लेख छापना प्रारम्भ कर दिया।

पंडित दीनदयाल जी अपने अतिरिक्त पर-चिंतन भी करते थे। वे सदा दूसरों की सेवा के लिए तत्पर रहते थे। वास्तव में यह अतिमानव दूसरों के हित चिंतन के लिए ही बना था।

परहित सरिस धरम नहीं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अधमाई॥

बालक दीनदयाल : कर्मठ युवक

एकात्ममानववाद के उद्घोषक, राष्ट्रवादी चिंतन के उन्नायक, युगद्रष्टा, महामानव पंडित दीनदयालय भारत माता के सचे सपूत थे। उन्होंने कार्यों से समाज को नई दिशा प्रदान की थी। उन्होंने चरैवेति-चरैवेति के सिद्धान्त को बताते हुए कहा था कि – ''भविष्य से डरिये मत उसे सँवारने का प्रयत्न करो। सँजोए सपनों को सँवारो और कल्पना को कर्म में गढ़ो।'' यदि हमें कृत युग का निर्माण करना हो तो इस आर्ष वचन को याद रखना होगा –

कलिः शयानो भवति संत्रिहानस्तुद्वापरः।
उत्तिष्ठं स्त्रेतामाप्रोति कृतं संपद्यते चरन्॥

पं० दीनदयाल जी कर्मठता एवं कर्मशीलता की प्रतिमूर्ति थे। वे सारे कार्य स्वयं करते थे और एक कर्मठ संघ प्रचारक के रूप में उभर कर सामने आये।

कर्ममय जीवन सदा उपकार की वाणी रहा था।
जब कभी भी मौन टूटा तत्त्व ही तुमने कहा था॥
साधना के दीप बाती जगमगाती है तुम्हारी।
यज्ञ की समिधा बनेंगे शपथ है यह अब हमारी॥

वह काली रात

भारतीय प्रजातंत्र की राजनीति का उन्नत विचारक जो कि महान आशाएँ लेकर उभर रहा था उसे कुछ सत्ता लोलुप राजनेताओं द्वारा षड्यंत्र रचकर मार डाला गया।

फिर पड़ा काल का क्रूर हाथ, तुम चिर निद्रा में लीन हुए।
किस वज्र हृदय से सहन करे, आश्चर्य क्षुब्ध श्रीहीन हुए॥

समाहार

दीपक चाहे बड़ा हो या छोटा जब सूर्य उसे अपना आलोकवाही कर्तव्य सौंपकर चुपचाप डूब जाता है तो जल उठना ही उसकी शपथ है और यही उसका जाने वाले को प्रणाम है।

तुम यती तपस्वी कर्मव्रती, वैरागी त्यागी आप्तकाम।
हे युग द्रष्टा, हे युग निर्माता, स्वीकार करो युग का प्रणाम॥ ✶

पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक निबन्ध प्रतियोगिता में किशोर वर्ग में प्रथम स्थान

"पं० दीनदयाल उपाध्याय का छात्र जीवन : एक प्रेरणा"

—अखिल मिश्र
दशम 'क'

"हम शिक्षा उसको कहते हैं जो,
नर में व्यक्तित्व विधान करे।
मानव कर दे दानव को,
मानव को देव समान करे ॥"

भारत में किसी प्रकार का सुधार या उन्नति की चेष्टा करने के पहले धर्म-प्रचार आवश्यक है। भारत को समाजवादी या राजनीतिक विचारों से प्लावित करने के पहले आवश्यक है कि उसमें आध्यात्मिक विचारों की बाढ़ ला दी जाए। अस्तु इन आध्यात्मिक विचारों के सामन्यविक प्रसार के लिए जिस आधार की सर्वाधिक आवश्यकता है, वह शिक्षा है। यदि सम्पूर्ण भारतीय समाज इस शिक्षा के वास्तविक रूप का साक्षात्कार कर ग्रहण करने का प्रयास करेगा तो निस्संदेह भारत किंवा विश्वगुरु के पद पर आसीन रहने वाला चिर प्रतिष्ठित आर्यावर्त तभी अपना भासमान स्वरूप प्राप्त करेगा।

"अखिल विश्व के किसी भी राष्ट्र की गौरवशालिता, वैभवशालिता उस राष्ट्र विशेष में रहने वाली प्रत्येक जन इकाई के ज्ञान, विवेक आदि मानवतावादी गुणों की नींव पर आधारित इमारत होती है। उपर्युक्त वर्णित मानव के गुणों के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा अति आवश्यक है अपितु शिक्षा से भी अधिक अनिवार्य है आदर्श छात्र अथवा शैक्षिक जीवन का सफलतापूर्वक वहन करना।"

जो व्यक्ति शैक्षिक जीवन के प्रथम चरण से ही ज्ञानार्जन ऐश्वर्यवान नौकरशाही की लोलुपता को अनदेखा कर सकता है, वही युगान्तकारी राष्ट्रपुरुष बनता है, दीनदयाल बनता है जिन्होंने शिक्षार्थी के शैक्षिक जीवन का ऐसा शाश्वत रूप भारतीय जनमानस के समक्ष प्रस्तुत किया कि आज उनके आदर्श छात्र जीवन के विशिष्ट गुणों, वर्तमान काल के छात्रों द्वारा स्व के पथ का पाथेय बनाने का प्रयास किया जा रहा है। अतएव पं० दीनदयाल जी के जीवन का प्रत्येक क्षण तथा उनके द्वारा सम्पादित प्रत्येक कृत्य आज भारत के भावी सूत्रधारों को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त है। अतः मैं प्रयासपूर्वक उनके तपस्वी जीवन अर्थात् छात्र जीवन की कुछ घटनाओं तथा प्रसंगों पर प्रकाश डाल रहा हूँ।

जन्म परिचय - पं० दीनदयाल जी का जन्म आश्विन मास विक्रमी संवत् 1973 में कृष्णपक्ष की त्रयोदशी तदनुसार **25 सितम्बर सन् 1916 ई० को** मथुरा के **'धनकिया'** नामक ग्राम में हुआ था। दीनदयाल जी को जन्म देने वाली महान् पवित्रा **'श्रीमती रामप्यारी'** थीं। उनके पिता **'श्री भगवती प्रसाद'** थे जो स्टेशन मास्टर थे। शैशव में ही माता-पिता के गुजर जाने के बाद उनका जीवन-यापन मामा **'श्री राधारमण शुक्ल'** के यहाँ होने लगा। सचमुच अपने प्रति कठोरता बरतने और कर्म में ध्यान एकाग्र करने का मंत्र दीनदयाल जी ने बचपन में ही ग्रहण कर लिया था।

आपदाओं की छाँह में प्रारम्भिक शिक्षा - एक ओर परिवारीजनों के निरन्तर बिछोह ने कलियुग के भावी राम के अधरों की मुस्कान और तारुण्य का सुख छीन लिया था तो दूसरी ओर आस-पास का वातावरण एवं देशकाल की परिस्थितियाँ उनके ह्रदय का मंथन कर रही थीं अतएव शैशवकाल से ही उनमें अपने ह्रदय में दबे मर्मांतक दुःख को विस्मृत कर अपने जन्म को सार्थक बनाने हेतु उत्साह का संचार हो रहा था।

"शैशव से ही विष पीकर मस्त मर्दे दीं,
साधनाभाव जिसके पथ से मुख मोड़ चले।
दुविधाएँ अपनी असफलता पर रोती थीं,
उस मुक्तिमत्त साधना शक्ति को नमस्कार ॥"

बाल्यकाल से ही दीनदयाल जी कर्तव्यविमुख नहीं थे। अनियमितता, आलस्य तथा मिथ्या का उनके जीवन में कोई स्थान न था। अध्यापक और परिचित उनकी विलक्षण योग्यता, प्रतिभा की प्रशंसा करते न अघाते। परन्तु वे अपने घरेलू जीवन से सुखी नहीं थे, मामाजी उनकी ओर से पूर्णतया संतुष्ट नहीं रहे।

पाँच मार्च उन्नीस सौ सत्ताईस को कक्षा चतुर्थ में प्रथम स्थान प्राप्त करने के पश्चात् मेधा की साक्षात् प्रतिमूर्ति को आगे की पढ़ाई के लिए कोटा भेज दिया गया क्योंकि गंगापुर में पढ़ाई जैसा माहौल नहीं था। कोटा में भी सर्वप्रथम रहे। कक्षा अष्टम तथा नवम की पढ़ाई उन्होंने राजगढ़ से परीक्षा देकर प्रथम स्थान से की।

सरस्वती जी के वरद् पुत्र - ''पं० दीनदयाल उपाध्याय बहुत मेधावी थे। एक बार जब राजगढ़ के स्कूल में दशम कक्षा के विद्यार्थी को एक सवाल नहीं आया और न ही उसके विषयाचार्य सवाल को बताने की स्थिति में थे। अतः बगल में नवम कक्षा में पढ़ रहे दीनदयाल जी को बुलाया गया क्योंकि उनकी मेधा का कायल पूरा विद्यालय था, उन्होंने उस सवाल को तुरन्त हल कर दिया और विनम्रतापूर्वक चले गए।''

पण्डित जी ने सन् उन्नीस सौ चौंतीस में मैट्रिक की परीक्षा सीकर से दी। सम्पूर्ण बोर्ड में उनका प्रथम स्थान रहा। महाराज सीकर ने उनकी इस अद्भुत उपलब्धि पर उन्हें दस रुपए मासिक छात्रवृत्ति, एक स्वर्ण पदक तथा अन्यान्य खर्चों के लिए दो सौ पचास रुपये पुरस्कार स्वरूप प्रदान किए। तत्पश्चात् अजमेर बोर्ड ने भी उन्हें एक स्वर्ण पदक प्रदान किया। सन् उन्नीस सौ सैंतीस में इण्टर की परीक्षा दीनदयाल जी ने 'बिरला इण्टर कॉलेज' से दी। यहाँ भी सर्वप्रथम रहे, उनकी इस उपलब्धि पर उन्हें महाराज बिरला ने पुरस्कृत किया। अधोलिखित काव्यकृति उनकी उपरोक्त उपलब्धियों पर सटीक बैठती है -

''हृदय सरल, संकल्प दृढ़, मेधा मंडित भाल।
सुरसरि सम सरसित सदा पण्डित दीनदयाल॥''

उन्होंने बी०ए० की परीक्षा कानपुर नवाबगंज स्थित वी०एस०एस०डी० कॉलेज से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। एम०ए० का प्रथम वर्ष उन्होंने आगरा के सेण्ट कॉलेज से अंग्रेजी साहित्य में किया। एम०ए० का द्वितीय वर्ष वह न कर सके क्योंकि उनकी बहन (सगी नहीं) का स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण पहाड़ों पर निसर्गोपचार हेतु ले जाना पड़ा।

समस्त विषयों पर समान अधिकार - चूँकि दीनदयाल जी मानव के सभी गुणों की खान थे। अध्ययन के दौरान उनका पाठ्य तथा पाठ्येतर समस्त विषयों पर समान अधिकार था। इसलिए उनके छात्र जीवन की एक प्रेरक घटना इस प्रकार है ''जब दीनदयाल जी हाईस्कूल बोर्ड की परीक्षा दे रहे थे तो उनके साथ उनके मामा के लड़के द्वारा मैट्रिक की परीक्षा दी जा रही थी। एक बार उसने दीनदयाल जी से पूछा कि दीनदयाल विषय तैयार हो गया? दीनदयाल जी ने घोर आश्चर्य के साथ पूछा, ''किस विषय की परीक्षा है आज?'' तो मामा के लड़के ने कहा, ''इतना भी नहीं मालूम, भूगोल की परीक्षा है आज। अब दीनदयाल जी बिना किसी चिन्ता या तनाव के कहते हैं कि, ''कुछ रंगीन पेंसिलें ले लेता हूँ।' उपर्युक्त अंश से यह स्पष्ट होता है कि पण्डित जी को प्रत्येक विषय पर इतना अधिकार था कि बिना फेरे उसकी परीक्षा दे सकते थे। वे कार्य के होने के समय को महत्व न देकर किसी समय में किए गए अधिकतम कार्य को महत्व देते थे। अंग्रेजी के किसी लेखक ने लिखा भी है - "Time of work is not important. More important is how much work. We have done in a given time.

जागरुक वृत्ति - जो व्यक्ति या व्यक्ति समूह अर्थात् समाज अपने आस-पास परितः घटित हो रही घटनाओं तथा किसी विषय विशेष को जानने या पहचानने का प्रयास करता है, वही चिंतनशील, संवेदनशील व्यक्ति के आचरण को प्रकट कर सकता है। दीनदयाल जी में जो भी गुण बचपन में बीज के रूप में थे बड़े होने पर वे ही पेड़ बनकर और पुष्ट हो गए।

दीनदयाल जी किसी विषय को शब्दशः कण्ठस्थ न करके जिज्ञासु भाव से परिपूर्ण होकर उसकी तह में गोते लगाते थे। उनके जीवन की प्रेरक घटना जो जिज्ञासा की प्रकटीकरण करती है। ''जब मेधा के प्रत्यक्ष प्रमाण दीनदयाल जी नवम कक्षा में थे तो परीक्षाओं के समय में प्रश्न-पत्र में जो प्रश्न आया, उन्होंने उसे कक्षा में हल कराई गई विधि द्वारा हल न करके द्वितीय विधि से हल कर दिया और उनकी यह विधि सही थी, यह देखकर उक्त विषय के विषयाचार्य ने उनसे पूछा कि, ''तुमने द्वितीय विधि कहाँ से खोजी।' इस पर दीनदयाल जी ने उत्तर दिया कि, ''प्रश्न को हल करने की प्रथम विधि तो कक्षा में बताई गई थी। मैंने सोचा यह प्रश्न द्वितीय विधि से भी लग जाएगा। मैंने प्रयत्न किया और प्रश्न हल हो गया।''

स्वाध्याय का गुण - स्वाध्याय मनुष्ट का स्वयं का अध्यापन है। लिपि-ज्ञान स्वाध्याय के लिए बहुत आवश्यक है। पठन, मनन और चिंतन के सहारे मनुष्य ज्ञान को आत्मगम्य करता है। बिना स्वाध्याय के न तो ज्ञान जो प्राप्त हुआ है टिकता है और न बढ़ता है। दीनदयाल जी में अन्य गुणों की तरह इस गुण की भी पर्याप्तता थी।

जीरो एसोसिएशन का गठन- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः समाज में रहकर उसे अन्य प्राणियों के प्रति कुछ दायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है। इनमें परहित अथवा परोपकार सर्वोपरि है। अस्तु कहा गया है -

''परहित बस जिनके मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥''

दीनदयाल जी एक सहृदयी व्यक्ति थे। वे अपने साथ-साथ सम्पूर्ण समाज को लेकर चलने का प्रयास करते थे। जब वे इण्टर की पढ़ाई कर रहे थे तो मासिक परीक्षाओं में उनके कई सहपाठियों को शून्य अंक मिले। चूँकि दीनदयाल जी ने कभी अपने स्वार्थ के सन्दर्भ में सोचा नहीं था। अतः उन्होंने ऐसे छात्रों को एक संघ बनाया जिसे **'जीरो एसोशिएसन'** का नाम दिया गया। अगली परीक्षाओं के दौरान इन्हीं छात्रों ने गणित विषय में 80-85 अंक प्राप्त किए, ये दीनदयाल जी की मेहनत का परिणाम था जिन्होंने कमजोर छात्रों को पढ़ाकर इस योग्य बनाया। जब कभी उन्हें रात में देर तक पढ़ना होता था वे कोने में लालटेन जलाकर पढ़ते थे ताकि उनके साथियों की नींद में व्यवधान न पहुँचे।

परिस्थितियों से जूझने की क्षमता

''जितनी तपन सही स्वर्ण ने, वह उतना द्युतिमान हो गया,
जितनी पीर पचाई जिसने, वह उतना इन्सान बन गया।
जन-जन का पथ प्रशस्त कर, दीनदयाल भगवान हो गया।''

जो स्वर्ण जितना अग्नि में तपता है उसी अनुपात में उसमें चमक आती है। उसी तरह से जो मनुष्य जितना अधिक संघर्षों और पीड़ाओं से सीखता है, वह उतना ही अधिक निखरता है। दीनदयाल जी का पूरा जीवन परिस्थितियों से सफलतापूर्वक जूझने का सर्वोत्तम उदाहरण है, बचपन में जब बच्चे शैशव की मनोहारी स्तिति में किलकारियाँ ले रहे थे तब दीनदयाल जी के मन में अपने देशकाल की परिस्थितियों का मंथन हो रहा था। यह भी उनका देवप्रदत्त विशिष्ट गुण था जो वर्तमान छात्रों के छात्र जीवन में कहीं देखने को नहीं मिलता। यदि हम दीनदयाल जी के गुणों को रंचमात्र भी ग्रहण कर लेंगे तो हमारा छात्र जीवन एक संयमित तथा श्रेष्ठ जीवन होगा।

समाहार - शिल्पी पत्थर अथवा मिट्टी में से मूर्ति उत्पन्न नहीं कर सकता, वह तो उसमें है ही किन्तु छिपी हुई है। उसे प्रगट कर देने को ही कला कहते हैं, अध्ययन के क्षेत्र में यही कला शिक्षा हो जाती है, जिसके द्वारा एक शिक्षार्थी के अन्तर्निहित गुण संज्ञान में आते हैं। दीनदयाल जी में निहित प्रतिभा को उभारने में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इस शिक्षा से तात्पर्य मात्र पुस्तकीय ज्ञान से न होकर जीवन के सभी मूल्यों का स्पष्ट बोध कराने वाली कुञ्जी से है।

''वह व्यक्ति जो एक यती है,
वही विद्या ग्रहण करने का;
अधिकारी विद्यार्थी है।''

चूँकि व्यक्ति से समाज बनता है तथा समाज से राष्ट्र बनता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित तथा सभ्य होगा तो इसका प्रभाव किसी न किसी रूप में राष्ट्र पर पड़ेगा। पं० दीनदयाल जी के शैक्षिक जीवन किसी भी मनुज के लिए प्रेरणादायी स्रोत हो सकता है।

आइये ! हम सभी अखण्ड भारत की संकल्पना करने वाले, पण्डित जी के छात्र जीवन के प्रत्येक क्षण को अपने राष्ट्र-निर्माण रूपी ध्येय के प्राप्तव्य का साधन मानते हुए, पण्डित जी के सिद्धान्तों तथा उनके द्वारा स्थापित आदर्शों को अंगीकार करते हुए धीरे-धीरे ही सही परन्तु निरन्तर अपने भारत को पुनः विश्व गुरु के पद पर आसीन करें।

चरैवेति ! चरैवेति !

''मृत्यु शाम है, यों न ढलते रहिए,
जिंदगी भोर है, सूरज से निकलते रहिए,
एक पाँव पर ठहरेंगे तो थक जायेंगे।
धीरे-धीरे ही सही राह पर चलते रहिए।''

*

पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक निबन्ध प्रतियोगिता में किशोर वर्ग में प्रथम स्थान

पण्डित जी का छात्र जीवन : एक प्रेरणा

—निखिल श्रीवास्तव

दशम 'क'

रूपरेखा :- (1) प्रस्तावना, (2) पण्डित दीनदयाल जी के छात्र जीवन का आरम्भ, (3) पण्डित जी का छात्र जीवन, (4) पण्डित जी के छात्र जीवन की प्रमुख विशेषताएँ, (5) पण्डित जी का छात्र जीवन हमारे लिए प्रेरणा क्यों है? (6) समाहार

तिल-तिल कर जलते-जलते वह दाह बन गया
पथ पर चलते-चलते ही वह राह बन गया
ऐसा था वह भक्त स्वयं भगवान बन गया
कुम्भकार की कृति होकर निर्माण बन गया ॥

रात्रि के 2 बजे हैं। यह वह समय है जब सम्पूर्ण चराचर जगत निशा की तममयी चादर ओढ़कर अपनी शारीरिक तथा मानसिक क्लांतता को दूर करने के उपक्रम में रत है। परन्तु यह क्या ? यह कौन सरस्वती का घोर उपासक है जो रात्रि के इस प्रहर में चराचर जगत से भिन्न, परिवेश से निष्प्रभावित अपनी सरस्वती साधना में लगा हुआ है ? कौन है यह मनस्वी तपस्वी जो अपनी शारीरिक सुखानुभूतियों और सुविधाओं को लालटेन की अग्नि में होम कर उसके मद्धम प्रकाश में अध्ययन कर रहा है ? उत्तर है - पं० दीनदयाल उपाध्याय। एक ऐसा व्यक्तित्व जिसने अपनी अलौकिक प्रतिभा, अनवरत साधना और प्रगत्म प्रज्ञा के द्वारा सम्पूर्ण संसार को चमत्कृत कर दिया। जो साधना में उत्पन्न हुआ, साधना में गतिमान रहा और साधना में ही तिरोहित हो गया।

रहे कर्म पर्याय धर्मावलम्बी गिरा ज्ञान के साधनामय तपस्वी,
विमल तन, गहन मन प्रखर दिव्य मेधा तपः पूत जीवन यशस्वी मनस्वी ॥

प्रस्तावना :- युगपुरुष पं० दीनदयाल उपाध्याय जी का सम्पूर्ण जीवन उनकी अविरत साधना, कर्ममयता और मेधा का मूक व्याख्यान है। उनका सम्पूर्ण जीवन कर्ममय, संघर्षमय और त्यागमय रहा। जीवन के हर क्षेत्र में अपना सर्वस्व समर्पित कर सर्वोच्चता प्राप्त करने की जो अद्भुत प्रतिभा दीनदयाल जी में थी शायद ही किसी में हो। उनकी इसी प्रतिभा ने उनके जीवन को आदर्शत्व से विभूषित कर दिया। उनकी जीवन शैली, व्यक्तित्व और कृतित्व सब कुछ आदर्श है इसीलिए उनका छात्र जीवन भी आधुनिक पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत है। आइए देखें कि आखिर क्यों पंडित जी का जीवन एक प्रेरणा है :-

2. पंडित जी के छात्र जीवन का आरम्भ :- संघर्ष और विधाता की क्रूरता दोनों का ही सम्बन्ध दीनदयाल जी के साथ जन्मतः था। तीन वर्ष की अल्पायु में पिता भगवतीप्रसाद उपाध्याय के देहान्त और 7 वर्ष की आयु में माता के वियोग ने पण्डित दीनदयाल जी के जीवन को दुःखपूरित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी और छोड़ता भी कैसे, विधाता की क्रूरता का साथ जो मिला था उसको।

7 वर्ष की आयु तक पारिवारिक उलझनों के कारण दीनदयाल जी की शिक्षा का कोई स्थायी प्रबन्ध नहीं हो पाया अतः उनके नाना पं० चुन्नीलाल शुक्ल ने उन्हें उनके मामा राधारमण शुक्ल के पास गंगापुर भेज दिया जहाँ वे प्राइमरी विद्यालय में प्रविष्ट हुए और उनकी शिक्षा का क्रम आरम्भ हुआ।

3. दीनदयाल जी का छात्र जीवन :- गंगापुर में प्राइमरी विद्यालय में सन् 1925 ई० में पं० दीनदयाल जी का छात्र जीवन आरम्भ हुआ और प्रारम्भ से ही उन्होंने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय देते हुए सभी कक्षाओं में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उनके मामा उनकी इस विलक्षण मेधा से अत्यधिक प्रसन्न होते थे। कालक्रमानुसार दीनदयाल जी ने चतुर्थ कक्षा उत्तीर्ण की। उस समय तक गंगापुर में केवल कक्षा चार तक की पढ़ाई ही होती थी अतः आगे की

पढ़ाई के लिए उन्हें कोटा (राजस्थान) भेजा गया। 1928-29 ई० में दीनदयाल जी ने कोटा में पञ्चम कक्षा में प्रवेश लिया और वहीं (कोटा में) उन्होंने अगले तीन वर्षों तक अध्ययन किया। यहाँ भी वे कक्षा में सर्वप्रथम आते रहे।

तत्पश्चात् सन् 1932 ई० में दीनदयाल जी अपनी मामी सुभद्रा के साथ राजगढ़ चले गए। राजगढ़ में 'राजगढ़ हाई स्कूल' में उन्होंने अष्टम तथा नवम कक्षा प्रथम स्थान प्राप्त करते हुए उत्तीर्ण की।

दीनदयाल जी की बुद्धि इतनी अधिक प्रखर थी कि जब कक्षा 10 के किसी बालक को कोई सवाल नहीं आता तो कक्षा 9 से इनको बुलाया जाता था और ये निःसंकोच प्रश्न हल कर देते थे। इनकी विलक्षण मेधा से इनके गुरुजन सदैव प्रसन्न रहते थे।

दीनदयाल जी इस बात का अत्यधिक ख्याल रखते थे कि किसी को भी उनके कारण परेशानी न उठानी पड़े। उन दिनों उनके ममेरे भाई बनवारीलाल शुक्ल जो उनके सहपाठी थे, भी उनके साथ रहते थे। दोनों के बीच एक ही पुस्तक रहती थी। बनवारीलाल की खुशी के लिए दीनदयाल जी प्रायः तभी पुस्तक पढ़ते जब उनके ममेरे भाई को उनकी आवश्यकता न हो।

सरस्वती देवी दीनदयाल जी पर सदैव प्रसन्न रहती और लक्ष्मी देवी सदैव रुष्ट। इनके अध्ययन का समय प्रायः रात्रि के 10 बजे के पश्चात् ही प्रारम्भ होता था। दूसरे लोगों की सुविधा के लिए ये एक कोने में बैठकर लाइट की बजाय लालटेन का प्रयोग करते थे। ये प्रातःकाल चार बजे तक पढ़ते और फिर सो जाते। आठ बजे उठकर ये पुनः अपनी दिनचर्या में रत हो जाते। इनकी विलक्षण प्रतिभा, अद्वितीय मेधा एवं सेवापरायणता सबको मंत्रमुग्ध करती रही।

सन् 1934 ई० में मामा जी का राजगढ़ से सीकर स्थानान्तरण हो जाने के कारण इन्होंने सीकर के कल्याण हाई स्कूल में प्रवेश लिया। राजगढ़ के अध्यापकों को इनके जाने का बहुत दुःख हुआ क्योंकि उनके विद्यालय का ऐसा छात्र बाहर जा रहा था जो विद्यालय को गौरव प्रदान करने वाला था।

1934 ई० में सीकर में दशम कक्षा में प्रविष्ट दीनदयाल जी का साथ सफलता ने प्रकारान्तर से सफळता का दीनदयाल जी ने साथ नहीं छोड़ा। यहाँ भी अपनी योग्यता का परचम लहराते हुए उन्होंने विद्यालय में ही नहीं अपितु समस्त अजमेर बोर्ड में प्रथम स्थान प्राप्त किया। प्रत्येक विषय में उन्हें विशेष अंक प्राप्त हुए और उनकी अंक तालिका को बहुत वर्षों तक बोर्ड ने सुरक्षित रखा।

महाराजा सीकर ने उन्हें उनकी इस प्रतिभा से प्रभावित होकर 10 रु० मासिक छात्रवृत्ति, एक स्वर्ण पदक और प्रवेश तथा खर्चे के लिए 250 रु० पुरस्कार स्वरूप दिए। इतने अंक आज तक समस्त अजमेर बोर्ड में किसी को भी प्राप्त नहीं हुए थे।

इसके पश्चात् 1935 ई० दीनदयाल जी पिलानी गए और वहाँ उन्होंने 1936 ई० में इण्टरमीडिएट की प्रथम वर्ष की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। सन् 1937 ई० में वे इण्टरमीडिएट बोर्ड परीक्षा में बैठे और यहाँ भी उन्होंने पूर्ववत् समस्त बोर्ड में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इस पर घनशायामदास बिरला जी ने भी उन्हें 10 रु० मासिक छात्रवृत्ति, एक स्वर्णपदक और आरम्भिक खर्चों के लिए 250 रु० पुरस्कार स्वरूप दिए। इतने अंक आज तक बिरला कॉलेज में किसी ने भी प्राप्त नहीं किये थे।

इसके पश्चात् दीनदयाल जी बी०ए० की पढ़ाई के लिए कानपुर आए और यहाँ पर बी०एस०एस०डी० कालेज में प्रविष्ट हुए। 1937 ई० में बलवन्त महाशिन्दे के माध्यम से दीनदयाल जी संघ से सम्बद्ध हुए और उसके बाद संघ कार्यों में भी रुचि लेने लगे। 1939 ई० में उन्होंने बी०ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

इसके पश्चात् 1939 में पंडित जी ने आगरा के सेण्ट जॉन्स कॉलेज में एम०ए० अंग्रेजी साहित्य में प्रवेश लिया और प्रथम वर्ष की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। दुर्भाग्यवश द्वितीय वर्ष में उनकी ममेरी बहन रामादेवी अस्वस्थ हो गयी और दीनदयाल जी को उन्हें पहाड़ों पर नैसर्गिकोपचार हेतु ले जाना पड़ा। अतः उनकी शिक्षा का क्रम यहीं पर अवरुद्ध हो गया।

4. दीनदयाल जी के छात्र जीवन की प्रमुख विशेषताएँ

(i) सेवापरायणता - सन् 1927 में जब दीनदयाल जी मात्र 11 वर्ष के थे तो उनके मामा को क्षय रोग हो गया। ऐसी स्थिति में दीनदयाल जी ने उनकी सर्वप्रकारेण सेवा की। यद्यपि यह उनके लिए परीक्षाओं की तैयारी का समय था फिर भी उन्होंने सेवा से अपने को पीछे नहीं हटाया।

(ii) अहं भाव का अभाव - दीनदयाल जी को जीवन पर्यन्त अहंकार छू भी न सका। विलक्षण मेधा और अद्वितीय प्रतिभा के बावजूद उन्होंने सभी को सरलता से सहयोग किया।

अपनी कक्षा के कमजोर छात्रों का सहयोग करने के लिए उन्होंने एक संगठन बनाया, जिसका नाम उन्होंने 'जीरो एसोसियेशन' रखा। इससे उनके मित्रों को अत्यधिक लाभ मिला।

हृदय सरल संकल्प दृढ़, कर्म निरत आचार।
किया सभी से सर्वदा, अपनों सा व्यवहार ॥

सरलता : दीनदयाल जी का जीवन सारल्य का मूर्त रूप है। राजगढ़ के पढ़ते समय इनके विद्यालय में पगड़ी बाँध कर आने का प्रतिबन्ध था। अन्य विद्यार्थी कुल्ले वाली पगड़ी बाँधते थे परन्तु दीनदयाल जी साधारण रूप से पगड़ी बाँधते थे अतः उनकी पगड़ी खुल जाती थी। फिर भी इनके साथी सादर इनसे कह देते कि दीनदयाल तुम्हारी पगड़ी खुल गयी है और ये उसे बाँध लेते थे।

दीनदयाल जी ने कभी भी अपनी प्रशंसा करने का प्रयास नहीं किया। रहीम का यह दोहा उन पर अक्षरशः चरितार्थ होता है -

बड़ौ बड़ाई न करैं, बड़ौ न बोलै बोल।
रहिमन हीरा कब कहै, लाख टका मेरो मोल ॥

(5) दीनदयाल जी का छात्र जीवन हमारे लिए प्रेरणा क्यों है ?

दीनदयाल जी का जीवन उनकी अविरल साधना, संघर्ष और कर्ममयता का जीवन्त रूप है। जीवन के पग-पग पर संघर्षों का सामना करते हुए उन्होंने जिस प्रकार श्रेष्ठता के आयामों को स्पर्श किया है, वह श्लाघ्य है। दूसरों की सेवा कर, निःस्वार्थ होकर, संघर्षों और कठिन परिस्थिति में श्रेष्ठता कैसे प्राप्त की जाती है ? दीनदयाल जी का जीवन इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर है। उनकी सेवापरायणता, स्वार्थपरता, प्रगत्य प्रज्ञा और कर्मनिष्ठा उनके जीवन को आदर्श बनाती है।

इन सभी गुणों के सम्मिश्रण से दीनदयाल जी का छात्र जीवन हमारे लिए एक प्रेरणास्त्रोत बन जाता है। हर विद्यार्थी के लिए उनका जीवन एक आदर्श और प्रेरणादायी जीवन है क्योंकि दीनदयाल जी ने उपदेशों के माध्यम से अपनी प्रकाण्डता सिद्ध करने का प्रयास नहीं किया है अपितु समाज के समक्ष वैसा आदर्श आचरण प्रस्तुत कर उदाहरण दिया है। उनकी जीवन शैली, व्यक्तित्व, कृतित्व सब कुछ एक विद्यार्थी के लिए अनुकरणीय है क्योंकि जिन परिस्थितियों में दीनदयाल जी ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है संभवतः ही किसी अन्य व्यक्ति या महापुरुष के जीवन वृत्त में मिले।

यद्यदाचरित श्रेष्ठः तत्तदेव इतरः जनः।
सः यत् प्रमाणं कुरुते, लोकस्तदनुवर्तते ॥

समाहार :- दीनदयाल जी के उपरिलिखित सभी गुणों एवं शैक्षिक उपलब्धियों को देखकर प्रत्येक विद्यार्थी के मन में वैसा ही बनने की चाह उत्पन्न हो जाती है। जन्मतः नहीं अपितु कर्मतः महान् बनने की सीख जो दीनदयाल जी के छात्र जीवन से मिलती है आधुनिक पीढ़ी का पाथेय है।

अन्त में निष्कर्ष रूप में यही कहूँगा कि दीनदयाल जी के छात्र जीवन में समाज के हर वर्ग के लिए एक सीख है। वे अपने कृतित्व के द्वारा ही युग-युगान्तर तक हमारे साथ बने रहेंगे।

अमर थे अमर हो अमर ही रहोगे
अमर ज्ञानमय यज्ञ के होम से तुम
यशः काय पर्याय देवत्व के, फिर
उठो व्योम में जगमगो सोम से तुम ॥

अन्त में परमपिता परमात्मा से यही प्रार्थना करूँगा कि वह फिर अपने उस साँचे को बना लें, जिसमें ऐसे कोमल कठिन चरित्र ढलते थे।

★

पं० दीनदयाल उपाध्याय स्मारक निबन्ध प्रतियोगिता में तरुण वर्ग में प्रथम स्थान

जनसंघ के मूल विचारक : पं० दीनदयाल उपाध्याय

—आशीष कुमार तिवारी

एकादश 'क'

कई बार गहरे प्रवाह की गति का भास दूर से देखने से नहीं हो पाता। यदि प्रवाह में कोई फूल या अन्य वस्तु बहती चली आए तो उसके सहारे दृष्टि गति का भान सरलता से कर लेती है। इसी भाँति संस्थाओं और आन्दोलनों में कई व्यक्ति ऐसे होते हैं, जिनके माध्यम से उनके सूक्ष्म विकास व परिवर्तनों को तथा उनके उतार-चढ़ाव मोड़ और गति को सरलता से समझा जा सकता है। पं० दीनदयाल जी का जीवन भी जनसंघ के विचार प्रवाह में उसी पुष्प की भाँति है जो प्रवाह की गति, मोड़ और उतार-चढ़ाव को दिग्दर्शित करता है। पं० दीनदयाल जी केवल गति दर्शाने वाले पुष्प ही नहीं वरन् जनसंघ को गति और रूप प्रदान करने वाली शक्ति थे। जनसंघ के सिद्धान्तों व नीतियों का कोई भी अंग ऐसा नहीं दीखता जो उनके प्रभाव से अछूता हो। इसका अर्थ यह नहीं है कि विचारों के विकास में अन्य साथियों का सहयोग नहीं था। फिर भी यह सत्य है कि उनके समय में निर्धारित कोई भी बात ऐसी नहीं थी जिसके रूप देने में उनका हाथ या सहमति न रही हो। यह कहना पूर्णतः सत्य होगा कि पं० दीनदयाल जी ने जनसंघ की विचारशैली को जन्म दिया, विभिन्न तात्कालिक समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण और रुख को शनैः-शनैः सूत्रबद्ध कर मौलिक चिन्तन की पृष्ठभूमि और शास्त्रीय धरातल पर खड़ा किया।

उनके चिंतन में एक ऐसी मौलिकता है, जो भारतीय इतिहास, परम्परा, राजनीति व भारतीय अर्थनीति से प्रस्फुरित है। यह आधुनिक स्थितियों और आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ दिशाओं का निर्देशन करती है। उनके चिन्तन का प्रेरणा बिन्दु भारत का वह निर्धन, अनिकेत और रूढ़ियों से असमर्थ नागरिक है, जिसने काल और हर प्रकार के विदेशी आक्रमणों के थपेड़ों के बीच भारत के 'स्व' और 'स्वाभिमान' को अपने निर्धन, दुर्बल, शोषित शरीर में जीवित रखा है। पंडित जी की प्रेरणा यह थी कि इस दरिद्रनारायण की आर्थिक शैक्षणिक और मनोभाविक रिक्तिताओं को भर उसे आधुनिक परिस्थितियों से परिचित कराने में देश का कल्याण और गौरव निहित है। दल के मूल चिन्तन में इस दृष्टिकोण का समावेश उन्हीं की देन है।

दल के जन्म के प्रारम्भ में कुछ वर्षों तक डा० मुकर्जी को छोड़कर ऐसा कोई और राजनीतिक नेता नहीं था जिसकी देशव्यापी मान्यता हो। जनसंघ के वर्तमान नेता, जिनमेंसे कई देश के राजनीतिज्ञों की प्रथम पंक्ति में खड़े हैं, उस समय सामान्य कार्यकर्ता थे। इस कारण दल में ऐसे व्यक्ति प्रमुख स्थानों पर लिये गये थे, जिनकी किसी न किसी कारण अपने क्षेत्र में मान्यता थी। उनमें से कई बड़े जमींदार, धनिक और व्यापारी भी थे। मूल राजनीतिक कार्यकर्ता दल की दूसरी या तीसरी पंक्ति में थे। स्वतन्त्रता के पश्चात् सन् 1952 के प्रथम आम चुनाव के समय स्वभावतः हर क्षेत्र में ऐसे लोगों की तलाश की गई जो किसी रूप से प्रभावी थे। हजारों वर्ष से जमींदारी प्रथा बने रहने के कारण अपने-अपने क्षेत्रों में जमींदारों का प्रभाव था। अंग्रेजी काल में कांग्रेस भी इनके प्रभाव का उपयोग करती थी। अंग्रेज भी नवाबों और बड़े-बड़े ताल्लुकेदारों, जमींदारों के सहारे शहरों र गाँवों में राज्य करता था। छोटे व मध्यम जमींदार जिनकी संख्या काफी अधिक थी, कांग्रेस के साथी थे। अपने शैशवकाल में ही जनसंघ ने 1952 का चुनाव जमींदारी प्रथा को समाप्त करने का नारा देकर लड़ा। प्रश्न केवल जमींदारी प्रथा को समाप्त करना नहीं था। कांग्रेस भी यह कहती आ रही थी, फिर भी मध्यम और छोटा जमींदार स्वतन्त्रता आन्दोलन की पृष्ठभूमि के कारण उसके साथ था। असल प्रश्न था जमींदारी समाप्त करके मुआवजा देने का या न देने का। उस समय के जनसंघ का तात्कालिक लाभ इसमें हो सकता था कि वह जमींदारों के पक्ष में पक्षधर होकर मुआवजे की बात कहता। कई प्रदेश में, उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश और राजस्थान में बड़े जमींदार प्रमुख पदों पर भी थे। दल ने मुआवजा दिये जाने का विरोध किया और जो साधारण आर्थिक स्थिति वाले जमींदार थे, उन्हें पुनर्वास सहायता की व्यवस्था का सुझाव देकर घोषणा की कि जमीन उसकी है जो पसीना बहाता है। इसकी प्रेरणा भी दीनदयाल जी द्वारा दी गई थी। इस संदर्भ में एक घटना उल्लेखनीय है। अजमेर 'सी' श्रेणी का अलग राज्य था। इनमें से अधिकांश जमींदार थे। वह लोग जमींदारी उन्मूलन

की दल की नीति से असहमत थे। व्यवहार में, कुछ मात्रा में यह विरोध प्रकट हुआ था। श्री सुन्दर सिंह भण्डारी जो उस समय राजस्थान के संगठन मंत्री थे, ने पं० दीनदयाल जी की प्रेरणा से जमींदारी प्रथा का समर्थन करने वाले छह विधायकों को सन् 1963 में दल से निष्कासित कर दिया था। इतना ही नहीं, भूधारण पर सीमा लगाने व सीमा से बची भूमि को भूमिहीनों और हरिजनों में वितरण की बात दीनदयाल जी ने बड़ी कड़ाई से कही और दल ने स्वीकार की। कई ऐसे लोग, जिनका इस विषय में जनसंघ से मेल नहीं खाया, दल से अलग हो गये। उस समय डाली गई यहन ईंव आज भी दल की भू-स्वामित्व, कृषि और अर्थनीति की धुरी बनी हुई है।

सामाजिक जीवन में पिछड़ेपन की समाप्ति की परमावश्यकता उनके मानस में गहरी बैठी थी। डा० मुकर्जी की मृत्यु के बाद रामराज्य परिषद् और हिन्दू महासभा के साथ जनसंघ के विलय किये जाने का कुछ सद्भावी लोगों का प्रयास बहुत जोरों से चला। पं० दीनदयाल जी का रामराज्य परिषद् के साथ विलय के विरुद्ध अन्य कारणों के साथ मुख्य कारण था, रामराज्य परिषद् की रूढ़िवादिता और तथाकथित हरिजनों के प्रति उनका दृष्टिकोण। सन् 1953 में एक बार पं० दीनदयाल जी उनके निमंत्रण पर कारपात्री जी महाराज से मिलने दिल्ली गए थे। साधु और विद्वान के रूप में दीनदयाल जी ने कारपात्री जी महाराज के चरण छुये परन्तु उनके दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया और तथाकथित अछूतों के सम्बन्ध में रामराज्य परिषद् के दृष्टिकोण को अग्राह्य और दोषयुक्त कहा। रामराज्य परिषद् के इस आग्रह को कि किसी धर्मशास्त्र को दल का आधार बनाया जाना चाहिये, स्वीकारने का प्रश्न ही नहीं था। कई लोग उपाध्याय जी की वेशभूषा, सादगी, धर्मपरायणता और खानपान की रुचि से अनुमान लगाते थे कि वे रूढ़िवादी और पुराणपंथी हैं। परन्तु उनके विचार और व्यक्तित्व के तनिक भी संपर्क में आते ही यह भ्रम मिट जाता था। 1954 में रामराज्य के उस समय के महामंत्री तथा लोकसभा के सदस्य पं० नन्दलाल शास्त्री से राजेन्द्र नगर स्थित उनके निवास पर मिलने गये थे। व्यक्ति और समाज के सामूहिक जीवन में धर्मग्रन्थों की उपादेयता स्वीकार करते हुये उन्होंने शासन और राजनीति के क्षेत्र में शास्त्रों को आधार बनाने के विरुद्ध अकाट्य तर्क दिये थे। उनका कथन था कि जीवन का भाँति शास्त्र भी समयानुकूल परिवर्तनीय हैं। पने धर्मदर्शन का विकास और परिमार्जन करने का अधिकार हर मतावलम्बियों की है और राज्य द्वारा प्रत्येक वर्ग को ऐसा करने की सुविधा और सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिये। परम्परा और मर्यादा के गौरव से पूर्ण परन्तु साम्प्रदायिकता से मुक्त दल की इस विचारशैली के प्रमुख प्रवक्ता पं० दीनदयाल जी थे।

आर्तिक चिन्ता में पं० दीनदयाल जी निहित स्वार्थों और एकाधिकार को उपजनें देने के कठोर विरोधी थे। विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का मूल चिंतन उनका ही था। प्रथम पंचवर्षीय योजना की आलोचना तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना का इस आधार पर खुला विरोध कि योजनाएँ शीघ्र फलदायी नहीं होंगी और हमारी सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था कुछ पूँजीपतियों और विदेशी ऋणदाताओं के आदीन हो जायेंगी, सर्वप्रथम दीनदयाल जी ने किया। आर्थिक और वित्तीय नीतियों के पूर्ण स्वावलम्बन और अधिक से अधिक शुद्ध भारतीय आधार की परिकल्पना उस समय भारत के हर नेता और दल के बूते से बाहर थी। विदेशी सहायता और ऋणों का दौर-दौरा था। जब पं० दीनदयाल जी ने सन् 1954 में विदेशी ऋण का विरोध किया तो दल के भीतर भी कई साथियों ने और बाहर तो प्रायः सबने इसे अव्यावहारिक कहकर अस्वीकार किया। इन्हीं वर्षों में सरकार की ओर से श्री मेहता की अध्यक्षता में एक कृषि सम्बन्धी कमेटी नियुक्त की गई थी। जनसंघ की ओर से पं० दीनदयाल जी ने एक स्मृति-पत्र तैयार किया था तथा प्रत्यक्ष भेंट में श्री मेहता को देने गये थे। विदेशी ऋण के सम्बन्ध में अशोक मेहता के साथ चर्चा में श्री एहता दीनदयाल जी के मौलिक विचारों से प्रभावित हुए थे। उस चर्चा में विदेशी ऋणों को समाप्त कर स्वावलम्बन की बात भी दीनदयाल जी ने छेड़ी थी। विदेशी ऋण और सहायता की परित्याग की बात आज न केवल जनसंघ कह रहा है वरन् अनेक नेताओं और अर्थशास्त्रियों के मन को भी छूती जा रही है। आज स्पष्ट हो रहा है कि विदेशी सहायता के रूप में प्राप्त धन हमारे लिये दुसाध्य बोझ और स्वतन्त्र नीतियों के पैरों में बेड़ी बन गया है।

दल की अर्थ नीति के निर्धारण में उनकी एक और बड़ी देन- आर्थिक विषमताओं को दूर करने की प्रेरणा थी। आय की अधिकतम सीमा बाँधने तथा काम के अधिकार को मौलिक अधिकारों में जोड़े जाने का आग्रह दीनदयाल जी का था।

उन दिनों समाजवाद का विरोध किसी दिशा से भी नहीं किया जा रहा था। विभिन्न रूपों में समाजवाद को स्वीकार करना प्रगतिशीलता का प्रमुख लक्षण था। सर्वप्रथम पं० दीनदयाल जी ने जनसंघ के मंच से समाजवाद के नारों का विरोध किया। अक्टूबर 1956 को भारतीय कार्यसमिति की बैठक पूना में हो रही थी। सन् 1957 के आम चुनाव सामने थे। पंडित जी पूना के जनसंघ कार्यालय में तीसरे पहल पत्रकारों से बातें कर रहे थे। उन्होंने सर्वप्रथम

जनसंघ की ओर से समाजवाद के भ्रामक नारे का विरोध किया। पत्रकारों को भी पहले विश्वास नहीं हुआ। विशेषतः 'प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया' और 'टाईम्स ऑफ इण्डिया' के प्रतिनिधियों ने दो-तीन बार पूछा कि आप यह दल की नीति घोषित कर रहे हैं ? दीनदयाल जी ने दृढ़तापूर्वक कहा 'हाँ '। लौटने पर दल के कई प्रमुख नेताओं ने कहा कि क्या ठीक आम चुनाव के अवसर पर चलती हवा के विरुद्ध इस प्रकार की घोषणा करना उचित है ? उनका कहना था कि चुनाव के समय ही अपना मत दृढ़ता से रखना चाहिये। उसके तीन वर्ष बाद सन् 1959 में स्वतन्त्र पार्टी के गठन के पश्चात् दलीय स्तर पर उसकी ओर से तथा वरिष्ठ नेताओं में श्री राजगोपालाचारी की ओर से समाजवाद का खुला विरोध किया गया। इस विषय में भी स्वतन्त्र पार्टी और जनसंघ के विचार के मध्य स्पष्ट रेखा अंकित थी। समाजवाद से अभिप्रेरित सामाजिक न्याय का जनसंघ समर्थक है परन्तु आर्थिक स्रोतों के केन्द्रीयकरण का विरोधी है। जनसंघ की आर्थिक विचार शैली की यह रेका उस समय से स्पष्टतर होती गई है। एक बार सन् 1964 में स्व० डा राममनोहर लोहिया उत्तर प्रदेश के जनसंघ के कार्यकर्ता शिविर में आये थे। उन्होंने कहा कि जनसंघ का आर्थिक कार्यक्रम समाजवादी पार्टी से भी अधिक समाजवादी दिखता है।

न केवल जनसंघ को अपितु पूरे देश को दीनदयाल जी की सबसे बड़ी वैचारिक देन 'एकात्म मानववाद' का सिद्धान्त है। दीनदयाल जी के देहावसान के पश्चात् जब उनके अंग्रेजी लेखों का संग्रह- 'पोलिटिकल डायरी' के नाम से प्रकाशित करने का निश्चय किया गया, तब पुस्तक की प्रस्तावना लिखने के लिये श्री नाना जी देशमुख डा० सम्पूर्णानन्द से मिले। सम्पूर्णानन्द जी वरिष्ठ विचारक और भारतीय दर्शन के ज्ञाता थे। उन्होंने कहा कि मैं चाहता हूँ कि दीनदयाल जी के ''एकात्मक मानववाद'' की बृहत् व्याख्या कर कुछ लिखूँ। भारतीय दर्शन के अनुसार पंडित जी ने मानव को एक ऐसी पूर्ण इकाई के रूप में देखा जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की मूल चार प्रेरणाओं से प्रेरित है। उन्होंने इस पुरातन सत्य विचार को वर्तमान की राजनीति और आर्थिक आवश्यकताओं की पृष्ठभूमि में आधुनिक परिधान में प्रस्तुत किया। साम्यवादी दार्शनिक, कार्लमार्क्स के 'डाइलेक्टिसिज्म' और 'इकोनॉमिक इण्टरप्रेटेशन ऑफ हिस्ट्रीज' तथा व्यक्ति के विशुद्ध भौतिक प्राणी होने के सिद्धान्तों को यह चुनौती है। 'एकात्म' मानववाद की इस भूमिका के साथ जनसंघ ने प्रथम बार अगस्त सन् 1964 में ग्वालियर में हुई भारतीय प्रतिनिधि सभा के अधिवेशन में मूल घोषणा पत्र तैयार किया। जनवरी सन् 1965 के विजयवाड़ा अधिवेशन में दल का यह मूल घोषणा पत्र स्वीकारा गया। इसी भाँति 'भारतीय अर्थनीति की दिशा' नामक पुस्तक भी ऐसी देन है जो जनमानस में भारत के अपने मानस और प्रवृत्ति के अनुकूल जीवन की रेखायें निर्धारित करने में निर्देशक सिद्ध होंगी। दीनदयाल जी इस मत के थे कि प्रदेशों की केन्द्र पर आर्थिक निर्भरता अनुचित है। प्रदेशों को और अधिक आर्थिक स्रोत और साधन दिये जाने चाहिये। सन् 1968 के कालीकट के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा था कि वित्त आयोग की नियुक्ति पाँच वर्ष के स्थान पर स्थायी कर दी जाये तथा अनुच्छेद 282 के अन्तर्गत निर्दिष्ट अनुदान एवं ऋणी को भी उसकी विचार कक्षा में सम्मिलित कर लिया जाय तो यह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है।

दंगों के प्रति समाजवादी दल का रवैया सामान्यतः जनसंघ के दृष्टिकोण से पूर्णतः बेमेल रहता था। 12 अप्रैल सन् 1964 के संयुक्त वक्तव्य में भारत के मुसलमानों और भारत पाक एकीकरण की बात कही गयी थी। यथा-

''जहाँ तक हिन्दुस्तान के मुसलमानों का सवाल है, हमारा यह ध्रुव विचार है कि देश के सभी नागरिकों के समान उनके जानमाल की रक्षा हर हालत में होनी चाहिये। कोई घटना और तर्क ऐसे नहीं जिनके सामने इस तथ्य को झुकना जरूरी हो। जो राज्य अपने नागरिकों को और जो नागरिक अपने पड़ोसियों को जीने का अधिकार न दिला सकें वह जंगली हैं।''

× × ×

''हमारा मत है कि हिन्दुस्तान-पाक की पृथकता कृत्रिम है। दोनों सरकारों के सम्बन्ध बिगड़ने का एक बड़ा कारण उनकी टूटी दृष्टि और टूटी-फूटी बातचीत है। हम चाहते हैं कि दोनों सरकारों को टुकड़े-टुकड़े में बातचीत न करके सम्पूर्ण बातचीत खुले मन से करें, तो समस्याओं का निराकरण तथा लाभ होगा। पारस्परिक सद्भावना पैदा होकर 'हिन्द पाक महासंघ' किसी न किसी रूप में बनने का क्रम शुरू हो सकेगा ?

उन दिनों विदेश नीति में तटस्थता की नीति का बोलबाला था। जनसंघ ने इस नीति का सदा विरोध किया। दल के भीतर भी कई वरिष्ठ मित्र अनुभव करते थे कि जनसंघ को पश्चिमी राष्ट्रों के प्रति सहानुभूति का नरम दृष्टिकोण अपनाना चाहिये क्योंकि ये देश लोकतंत्रवादी है और भारत भी लोकतंत्रवादी है। वे साथी रूस व अमेरिका की आलोचना व निन्दा के भाव की समाविष्ट करना ठीक नहीं समझते थे। दीनदयाल जी इस विषय में सदा कड़े रुख में रहे थे।

चीन के आक्रमण के पश्चात् आचार्य रघुवीर और पं० दीनदयाल जी ने तटस्थता की नीति को नया मोड़ दिया। 7 अप्रैल सन् 1963 के प्रस्ताव में कहा गया -

''जहाँ तक दोनों विश्व गुटों से अलग रहने का प्रश्न है, हमें यह समझ लेना चाहिये कि अब स्थिति बदल गई है और विश्व अब केवल दो गुटों में ही विभक्त नहीं है। अब कई गुटों के नये केन्द्र पैदा हो गये हैं। दिल्ली व पीकिंग ऐसे दो सजीव केन्द्र हैं। पीकिंग अब विस्तारवाद की एक स्वतन्त्र नीति पर चल रहा है। कम्युनिष्ट चीन के संकट को रोकने और उसे पीछे धकेलने के लिये राष्ट्रों के नये मोर्चे की आवश्यकता है। हमें स्वरक्षा के लिये मित्र संचय करना ही होगा। हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि हमारे एशियाई पड़ोसी चीन के चुनिन्दा चंगुलों में न फँसे। जो चीन के संकट में ग्रस्त हैं, वे उदासीन न रहकर हमारे सक्रिय सहयोगी बनें।''

जनसंघ के जन्मकाल से ही किसी न किसी रूप में सदा यह दबाव बना रहा है कि वह समान विचारधारा के कहे जाने वाले अन्य दलों के साथ विलीन हो जाये। सन् 1953 में रामराज्य परिषद् व हिन्दू महासभा से आगे चलकर स्वतन्त्र पार्टी, भारतीय क्रान्तिदल तक मिलने की चर्चा लोगों ने की। पंडित जी ने दल में आत्मविश्वास और दृढ़ता का संचार किया। विशेषतः डा० मुखर्जी की मृत्यु के बाद लोगों को जनसंघ के चल पाने में भी संदेह था। दलों से वार्ता व सहमति के क्षेत्रों में मिलकर कार्य करने में, उन्होंने कभी संकोच नहीं किया।

सन् 1961 में नई दिल्ली के लोकसभा के प्रत्याशित पद हेतु दीनदयाल जी के विचार राजगोपालाचार्य जी से उल्टे थे। राजगोपालाचार्य जी श्रीमती मनमोहिनी सहगल के पक्ष में थे। बातचीत का रुख बदलकर राजा जी देश में जनसंघ के विषय में जानकारी लेने लगे। जब मद्रास का उल्लेख आया तो हँसकर बोले - ''आई एम योह मिनिस्टर फरॉम मद्रास।'' बात बहुत मधुर व स्नेह की थी किन्तु राजनीतिक गहराई से रिक्त नहीं थी। बाद में बोले - ''यह बलराज नाम का कौन जवान है, कभी-कभी नाम तो सुनता हूँ।' दोनों चुनाव लड़े। दिल्ली में जनसंघ की विजय श्री बलराज मधोक के रूप में हुई।

दिसम्बर सन् 1967 के कालीकट के अधिवेशन में अपने अक्ष्यक्षीय भाषण में दीनदयाल जी बोले - ''जो चमत्कार की आशा करते थे उनकी आशाएँ अवश्य पूरी नहीं हुईं। नीतिगत मतभेद रहते हुये भी दलों के बीच सहिष्णुता, प्रजातंत्र का आधार राष्ट्रीय एकरसता का सूचक है। परन्तु साम्यवाद के प्रति उनका विरोध कम न हुआ।

राजनीतिक दलों के लिये एक संयुक्त आधारसंहिता की आवश्यकता की बात सर्वप्रथम पं० दीनदयाल जी ने कही। उन्होंने पं० जवाहर लाल नेहरू को भी कांग्रेस अध्यक्ष के नाते पत्र भी लिखा।

जनसंघ संस्कृतिवादी माना जाता है और है भी। इस कारण कई लोग उसे सनातन धर्मी संस्था के रूप में समझने की गलती करते हैं। दीनदयाल जी की चालढाल और खानपान लोगों की इस मिथ्या धारणा को कई बार पुष्ट करता था। इस कारण जब दीनदयाल जी को पूर्ण नशाबन्दी और खाद्य पदार्थ के रूप में मछली पालने का क्रमशः विरोध व समर्थन करते देखा तो कई लोगों को आश्चर्य लगा। 1966 में जम्मू में हुई भारतीय कार्यसमिति की बैठक में तथा विजयवाडा अधिवेशन में दीनदयाल जी ने खाद्य पदार्थ के रूप में मछली पालन के उद्योग का समर्थन किया। इसी भाँति, कलकत्ता में सन् 1967 के चुनाव घोषणा पत्र पर बहस के दौरान जब नशाबन्दी का प्रश्न आया तो बहुत से सदस्यों ने सरकारी नियम से शराबबंदी का प्रतिपादन किया परन्तु दीनदयाल जी डटकर विरोध करते रहे। तभी उर्दू में शेर सुनाये गये। ''जगदीश प्रसाद माथुर'' पं० दीनदयाल जी के संस्कृति प्रेम और शराब-बंदी के विरोध से प्रभावित होकर बोले :

''मुझे भी शौक है जाहिद मैं भी काबे को चलता हूँ।
मगर उस राह से जिस राह में मैखाना आता है॥''

शेर सुनकर सबके साथ दीनदयाल जी भी जोरों से हँस पड़े और अन्ततः शराबबदी की बात नहीं मानी गई। सामाजिक जागरण द्वारा इसे समाज में यथोचित दिशा प्रदान का सिद्धान्त स्वीकारा गया। हर बात में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की छाप जो पंडित जी की थी, दल पर लगी है।

दीनदयाल जी के व्यक्तित्व और चिन्तन की छाप जनसंघ के हर पक्ष और पहलू पर पड़ी है। काल बलवान होता है। उनकी वैचारिक शक्ति आज है, हो सकता है कल न रहे, परन्तु नींव के स्वीकृत सिद्धान्त अटल रहेंगे।

चरैवेति ! चरैवेति !

*

संस्मरण

मीकू

—प्रवीण ओमर

एकादश 'क'

"चलो, चलो !" कुछ इसी प्रकार का संकेत करते हुए उस लघु-प्राणी ने मुझे अपनी ओर आकर्षित किया, वह लघु-प्राणी तीव्र गति से अपने दरबे में भाग गया। वह शशक-पुत्र था, तथा आवास के भीतर जाते-जाते वह मुझे अपने ही रंग के, अपने ही रूप के एक अन्य लघु प्राणी के विषय में सोचने के लिए बाध्य कर गया, जो कभी मेरे पास रहा करता था, मेरी गोद में खेलता था, मेरे साथ खाता व पीता था और मेरी गोद में ही सो जाता था।

कितना सुहावना दिन था वह, कितनी मधुर व सोंधी वायु प्रवाहित हो रही थी। जाड़े के दिनों में जब सूर्य देवता के दर्शन होते हैं, तो ऐसा लगता है मानो पिंजड़े में बन्द पक्षी को स्वच्छन्द गगन में विचरण करने का सुख मिल गया हो। तभी कौओं की कर्कश ध्वनि ने मेरा ध्यान अपनी ओर केन्द्रित किया। मैं उस स्थान पर गया, जहाँ वे कौवे कुछ खेल खेल रहे थे। परन्तु यह मेरा भ्रम था, वह खेल नहीं अपितु एक नन्हें शशक को चोंच से चोटिल कर रहे थे। मेरे इस प्रकार सोचते हुए, न जाने कब वे उस प्रेम प्राप्ति को उत्सुक, कोमल, नन्हें व छोटे छोटे पंजों वाले शशक को भूमि पर गिरने के लिए बाध्य करने लगे।

मैंने अपने हाथों से कौवों को उड़ा दिया। परन्तु जैसे ही उस नन्हें शशक की ओर देखा तो उसकी नीलाभ आँखों ने मुझसे सब कुछ कह दिया। वह वास्तव में डरा हुआ था व मुझसे दया, करुणा व प्रेम की भीख माँग रहा था।

मेरा हृदय द्रवित हो गया, और मैं अपने अश्रुओं को न रोक सका, मैंने उसे अपनी गोद में लिया, व उसे कमरे में ले जाकर अपने मखमली बिस्तर पर लिटा दिया।

उसके शरीर पर सफेद रोओं के बीच मात्र एक ही घाव था। पर मुझे प्रसन्नता हुई कि वह घाव गहरा नहीं था। मैं तुरन्त अनपा ट्रीटमेंट बॉक्स ले आया। तब मैंने उसके घाव से बह रहे रक्त को पोंछा, तभी उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं, मुझे धक्का लगा, कहीं मुझसे कोई गलती तो नहीं हो गई है। मैंने माँ को पूरी घटना बताई माँ ने कहा, "धैर्य रखो, वह सो रहा है।" इतना कहकर मेरा हाथ उसके हृदय पर रखा, धड़कन चल रही थी, मुझे तो मानो वर्षों पहले खोया अपना मित्र मिल गया हो।

कुछ समय पश्चात् उसने आँखें खोली वह उछलकर व फुदककर मेरी गोद में आ बैठा। उसकी आँखों को, लम्बे-लम्बे चंचल कानों को, व उसकी चंचल पूँछ को देखकर हम सबने उसे अपने पास रखने का निश्चय किया व उसकी जातिवाचक संज्ञा को व्यक्तिवाचक संज्ञा में बदल दिया। हमने उसका नामकरण संस्कार कर दिया, उसका नाम था - 'मीकू'।

मीकू बहुत ही चंचल, लोगों को परेशान करने वाला, घर में रखी सभी गाजर खा जाने वाला, शैतान, ऊधमी परन्तु मेरे घर के परिजनों तथा आस-पास के लोगों का प्यारा हो गया था। जब भी मैं सुबह उठता तो मैं उसे अपने पैरों के बल खड़ा पाता। ऐसा लगता जैसे मुझसे सुबह का प्रणाम कर रहा हो। जब मैं नहाने के लिए जाता तो वह मेरी तौलिया खींचने लगता और जब मैं पढ़ने बैठता तो मेरे पेनों को गिरा देता और पन्ने फाड़ देता। वह बहुत मोटा, श्वेत, चंचल व सबका चहेता था। जब मैं विद्यालय जाने को होता तो मेरा पैंट खींचकर यह बताता कि आज तो रविवार है, विद्यालय मत जाओ। उसके इस प्यार को देखकर मैं कुछ काजू व बादाम उसे खिलाकर ही विद्यालय जाता।

जब मैं विद्यालय से वापस लौटता तो उसे न पाकर बड़ा ही चिंतित हो जाता था। पर वे साहब, तो हमारे भी साहब थे। वे हमें आश्चर्यचकित करने के लिए कहीं न कहीं छुप अवश्य जाते थे। परन्तु जब मैं उन्हें ढूँढ़-ढूँढ़ कर

थक जाता था। तो वे मेरी गर्दन पर कूदकर, मेरे कन्धें पर बैठकर यह दिखाते थे कि, ''देखा, नहीं ढूँढ़ पाए।' हमारे प्रेम को देखकर पिताजी कहते थे कि संसार में शायद ही कोई भाई-भाई हों जिनमें इतना प्रेम हो।

परन्तु हमारे इस प्रेम को किसी की नजर लग गई। एक बार जब मैं विद्यालय से वापस लौटा तो उसे ढूँढ़ने की कोशिश नहीं की, क्योंकि मैं जानता था कि कुछ ही समय में वह मेरे पास फुदककर आ जाएगा। पर ऐसा नहीं हुआ, क्योंकि विधाता को यह मंजूर नहीं था। मैं बरामदे में गया और अपने सामने चित्रित उस दृश्य को देखकर मेरे प्राण-पखेरू उड़ने ही वाले थे कि मीकू ने आँखें खोल दीं। मैं बड़ा प्रसन्न हुआ, परन्तु पास जाकर देखा तो यह खुशी क्षणिक थी, उसे एक पड़ोस की बिल्ली ने घायल कर दिया था। मैंने उसे अपनी गोद में लिया, और चिकित्सक की ओर दौड़ा कि तभी मेरा हाथ उसके हृदय पर पड़ा। उसकी धड़कन बन्द थी, व उसकी आँखें भी बन्द थीं। शायद उसने इस नश्वर संसार से विदा ले ली थी व सदा के लिए किसी अनजाने संसार में चला गया था।

मेरे पैरों तले जमीन खिसक गई। मैं घुटनों के बल बैठ गया, क्योंकि मैंने एक खरगोश को नहीं, एक दोस्त और एक भाई को खो दिया था।

आज जब मैंने एक नन्हें शशक को देखा तो ऐसा लगा मानों ईश्वर ने मेरे प्रेम, मेरी करुणा मेरी दया की भावना तथा इस संसार में ईश्वर की सत्ता को सदा स्थापित रखने के लिए, मेरा दोस्त, मेरा भाई मेरा प्यारा मीकू भेज दिया हो।

✶

लघु कथा

लक्ष्मी की महिमा

—राज गौरव कटियार

दशम 'क'

गरीबी की मार से वह अन्न के दाने-दाने को तरस गया था और जब भूख शान्त करने का कोई आयास उसे समझ में नहीं आया तो अन्ततोगत्वा उसने आत्महत्या करने का निश्चय किया। स्टेशन पर बैठा वह आत्महत्या करने का ऐसा उपाय सोच रहा था जिसमें खर्च कम हो और प्राण निकलने में कम समय लगे। तब उसे ध्यान आया कि उसका एक दोस्त मेडिकल स्टोर चलाता है और वह उसे उधार भी दे देगा, अतः उसने नींद की गोलियाँ खाकर गहरी नींद में सोकर परलोक जाने का निश्चय किया।

यही निश्चय करके वह अपने मार्ग पर जा रहा था कि उसे कुछ दिखा। यह एक सौ रुपये का नोट था जो फुटपाथ पर पड़ा था। उसने वह नोट उठाया और इधर-उधर देखकर चुपचाप उसे जेब में रख लिया। उस सौ रुपये के नोट ने उसका दृष्टिकोण बदल दिया। उसने सोचा कि मरने से पहले अपनी भूख शांत कर ली जाए। इसी उद्देश्य से वह एक होटल में गया और भरपेट भोजन किया। इसके बाद वह एक पंसारी की दुकान पर गया और सिगरेट खरीदी। सिगरेट के धुएँ में वह दुनिया को भुलाकर सड़क पर चला जा रहा था कि द्रुतगति से एक ट्रक उसके पास गुजरा जिससे वह लड़खड़ा गया। कुछ पल बाद सँभलते हुए आक्रोशमय स्वर में वह बोला, ''अंधा है क्या ? अभी मुझे मार देता तो ......''

✶

गिनीज़ क्रिकेट रिकॉर्ड

—अतिन पाण्डेय

अष्टम - ख

- **सबसे युवा टेस्ट कप्तान** - पूरे संसार में सबसे युवा टेस्ट कप्तान होने का गौरव 'नवाब पटौदी' को प्राप्त है। उनका पूरा नाम 'नवाब मंसूर अली खान पटौदी' है। 23 मार्च 1962 को भारत और वेस्टइंडीज के विरुद्ध टेस्ट मैच में इन्हें सबसे कम आयु के टेस्ट कप्तान होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस समय ये मात्र 23 वर्ष और 77 दिन के थे।

- **सबसे बड़ा क्रिकेट बैट**- 16 अप्रैल 1999 को एल०जी० इलैक्ट्रानिक कम्पनी ने नेशनल स्टेडियम, नई दिल्ली में एक विशाल बैट का निर्माण करवाया। यह 50 फीट लम्बा और 6 फीट चौड़ा था। बैट का वजन 430 किलोग्राम था।

- **बिना स्कोर वाली सबसे लम्बी क्रिकेट पारी** - बिना स्कोर वाली सबसे लम्बी क्रिकेट पारी खेलने का श्रेय न्यूजीलैण्ड के 'ज्यॉफ एलॉट' के नाम है। यह कारनामा उसने 2 मार्च 1999 ऑकलैण्ड में साउथ अफ्रीका के विरुद्ध दिखाया था। 101 मिनट की इस अनोखी पारी में उसने 77 गेदों का सामना किया।

- **एक ओवर में सबसे अधिक रन** - सर 'गारफील्ड सोबर्स' ने 31 अगस्त 1968 को मात्र 6 गेदों में 36 रन बनाने का कारनामा कर दिखाया। ये वेस्टइंडीज के खिलाड़ी थे।

- **एक टेस्ट मैच में सर्वाधिक विकेट** - एक टेस्ट मैच में सर्वाधिक विकेट लेने का रिकॉर्ड इंग्लैण्ड के 'जिम लेकर' के नाम है। यह करिश्मा उन्होंने ऑस्ट्रेलिया के विरुद्ध दिखाया था। इस टेस्ट मैच में उन्होंने 90 रन पर 19 विकेट लिये थे। इस मैच में उनका गेंदबाजी विश्लेषण 9-37 व 10-53 था।

*

हरो चरहिं, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ॥

शोक संवेदना

—समस्त शोकाप्त विद्यालय परिवार

दिनांक 3/8/05 को प्रातःकाल राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पूर्व प्रान्त प्रचारक तथा विद्याभारती (उत्तर प्रदेश) के संरक्षक माननीय श्री जयगोपाल जी के निधन का दुःखद समाचार मिला। मा० श्री जयगोपाल जी दीनदयाल विद्यालय की प्रबन्ध समिति के माननीय सदस्य थे तथा वे अपने ज्ञान, अनुभव व वात्सल्य से हम सभी को अभिसिंचित करते रहते थे। उनके निधन का समाचार पाकर हमारा सम्पूर्ण विद्यालय परिवार शोकाकुल है।

मा० श्री जयगोपाल जी आजीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक रहे। अनेक वर्षों तक प्रान्त प्रचारक रहने के बाद वे क्षेत्र प्रचारक के रूप में 'संघ' का कार्य करते रहे संप्रति वे विद्या भारती के उत्तर प्रदेश के संरक्षक के रूप में अपना मार्गदर्शन दे रहे थे। वे लगभग 85 वर्ष की आयु में गोलोकवासी हो गये।

मा० श्री जयगोपाल जी एक समर्पित समाजसेवी, उत्कृष्ट राष्ट्रभक्त, विद्वान, मनीषी तथा प्रखर चिन्तक थे। उनका न रहना देश व समाज की एक अपूरणीय क्षति है। दीनदयाल विद्यालय की प्रबन्ध समिति के सभी सदस्य, प्रधानाचार्य, आचार्य-गण, सभी छात्र व कर्मचारी परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वे दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करें तथा समस्त शोकाकुल जनों को यह घोर दुःख सहने की शक्ति प्रदान करें।

✶

स्मृति

11 फरवरी का दिन

—दुर्गेश वाजपेयी

ग्यारह फरवरी के दिन पं० दीनदयाल उपाध्याय की हत्या कर दी गयी थी। जिनका सम्पूर्ण जीवन देश और समाज के लिये था, परोपकार के लिये था, जो अपने लिये कुछ नहीं चाहते थे, उनके साथ भी दुनियावी लोगों ने ऐसा क्रूर व्यवहार किया। ऐसे ही क्रूर व्यवहार ईसा और सुकरात जैसे अनेक संतों के साथ किये गये हैं। शोक .....। आज हम भावुक मन से पंडित जी को याद करते हैं। आइये हम संकल्प लें कि यदि हम पूरे-पूरे उनके जैसे न भी बन सकें तो भी उनके विराट व्यक्तित्व के किसी एक अंश को ही आत्मसात् कर लें।

✶

क्यों पड़ता है कोहरा ?

—प्रतीक सिंघल

अष्टम 'ख'

कोहरे से तो हम सभी परिचित हैं। इसके कारण रेलों के आवागमन में कठिनाई होती है। कई बार वायुयान की उड़ाने भी रद्द कर देनी पड़ती हैं। क्या आपको पता है कि कोहरा क्यों और कैसे बनता है ? तो जानिए इसकी प्रक्रिया।

वायुमण्डल का तापमान जब एक बिन्दु से ज्यादा होता है तब सागर, झील, नदी का जल वाष्प बनकर उड़ता रहता है। वातावरण के ताप के अनुरूप निरन्तर वाष्पन की क्रिया चलती रहती है। वातावरण के तापमान के बढ़े रहने पर वायु अधिक मात्रा में जलवाष्प ग्रहण करती है। तापमान के कम हो जाने पर वायु जलवाष्प कम ग्रहण करती है। वायु अपनी क्षमता से अधिक जलवाष्प ग्रहण नहीं कर सकती है। यदि किसी समय वातावरण के अधिक तापमान पर वायु ने अधिक जलवाष्प ग्हण किया हुआ है लेकिन तापमान गिरने से वायु का तापमान गिर जाता है तो उस कम ताप पर वायु में क्षमता से अधिक यानी अतिरिक्त जलवाष्प बूँदों में बदल जाती है। यही नन्हीं बूँदों में परिवर्तित अतिरिक्त जलवाष्प कोहरा कहलाता है।

कोहरा छाए रहने के लिए हवा का सामान्य अवस्था में रहना तथा तापमान में कमी आवश्यक है। पानी से भरे कोहरे में पारदर्शिता नहीं होती तथा साथ ही जलवाष्प की बूँद छोटी होने के कारण जलकण इसमें अधिक मात्रा में होते हैं।

सर्दी के मौसम में रात्रि की गहरी रहने के साथ पृथ्वी की सतह ठण्डी हो जाती है जिसके कारण कोहरा छा जाता है। गाँवों व कस्बों में कोहरे की परत पतली होती है जबकि औद्योगिक क्षेत्रों में, नगरों में गैस, धुआँ, धूल, मिट्टी के कारण कोहरे की परत मोटी होती है और इसी कारण इन क्षेत्रों में कोहरा अपारदर्शी होता है।

✶

क्यों लगती है ठंड से कँपकँपी

—प्रतीक सिंघल

अष्टम 'ख'

प्रायः सर्दी जब अपने पूरे चरम पर रहती है तो हम ठण्ड के कारण काँपने लगते हैं। हम कोशिश करके रोकना भी चाहें तो असफल रहते हैं। वास्तव में कँपकँपी आना माँसपेशियों की एक स्वचालित गति है। जब हमें सर्दी लगती है तब माँसपेशियाँ सिकुड़ जाती हैं और फैलती हैं जिससे कोशिकाओं में ऊर्जा का व्यय अधिक होता है। फलस्वरूप ऊर्जा पैदा होती है। इस प्रकार कँपकँपी आना शरीर की एक ऐसी क्रिया है जो शरीर को गर्म रखने में मदद करती है। इससे शरीर का तापमान एक निश्चित बिन्दु के नीचे नहीं आ पाता।

कँपकँपी एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें माँसपेशियाँ परिश्रम करती हैं तथा शरीर को गर्म रखती हैं यदि हम जाड़ों में कसरत करें अथवा दौड़ लगाएँ या मेहनत करने वाला कोई काम करें तो हमें कँपकँपी नहीं होगी। क्योंकि परिश्रम से शरीर गर्म रहता है किन्तु हम शारीरिक श्रम नहीं करते तो ठण्ड से शरीर काँपने लगता है।

✶

विद्यालय के वार्षिकोत्सव में छात्रों को संबोधित करते हुए पायनियर के संपादक श्री चन्दन मित्र।

उदार दानदाता श्री मुल्लू बाबू छात्रों के लिये साठ हजार रूपये का चेक मुख्य अतिथि श्री चन्दन मित्र के माध्यम से देते हुए, पीछे बैठे हैं मा. श्री वीरेन्द्रजीत सिंह जी तथा मा. लाहोटी जी

राष्ट्रीय विज्ञान संगोष्ठी में प्रदेश स्तर पर स्थान प्राप्त चि० रणविजय को पुरस्कृत करते हुए मुख्य अतिथि श्री चन्दन मित्र।

वार्षिकोत्सव में
एन.सी.सी. के छात्रों का
सुन्दर पथ संचलन

पांचजन्य के पूर्व संपादक,
क्रान्तिकारी, साहित्यकार
पद्मश्री वचनेश त्रिपाठी जी
को सम्मानित करते हुए
मा० वीरेन्द्र जीत सिंह।

विद्यालय की हस्तलिखित
पत्रिका "शिंजिनी" का विमोचन
करते हुए श्री चन्दन मित्र जी
तथा पीछे बैठे हैं–
मा० रामबालक मिश्र व
मा० ज्ञानचन्द्र अग्रवाल जी।

सदाचार का दैनिक जीवन में महत्त्व

—अंकुर दीक्षित

सप्तम 'क'

वास्तव में जीवनोपयोगी समस्त मानवीय गुणों, ऐश्वर्यों तथा वैभव की आधारशिला सच्चरित्रता एवं सदाचरिता है। यदि हम चरित्रवान हैं तो निःसन्देह विश्व की समस्त विभूतियाँ, नैतिक, आत्मिक, शारीरिक, विलास व वैभव हमारे चरण पखारने लगते हैं। इसके विपरीत यदि हम चरित्रवान नहीं हैं तो हम अपने ही समाज में निन्दा के पात्र बन जाते हैं। चरित्रहीन व्यक्ति अपने निन्दनीय आचरण से स्वयं को, परिवार, समाज को जिसमें कि वह रहता है, कलंकित कर देता है, जबकि सच्चरित्रवान मनुष्य दोनों ही के लिए वरदान सिद्ध होता है। वैदिक ऋषियों ने भगवान से भी प्रार्थना की है -

> ''असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय,
> मृत्योर्मामृतंगमय ॥''

जैसा कि सामान्यतः दृष्टिगोचर होता है कि चरित्र बल ही हमारी प्राचीन थाती है। महात्मा गाँधी ने कूटनीति, चातुर्य, बुद्धि विलास के स्थान पर चरित्रबल को ही सर्वोच्च प्रधानता दी है। हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य है कि हम सदाचारी बनें तथा अपनी वर्तमान सन्तति को भी सदाचारी होने की प्रेरणा दें। अपना जीवन चरित्र आदर्श रूप में उनके समक्ष रखें, जिससे कि वे प्रेरणा ग्रहण कर अपना चरित्र पूर्णतः उज्ज्वल बना सकें। किसी कवि ने भी दुर्जन व सज्जन की बड़े ही सुन्दर शब्दों में व्यंजना की है -

> ''खलों को कहीं नहीं स्वर्ग है,
> सुनो, स्वर्ग क्या है ? सदाचार है।
> भलों के लिए यह धरा, स्वर्ग है,
> मनुष्यत्व, ही मुक्ति का द्वार है।''

✶

अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति ।
अक्षमावान् परं दोषैरात्मानं चैव योजयेत् ॥

अर्थ - तृणरहित स्थान में गिरी हुई आग अपने आप बुझ जाती है। क्षमाहीन पुरुष अपने को तथा दूसरे को भी दोष का भागी बना लेता है।

डायनोसॉर क्या थे ?

—सागर सिंह सेंगर

अष्टम 'ख'

करोड़ों वर्ष पहले हमारी धरती पर डायनोसॉर नाम के भारी भरकम शरीर वाले विशालकाय जीव विचरण करते थे। यह शब्द दो ग्रीक शब्दों डिनोस और सायरस को मिलाकर बना है। इसका अर्थ है विशालकाय छिपकली। इन जन्तुओं का जन्म लगभग 22.5 करोड़ वर्ष पहले हुआ था। ये 16 करोड़ वर्ष तक धरती पर विचरण करते रहे। लगभग 6.5 वर,ओं पहले इन विशालकाय जन्तुओं का अन्त हो गया। शायद ये अपने को धरती की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार ढाल न पाए और धीरे-धीरे समाप्त हो गए। शुरु-शुरू में इनका आकार छोटा होता था व वे अपनी पिछली टाँगों के सहारे चलते थे। परिवर्तन प्रकृति का अनिवार्य नियम है। इनका आकार धीरे-धीरे बढ़ते-बढ़ते इतना अधिक बढ़ गया कि पिछली टाँगों के सहारे चलना इनके लिये मुश्किल हो गया। इसलिये ये अपना समय नदियों व कीचड़ में बिताने लगे।

इन विशालकाय जन्तुओं को दो वर्गों में बाँटा जाता है। सारिस्किया व आर्नीथिस्किया। सारिस्किया वर्ग का पिछला हिस्सा छिपकली की तरह था व आर्नीथिस्किया वर्ग का पिछला हिस्साचिड़ियों की तरह। सॉरिस्किया वर्ग को दो हिस्सों में बाँटा जाता है - सॉरोपोड व थेरोपोड। सॉरोपोड पेड़ पौधों को खाकर जीवित रहते थे व थेरोपोड मांसाहारी थे। सॉरोपोड बहुत ही विशाल आकार के जीव थे। इनमें ब्रोटोसॉरस नाम के जीवों की लम्बाई 24 मीटर (80 फुट) तक थी। इनका भार 32 मीट्रिक टन तक था। इनकी गर्दन व पूँछ काफी लम्बी थी। वे चार टाँगों पर चलते थे। ब्रेशिथोसारे नामक डायनासारो का वजन था 77 मीट्रिक टन व लम्बाई करीब 21 मीटर थी। माँसाहारी थेरोपोट अपनी पिछली टाँगों पर चलते थे। वे अपनी छोटी-छोटी अगली टाँगों को शिकार पकड़ने व उसे चीर कर खाने के काम में लेते थे। ये बहुत ही भयाकन जीव थे। इनमें टायरेनोसॉरस डायनोसॉर सबसे भयानक थे। ये सॉरोपोड को मार कर खा जाते थे। इनके दाँत 8 इंच लंबे थे।

आर्नीथिस्क़िया डायनोसॉर का पिछला हिस्सा चिड़ियों से मिलता था। इनकी गर्दन बहुत सख्त थी। कहा जाता है कि इनके दो मस्तिष्क होते थे। ये पानी में तैर सकते थे। इनको चार समूहों में विभाजित किया जाता है। दो पैरों पर चलने वाले, इनमें बतख सी चोंच वाले डायनोसॉर शामिल थे, स्टेगोसॉरस, जिनके शरीर पर रक्षा के लिये हड्डियों की परतें थीं च एकेलोसॉस इनके शरीर पर और भी सख्त हड्डियों का कवच था व चौथा समूह था सींगों वाले डायनोसॉर का। ये सभी डायनोसॉर लगभग 7 करोड़ वर्ष पहले धरती से समाप्त हो गए। धन्ती की बदलती परिस्थितियों के अनुकूल ये जन्तु अपने को ढाल न पाए व धीरे-धीरे समाप्त हो गए। इनके विषय में केवल फॉसिल अध्ययनों से जानकारी मिलती है।

✶

जग बहु नर सर-सरि सम भाई। जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई ॥
सज्जन सुकृत सिंधु सम कोई। देखि पूर विधु बाढ़इ जोई ॥

बोध कथा

—अनुपम आदर्श मिश्र

नवम 'ग'

एक आदमी कहीं जा रहा था। रास्ते में आम के बगीचे में होकर गुजरा तो बगीचे के मालिक ने उससे कहा- यदि तू चाहे तो बाग की रखवाली की नौकरी यहाँ कर सकता है, वह आदमी तैयार हो गया और बाग की रखवाली करने लगा।

रखवाली करने वाले ने उसी काम में वर्षों गुजार दिए। मेहनत से वह रखवाली करता भगवान का भजन करता, भगवान में ही रमा रहता, यही उसकी नित्यप्रति की दिनचर्या बन गयी थी। एक दिन मालिक ने उससे कहा - ''कुछ मीठे आम तोड़कर लाओ' नौकर गया और बड़े पके-पके आम ले आया। लेकिन जब मालिक ने आम खाये तब आम खट्टे निकले।

मालिक झल्लाया। उसने कहा - तुम्हें वर्षों हो गये, पर इतना भी नहीं जानते कि किस पेड़ पर आम मीठे हैं नौकर ने विनीत स्वर में कहा - ''मालिक ! मैं रखवाली वाला नौकर हूँ, किसी दूसरे को इसका फल भी चखने नहीं देता, तो स्वयं ही मैं चोरी करके फल चखने लगूँ ? यह कैसे हो सकता है। वर्षों हो गये पर मैंने इस बाग का एक भी फल नहीं चखा।

मालिक उसकी ईमानदारी पर बहुत प्रसन्न हुआ।

शिक्षा - इस कहानी से हमें शिक्षा मिलती है कि उसे सदैव ईमानदार होना चाहिए।

*

हर स्त्री में माँ का रूप देखा

—विक्रान्त मिश्र

नवम 'ग'

एक बार श्रीगणेश जी पृथ्वी की परिक्रमा करने का विचार करने लगे। उन्होंने अपने पिता शिवजी से आज्ञा पाकर पृथ्वी की परिक्रमा करनी प्रारम्भ कर दी। मार्ग में एक बिल्ली उनका मार्ग काट गई, इससे श्री गणेश जी बहुत क्रोधित हुए। उन्होंने बिल्ली को एक छड़ी से निर्दयतापूर्वक मारा। वह बिल्ली बड़ी मुश्किल से अपनी जान बचा पाई। अब श्रीगणेश जी माता पार्वती के पास बिना यात्रा पूरी किये वापस आये। उन्होंने देखा कि माता पार्वती के शरीर पर चोटें लगी हैं। उन्होंने माँ से पूछा कि, ''आपके शरीर पर किस दुस्साहसी ने यह चोटें पहुँचायी हैं। माँ पार्वती ने कहा, ''हे पुत्र ! तुमने जिस बिल्ली को छड़ी से मारा था, वह मेरा ही अंश है। इस ब्रह्माण्ड में सम्पूर्ण नारी जाति में मेरा कुछ न कुछ अंश पाया जाता है, वे मेरी ही स्वरूप हैं।'' ऐसा सुनकर उस दिन से श्रीगणेशजी ने हर स्त्री और स्त्री जाति में माँ का ही रूप देखा।

कहा भी गया है -

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।

*

भारतीय संस्कृति का स्वरूप

—अभिजित शुक्ल

अष्टम 'ख'

संस्कृति शब्द का अर्थ है, स्वच्छता, शुद्धता और श्रेष्ठता। जिस व्यक्ति के जीवन में कोई दोष नहीं है, जिसका आचार-विचार ठीक है वही सभ्य और सुसंस्कृत कहा जायेगा। संस्कृति शब्द का तात्पर्य उन मूलभूत विचारों और व्यवहारों से है, जिन पर आचरण करने से मनुष्य का जीवन श्रेष्ठ बनता है।

जिस प्रकार वस्तुओं की स्वच्छता से उसकी सुन्दरता बढ़ जाती है उसी प्रकार से मनुष्य के दोष सद्‌गुण में बनने पर वह सुखी हो जाता है। अच्छे संस्कार उत्पन्न होने से न मन में गलत विचार आते हैं और न गलत कार्य होते हैं। सद्‌गुणों से, अच्छे विचारों, मनुष्यों का उद्‌भव होता है तथा समाज को सद्‌विचार, सद्‌भावना, सद्‌गुण मिलते हैं। आज हम समाज में जितनी बुराइयाँ देख रहे हैं उनकी जड़ में कुसंस्कार ही हैं। भारतीय संस्कृति मनुष्य के जीवन को सुसंस्कारित, श्रेष्ठ और आदर्शमय बनाती है।

भारतीय संस्कृति में सम्पूर्ण सृष्टि को सुन्दर व सुखमय बनाने की अनेक विशेषताएँ हैं यथा मातृदेवो भव की सात्विक प्रवृत्ति, वितृ देवो भव की भावना, गुरुर्देवो भव, आचार्य देवो भव की पावन परम्परा, अतिथि देवो भव की भावना, वैचारिक सहिष्णुता, अहिंसा व सेवा को परमोधर्मः की मान्यता, अलौकिक शक्ति अर्थात् भगवान की शक्ति को मानना धार्मिक कट्‌टरता का विरोध, कर्मफल व पुनर्जन्म सिद्धान्त की की मान्यता व्रतादि की परम्परा अंशदान की परम्परा और यज्ञीय जीवन क्रम।

एतद्‌देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं-स्वं चरित्रं शिक्षरेन पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

भारतीय संस्कृति में इन सभी परमपराओं और मान्यताओं का उद्देय जीवन को विकसित और सुसंस्कृत बनाना है। हमारे पूर्वजों ने जीवन में सुख शान्ति प्राप्त करने का जो तरीका बताया है वही संस्कृति के अन्तर्गत रखा गया। इन तरीकों को हजारों वर्षों तक आजमाया गया। अन्ततः लोग इस नतीजे पर पहुँचे कि पूर्वजों द्वारा बताई गई विचार पद्धति और कार्य-प्रणाली हमारी भारतीय संस्कृति ही मात्र ऐसी जीवन पद्धति है जिसे अपनाकर मनुष्य सुख, शान्ति, प्राप्त कर सकता है। इसी देव संस्कृति ने ही "वसुधैव कुटुम्बकम्" की कल्पना की थी। यहीं पर धरती पर स्वर्ग की कल्पना के लिए कहा गया है -

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत् ॥

✶

राम चरित सर बिनु अन्हवाएँ। सो श्रम जाइ न कोटि उपाएँ ॥
कबि कोबिद अस हृदय बिचारी। गावहिं हरि जस कलि-मल हारी ॥

निबन्ध

सफलता की राह बनाएँ

—सूर्य प्रताप सिंह

दशम 'ख'

भूमिका : "Success doesnot mean the absence of failures; it means the attainment of ultimate objective. It means winning the war, not every little battle." **—Advin C. Bliss**

अर्थात् सफलता का अर्थ मात्र सफल होना नहीं है, अपितु सफलता का वास्तविक अर्थ है अपने उद्देश्य तक पहुँचना, इसका अर्थ है पूरा युद्ध जीतना, न कि छोटी-मोटी प्रत्येक लड़ाई।

इस प्रतिस्पर्धी युग में जीवन को सफल बनाने हेतु सकारात्मक ढंग से एक उद्देश्य का पूर्व निर्धारण करना अति आवश्यक है। अपनी रुचि के अनुकूल प्रत्येक कार्य का लक्ष्य तय करके मंजिल तक पहुँचना ही जीवन की सफलता कहलाता है।

लक्ष्य निर्माण सम्बन्धी विषय आज हर वर्ग के प्रतियोगी के लिए बड़े महत्व का है। अक्सर देखा गया है कि ज्यादातर युवाओं के सामने उनका लक्ष्य स्पष्ट नहीं होता, जिनके पास निर्धारित लक्ष्य है तो उन्हें यह ज्ञात ही नहीं रहता कि लक्ष्य प्राप्ति कैसे की जाये। इसीलिए वे असफल हो जाते हैं। असफल व्यक्तियों पर किए एक सर्वेक्षण के अनुसार -

8%	एक ही दिन में कामयाब हो जाने के लिए सिर्फ योजना में जुटे रहते हैं।
10%	अपनी गलतियों को दोहराते रहते हैं तथा कमियों में सुधार नहीं करते।
12 %	निश्चित समयावधि में कार्य शुरू कर पूर्ण नहीं कर पाते हैं।
12 %	सदा असफलता तथा असफलता के भय से डरे रहते हैं।
14%	अपनी ताकत जानते हुए भी अपनी कमजोरियों को गिनते रहते हैं।
44%	शुरू में दो-तीन विफलताएँ मिलते ही असफल लोगों की भीड़ में शामिल होकर आगे के प्रयास छोड़ देते हैं।

जीवन सन्तुलन -

जीवन सन्तुलन हेतु अग्रलिखित तत्त्वों में उचित समन्वयन आवश्यक है।

1. सकारात्मक सोच - सकारात्मक सोच चित्त को 'एकाग्र' तथा स्थिर करती हैं। सकारात्मक सोच के साथ एक 'आशा' जुड़ी है और जहाँ आशा है वहीं सफलता है।

2. सामाजिक जीवन - मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज के प्रति जिम्मेदारियों को पूर्ण करना उसका कर्त्तव्य है। समाज की उन्नति में ही उसका कल्याण निहित है।

3. भौतिक समृद्धि - मानव जीवन में भौतिक सम्पन्नता का भी होना जरूरी है। स्टेट्स के अनुसार ''किसी वांछित वस्तु या पदार्थ का अभाव हमारे उत्साह या लगन में कमी पैदा करता है। यही हमारी सफलता में बाधक है।''

4. मानसिक उन्नति - व्यक्तित्व विकास के क्षेत्र में मानसिक उन्नति पर भी ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि नए लक्ष्यों के निर्माण में ज्ञान व बुद्धि नए विचारों को जन्म देते हैं। यही सफलता का प्रतीक है।

5. शारीरिक स्वस्थता - तन स्वस्थ तो मन स्वस्थ, स्वस्थ मन ही सभी कार्य सही रूप से समय के अन्दर कर सकता है। अतः सेहत का ध्यान रखना आवश्यक है।

6. आध्यात्मिक चेतना - जीवन का मूल्य क्या है ? यह हमें अपनी आध्यात्मिक चेतना से ज्ञात होता है। हम आध्यात्म को जीवन का अंग मानकर आत्म स्वर की उन्नति करते रहें, ऐसा करने से जीवन के प्रति हमारी मानसिकता अनुकूल बनेगी तथा हम जीवन के उद्देश्य की पूर्ति कर लेंगे।

इस प्रकार सर्वथा सकारात्मक ऊर्जा द्वारा ही सफलता की प्रबल संभावना का उदय होता है।

सकारात्मक जीवन के कुछ पठनीय उदाहरण

(1) गत चार वर्षों से सुप्रीम कोर्ट तथा दिल्ली हाईकोर्ट में वकालत कर रहीं 29 वर्षीया अंजली अरोड़ा दृष्टिहीन (Blind) हैं। 15 वर्ष की उम्र में उनकी नेत्र ज्योति चली गई। इसके बावजूद उन्होंने हार नहीं मानी। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय के जीएस एण्ड मैरी कॉलेज से राजनीति विज्ञान में ऑनर्स किया तथा पूरे विश्वविद्यालय में तृतीय स्थान प्राप्त किया। फिर दिल्ली विश्वविद्यालय से कानून (Law) की पढ़ाई की। अपने पहले केस में ही सफलता मिलने के साथ ही डिवीजन बेंच में उनकी प्रशंसा की। अंजली ने जो पहला मुकदमा जीता उससे विकलांगों के अधिकार सुरक्षित कराने के प्रति उनकी गम्भीरता साफ झलकती है।

(2) एक उत्साही नवयुवक का विचार था कि "दुनिया एक ऐसा बड़ा वर्ग है, जो बिना दूसरों के सहारे जीने की कल्पना तक नहीं कर सकता। किसी की सहायता कर दुःख हरने व सुख बाँटने में जो अपूर्व सन्तुष्टि मिलती है, वह अपने स्वार्थों का पीछा करने में संभव नहीं है।"

इस प्रकार उसने 'जन-सेवा' को अपना जीवन-उद्देश्य बनाया। वह व्यक्ति कॉलेज से निकलने के बाद अचानक बीमार पड़ गया। परीक्षण के उपरान्त डॉक्टरों ने कहा कि यह व्यक्ति छह महीने से अधिक नहीं जीवित रह पाएगा। बिस्तर पर लेटे उस युवक ने जब यह सुना तो उसने मुस्करा कर कहा "ईश्वर ने मुझे छह महीने तक जीने की जो अवधि दी है वह कम नहीं है। इस अवधि का अधिकतम सदुपयोग कर मरते समय मुझे कम से कम यह संतोष तो रहेगा कि मैंने सार्थक जीवन जिया।"

अतएव उसने अपना जीवन विकलांग बच्चों के आश्रम को दे दिया। वह किसी प्रकार का अर्थलाभ लिए बिना उन असहाय बच्चों को पढ़ाता-लिखाता, सुविधाओं का ख्याल रखता तथा मनोरंजक कहानियाँ सुनाता। उसने कई विकलांग बच्चों को बड़े होने का अभ्यास कराया तथा उनमें कई सही होकर चले गए।

युवक को पता नहीं चला कि छह महीने कब बीत गए। कब लोगों ने उसे अवधि बीत जाने की बात कही तो उसने कहा "मैंने अपना जीवन पराश्रितों के नाम कर दिया है। मैं अपनी आयु के महीने नहीं गिनता। ईश्वर जब तक चाहे मुझे जिन्दा रखे और मैं अपनी जिन्दगी के प्रत्येक पल का सदुपयोग करूँगा।"

क्या आप जान गए वह युवक कौन था ? वह था जेन एडम्स। जो अस्सी (80) वर्षों तक सार्थक जीवन जीता रहा। वह स्थान अब 'जेन एडन्स आश्रम' के नाम से विख्यात है।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि जब मानव सकारात्मक सोच से सुस्पष्ट उद्देश्य का निर्धारण कर लेता है तब किसी भी प्रकार की शारीरिक या मानसिक कमजोरी प्रभावहीन रहती है।

★ अधिकतर लोग लक्ष्य क्यों नहीं बना पाते हैं ?

- अस्थिर बुद्धि के कारण कोई अन्तिम निर्णय न ले पाना।
- स्वयं पर अविश्वास, संदेह या आत्मविश्वास में कमी।
- निराशावादी नजरिया, संभावना के बजाए मार्ग के अवरोधों पर चिन्तन।
- 'असफलता' की संज्ञा से भय
- पूर्व की असफलता से नकारात्मक मनःस्थिति
- महत्त्वाकांक्षा की कमी (Lack of ambition), कमजोर स्वाभिमान
- संकोची स्वभाव

- सामाजिक उपहास का भय
- दीर्घसूत्रता
- लक्ष्य के महत्त्व की अज्ञानता
- कर्म के प्रति अरुचि
- अनियंत्रित विचार व दिशाहीनता
- चिंताओं में घिरे रहने से मानसिक दुर्बलता

★ लक्ष्य निर्धारण हेतु मेरा सुझाव

आज भी बहुत लोग बिना सोचे-समझे, मन की रुचि को महत्त्व न देकर दूसरों के कहने पर अपने लक्ष्य का चुनाव करते हैं।

ध्यान रखें, आपने जो लक्ष्य निर्धारित किया है, यदि आप उसमें सफलता पाना चाहते हैं तो आवश्यक है कि आपके द्वारा चयनित लक्ष्य आपकी रुचि, स्वभाव व क्षमता के पूर्णतः अनुकूल हो क्योंकि सहजता तथा स्वाभाविकता में ही किसी वस्तु की पूर्णता है।

माना कि कोई वस्तु चौकोर है तो उसकी स्वाभाविक सुन्दरता यही है अब यदि हम उसे गोल करना चाहें तो उसे चारों ओर से काटना पड़ेगा जिसके फलस्वरूप उस वस्तु का काफी हिस्सा व्यर्थ चला जाएगा। इसी प्रकार गोल वस्तु से चौकोर वस्तु बनाने में इसका काफी भाग व्यर्थ चला जाता है। अर्थात् किसी वस्तु की स्वाभाविक प्राकृतिकता में ही उसकी पूर्णता है।

अतः हमें अपनी रुचि तथा स्वाभाविकता के अनुसार आत्म-विवेचन करने के उपरान्त ही लक्ष्य का निर्धारण करना चाहिए। अन्यथा हमारी सफलता संदिग्ध रहती है।

चलते चलते .....

मुझे आशा ही नहीं वरन् विश्वास है कि मेरे इस लेख ने आपके मस्तिष्क में अपने 'लक्ष्य निर्धारण व सफलता प्राप्ति' के सन्दर्भ में कुछ न कुछ योजनाओं का सूत्रपात अवश्य किया होगा।

ईश्वर मुझे तथा आपको अपने-अपने लक्ष्यों में सफल होने की शक्ति प्रदान करे।

✶

संस्मरण

आजादी का दहेज

—अंकुर पटेल

सप्तम 'क'

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस से एक बार एक साहब ने पूछा, ''नेताजी आप शादी क्यों नहीं कर लेते कब तक अविवाहित रहेंगे ?'' नेताजी ने कहा, ''भैया शादी तो मैं कर लूँ, पर कोई दहेज दे तब न। मुझे शादी में दहेज चाहिये।'' ''आप के साथ तो बेटी ब्याहने के लिये कोई भी दहेज दे सकता है।' वह सज्जन बोले। ''मुझे दहेज में आजादी चाहिये।' नेताजी ने कहा। वह सज्जन यह सुनकर नेताजी के सामने नतमस्तक हो गये।

✶

ग्रहों का गुरुत्व बल भिन्न क्यों ?

—रीशु विश्वकर्मा
सप्तम 'ख'

जब हम यह कहते हैं कि हमारा भार 54 किलोग्राम है तो इसका मतलब यह है कि धरती पर हमारा भार 54 किलोग्राम है। भार दर असल द्रव्यमान और धरती के गुरुत्वाकर्षम बल के चलते उत्पन्न होने वाले त्वरण का गुणनफल होता है। सौर मंडल के नौ ग्रहों पर हमारा भार अलग-अलग दर्ज होगा। सामान्य स्थितियों में द्रव्यमान में बदलाव नहीं आता। लेकिन हर ग्रह का गुरुत्व बल भिन्न है। इसलिए हमारा भार हर ग्रह पर भिन्न ही होगा। यही नहीं हम पृथ्वी के केन्द्र से जैसे-जैसे अंतरिक्ष की ओर बढ़ेंगे, हमारा भार घटता चला जाएगा। यदि पृथ्वी पर हमारा भार 50 कि०ग्रा० है, तो केन्द्र से अंतरिक्ष की ओर कितनी दूर जाने पर हमारा भार 25 कि०ग्रा० हो जायेगा ? ग्रहों के गुरुत्व बल में भिन्ता क्यों होती है ? क्या सभी वस्तुओं के बीच आकर्षण बल होता है ? अगर ऐसा है, तो फिर हमें यह बल महसूस क्यों नहीं होता ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त के आधार पर आसानी से समझा जा सकता है। हम यह जानते हैं कि चन्द्रमा पर हमारा भार यहाँ पर 54 कि०ग्रा० है, वह यदि चन्द्रमा पर चला जाए, तो उसका भार 9 कि०ग्रा० दर्ज किया जायेगा। ऐसा धरती और चन्द्रमा के गुरुत्व बल में अन्तर होने के कारण होता है। धरती हमें चन्द्रमा से छह गुने अधिक बल से अपनी तरफ खींचती है।

बहुत पहले पेड़ से सेब गिरने पर न्यूटन ने पता लगाया कि ऐसा धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण होता है। यही नहीं धरती के साथ-साथ विभिन्न वस्तुएँ भी एक दूसरे को अपनी तरफ आकर्षित करती हैं। मान लीजिए एक कक्षा में 20 विद्यार्थी बैठे हैं। जहाँ कक्षा में रखी हुई, मेज कुर्सियाँ धरती के गुरुत्वाकर्षण की वजह से अपने स्थान पर टिकी हुई हैं, वहीं वे एक दूसरे को भी आकर्षित करती हैं। एक मेज पर पड़ी हुई दो पेन्सिलें भी एक दूसरे को आकर्षित करती हैं। लेकिन धरती का गुरुत्व बल सर्वाधिक होता है और शेष वस्तुओं के बीच काम करने वाला बल धरती के गुरुत्व बल की तुलना में नगण्य होता है। इसलिए इसे महसूस नहीं किया जा सकता है। ध्यान दें, तो पता लगता है, जिस वस्तु का द्रव्यमान जितना अधिक होगा, वह उतने ही अधिक बल से दूसरी वस्तु को अपनी ओर खींचेगी। एक दूसरे को अपनी तरफ खींचने की यह शक्ति प्राणियों में भी होती है।

न्यूटन ने इन्हीं तथ्यों के आधार पर गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। उसने बताया कि कोई भी दो वस्तुओं के बीच आकर्षण बल कार्य करता है। और यह दोनों वस्तुओं के द्रव्यमानों के गुणनफल का समानुपाती और दोनों के बीच की दूरी के वर्ग का विलोमानुपाती होता है। वस्तुओं के बीच की दूरी दोनों वस्तुओं के केन्द्र से नापी जानी चाहिए। यदि द्रव्यमानों के गुणनफल को दूरी के वर्ग से भाग देकर एक विशेष संख्या से गुणा किया जाए तो हमें दोनों वस्तुओं के बीच काम करने वाले बल का पता लग जाएगा। इस विशेष संख्या का मान 6.6734 को 1000000000000 से भाग देने पर प्राप्त होगा। इसे अंग्रेजी के बड़े अक्षर 'जी' से दर्शाते हैं।

अब आप अपने समान भार वाले मित्र के बीच का आकर्षण बल बड़ी आसानी से निकाल सकते हैं। अपने और अपने मित्र के भार को निकालिये और दोनों के बीच की दूरी के वर्ग से भाग देकर 'जी' से गुणा कर दीजिए। आप देखेंगे कि आकर्षण बल बहुत ही कम हो जायेगा। इसी तरह यदि पृथ्वी और अपने बीच के आकर्षण बल की गणना की जाए तो वह काफी अधिक होगा। आपके और आपके मित्र के आकर्षण बल का करोड़ गुना से भी अधिक। यही कारण है कि हमें एक दूसरे के बीच का आकर्षण बल महसूस नहीं होता है।

अब तक आप समझ गये होंगे कि सभी ग्रहों का गुरुत्व बल भिन्न द्रव्यमान में भिन्नता होने के कारण होता है। धरती के मुकाबले जिस ग्रह का द्रव्यमान जितना कम या अधिक होगा, उसका गुरुत्व बल भी उसी आधार पर कम या अधिक होगा। यहाँ, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ग्रह जिस वस्तु को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है, उसका द्रव्यमान भी खासा महत्त्वपूर्ण होता है।

न्यूटन का यह सिद्धान्त काफी महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। इसी सिद्धान्त के आधार पर मंगल से धरती के बीच अंतरिक्ष बस चलाने की कल्पना की। ✶

सुसुप्त हिन्दुत्व

—सूरज पटेल
एकादश 'ख'

''भरी दुपहरी में अँधियारा, सूरज परछाई से हारा ।
आहुति बाकी यज्ञ अधूरा, अपनों के विघ्नों ने घेरा ।।
अन्तिम जय का वज्र बनाने, नव दधीचि हड्डियाँ गलायें ।
आओ फिर से दिया जलायें ।।''

कविवर अटल बिहारी बाजपेयी की ये पंक्तियाँ मात्र चंद छन्दबद्ध शब्द ही नहीं अपितु वर्तमान सामाजिक प्रतिबिम्ब तथा उसके दर्पण पर जमी धूल हटाने की उद्घोषक भी हैं ।

ऐसा लगता है कि चाणक्य का कथन 'आर्य कभी दास नहीं बन सकता' मात्र विद्वानों के साहित्य का रूपक बनकर रह गया है, सामाजिक रूप से इसका प्रभाव परिलक्षित नहीं हो रहा है ।

शंकराचार्य का गिरफ्तार होना मात्र एक सामान्य राजनीतिक गिरफ्तारी नहीं अपितु आर्यों के पराक्रम को चुनौती देता एक कुठाराघात है, यह हमारे तेजस की प्रचण्ड अग्नि परीक्षा है । इस घटना से उद्घाटित होने वाले प्रश्नों में मीडिया द्वारा उछाला गया प्रश्न यह है कि शंकराचार्य के साथ निम्नस्तरीय व्यवहार क्यों किया गया । आम आदमी के मानस पर थोपा जा रहा प्रश्न है कि शंकराचार्य दोषी हैं या नहीं ।

परन्तु वह प्रश्न जो इस लेख कासार है और जिसे खुलकर सामाजिक मंच पर प्रकट करने से लोग कन्नी काट रहे हैं, वह यह है कि मात्र हिन्दू धर्म के प्रमुख के साथ ऐसा व्यवहार क्यों चंद पुछल्लों सबूतों के आधार पर वे हमारे शीर्षस्थ धर्मगुरु को गिरफ्तार कर लें ।

वास्तविकता यह है कि शंकराचार्य को बिना वारन्ट के मात्र पूछताछ के आधार पर गिरफ्तार किया गया । उन पर यह आरोप है कि शंकररमण की हत्या के पश्चात् वे नेपाल भागना चाहते थे ।

क्या उन तथाकथित संविधान के रक्षकों को इतनी समझ नहीं कि जेड श्रेणी की सुरक्षा का व्यक्ति नेपाल क्यों भागेगा ? आश्चर्यजनक व विवादित तथ्य यह है कि मात्र हिन्दू धर्माचार्य, जो सर्वाधिक वेदाग धर्मज्ञ माने जाते हैं, उन्हें ही गिरफ्तर कर क्या सत्ता के पीछे लार टपकाने वाले कुत्ते हमारी सहिष्णुता की परीक्षा लेना चाहते हैं । यदि वे संविधान के इतने महान् रक्षक हैं तो दिल्ली का शाही इमाम छह-छह गैर जमानती वारंटों के बावजूद खुला क्यों घूम रहा है ।

याद रहे यदि हम अब भी सावधान न हुए तो हिन्दू धर्म का सनातनत्व खतरे में पड़ जायेगा ।

स्वराष्ट्र हित में ...

उच्च जीत से निम्न हार त
तीक्ष्ण प्रकाश से गहरे अँधियार तक
विश्व विजय से मुगल ललकार तक
पृथ्वीराज से अंग्रेज सरकार तक
पतित भारत को उठना होगा ।
स्वराष्ट्र हित में जलना होगा ।।
प्रचण्ड अग्नि से क्षरित क्षार तक ।

तपः भूमि से रंग बहार तक ।
रामराज्य से चीख पुकार तक ।
पंचशील से जनादेश हार तक ।
फुँके हुए भारत में पय बरसाना होगा ।
स्वराष्ट्र हित में जलना होगा ।।

*

सरकारी अस्पताल

—विपिन वर्मा

द्वादश 'क'

एक दिन हरिया का बेटा बीमार पड़ा। गाँव के लोगों के कहने पर हरिया शहर के सरकारी अस्पताल में अपने बेटे को दिखाने के लिए ले गया। शहर में आने पर बड़ी-बड़ी इमारतें इधर-उधर देखकर हरिया को कुछ समझ में नहीं आया कि वह कहाँ जाए। तभी एक व्यक्ति आया जो हरिया को थोड़ी देर पहले खड़ा देख रहा था, उसने हरिया से गाँव से शहर तक आने के विषय में कई प्रश्न धड़ाधड़ पूछ डाले। हरिया को लगा कि कोई जान-पहचान का मिल गया। वह व्यक्ति हरिया को अस्पताल में ले गया, इसके बदले में उसने हरिया से पचास रुपए ले लिए। डॉक्टर ने देखने के लिए अस्सी रुपए लिए व उसके बेटे को भर्ती करने के दो सौ रुपए ले लिए। उसके बाद दवाओं का पर्चा बनाकर दवा लाने के लिए कहा। हरिया को यह राग कुछ समझ में नहीं आया, उसने कम्पाउण्डर से एकान्त में पूछा कि भैया ये सरकारी अस्पताल तो है ना, इस पर कम्पाउण्डर ने कहा कि ये सरकारी अस्पताल तो है पर यहाँ कुछ भी सरकारी नहीं है ?

*

वह ममता का आँचल

—अनिल कुमार

एकादश 'ख'

सायंकाल का समय था, मैं चाय पीने हेतु पास की ही दुकान पर गया हुआ था। मैं चाय पी रहा था कि अचानक मेरी दृष्टि एक चेहरे से टकराई और निगाहें थम सी गईं, कारण था उस चेहरे में गम की परछाई का साफ-साफ प्रतिबिम्बित होना, आज पहली बार उस चेहरे में मुझे गम की लकीरें दिख रहीं थीं, आज से पहले दिखने वाली मुस्कान शायद उस चेहरे की वास्तविकता के ऊपर एक परदा था, जिसने आज तक उस चेहरे के वास्तविक स्वरूप को सामने नहीं आने दिया था। चेहरे में प्रतिबिम्बित हो रही भाव-सरिता की हिलोरें मेरे मानस को उद्वेलित कर रही थीं और साथ ही साथ प्रेरित भी कर रहीं थीं उनके पास जाने के लिए। चूँकि यह चेहरा मेरे लिए नया नहीं था, अतः पास जाकर कारण पूछने के लिए मुझे साहस जुटाने की आवश्यकता न थी। मैं उनके पास गया और उनसे उनके दुःखी होने का कारण पूछा, तो उनके नयनों से बहने वाली अश्रुधारा मानों उनके आक्रोश को प्रदर्शित करने का सफल प्रयास करती प्रतीत होने लगी और बन्द अधर मानों किसी असंतोष के प्रलयरूपी तूफान का मौन व्याख्यान देते प्रतीत होने लगे। मैं इस दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित रह गया और प्रतीक्षा करने लगा उनके अधरों से शब्दोचारण के प्रारम्भ होने का। चारों ओर चहल-पहल मानों उस मौन व्याख्यान की महत्ता का मजाक बना रही थी। क्षणिक शांति के पश्चात् जब उनके अधर परस्पर टकराए तो मन की जिज्ञासा और बढ़ी और मेरे मानस के उद्वेलन में मानो ठहराव आने लगा किन्तु उनकी पहली बात ने जहाँ एक ओर मुझे गम्भीरता प्रदर्शित करने का संकेत किया वहीं दूसरी ओर उनके दुःखी होने के कारण की गहराई में जाने की उत्सुकता, क्योंकि उनकी पहली बात थी - ''हँसते हुए चेहरे का गम पढ़ना कितना कठिन होता है।'' मेरे द्वारा कारण स्पष्ट करने की बात कहने पर उन्होंने बताया - ''इधर कुच दिनों से मेरी पढ़ाई उतनी अच्छी नहीं हो पा रही है, मैं खुद से बहुत निराश होता जा रहा हूँ ऐसा लगता है मानो मेरा भविष्य एवं मेरा अस्तित्व दोनों ही नष्ट होते जा रहे हैं, मैं खुद को पतन के गर्त में जाते देख रहा हूँ। मैं अपनी पूरी ताकत के साथ दिन रात पढ़था हूँ और सुबह जब उठता हूँ तो पाता हूँ कि मुझे सबकुछ विस्मृत हो गया, मेरी मेहनत व्यर्थ चली गई और तब मुझे दुःख होता है क्योंकि मेरा मन जा पहुँचता है मेरे माता-पिता के पास, तब मैं सोचता हूँ कि मुझे किन आशाओं के साथ भेजा गया है यहाँ, क्या मैं अपने माता-पिता के साथ धोखा नहीं कर रहा हूँ ? यदि मैं धोखा नहीं कर रहा हूँ, तो मेरा प्रदर्शन तो खराब चल रहा है, क्या मेरे माता-पिता इसके पीछे छिपे कारण को जानने का प्रयास करेंगे? क्यों वे मुझे समझने का प्रयास करेंगे ? क्या वे मुझको सही से जान पाएँगे ? शायद नहीं, क्योंकि जब एक बच्चा इस समाज में कदम रखकर इस दुनिया को जानना प्रारम्भ करता है, जब इस वातावरण में व्याप्त अच्छाइयों व बुराइयों से उसका साक्षात्कार होता है तो ऐसे समय में आवश्यकता होती है माता-पिता के सानिध्य व प्यार के अहसास की क्योंकि इन्हीं के द्वारा हमारे पथ को प्रकाशित किया जाता है और ये समझते हैं हमारे न्दर के सद्भावों को, हमारी कमियों को व प्रयास करते हैं, इन कमियों को दूर करने का और काम करते हैं अन्दर जोश, जुनून, आत्मविश्वास आदि गुणों को भरने का एवं माता-पिता का प्यार भरा हाथ जब मस्तक पर आशीष प्रदान करने हेतु रखता है तो अहसास होता है किसी के साथ होने का, मन में भाव पनपता है कि मेरे मम्मी-पापा तो मुझे समझते ही हैं कम से कम उन्हें तो मुझपर पूर्ण विश्वास है ही। किन्तु आजकल माता-पिता इस समय के पूर्व ही भेज चुके होते हैं बच्चों को अपने से दूर, तो कैसे यह सब सम्भव है, आखिर कैसे समझेंगे माता-पिता अपने बच्चों के गुणों को और कौन करेगा जोश, जुनून व आत्मविश्वास भरने का काम, कौन कराएगा साथ होने का अहसास, कौन करेगा बुराइयों को दूर .....।'' मैं उनके दुःख का कारण भलीभाँति समझ चुका था और मेरी दृष्टि में भी माता-पिता को कम से कम अपने बच्चे को इतना परिपक्व बना कर समाज में अकेला छोड़ना चाहिए कि वह समाज में सबको परखना जान चुका हो, और बचपन का माता-पिता का लाड़-प्यार प्राप्त कर चुका हो क्योंकि बचपन में माता-पिता का दुलार-प्यार ही बच्चे को भविष्य में भी किसी के अपने होने का अहसास कराता रहता है। इसके महत्त्व को प्रेमचन्द जी ने इस प्रकार व्यक्त किया है - ''बचपन वह उम्र है जब मोहब्बत की सबसे अधिक जरूरत होती है, यदि यह मिल जाती है, तो बच्चा एक बीज से पनपकर वृक्ष बन जाता है और जो बचपन में मोहब्बत का भूखा रह जाता है वह उसी प्रकार सूख जाता है, जैसे बिना नीर के एक वृक्ष।''

भारतीय इतिहास का गणितकार - 'भास्कर'

—निशान्त सिंह

अष्टम 'क'

'भास्कर' अर्थात् एक ऐसा प्रकाशपुञ्ज, जो निरन्तर अपनी प्रज्वल क्षमता को सार्थक करते हुए सम्पूर्ण विश्व पथ पर निराली तथा मनोरम छटा बिखेर जाए।

महान् गणितज्ञ भास्कर ने अपना यह नाम पूर्णरूपेण सार्थक किया और गणित के तीनों ही भागों का ज्ञान प्राप्त कराया। ऐसे महान् ज्योति पुञ्ज ही इतिहास के स्थायी तत्व बनते हैं।

'भास्कर' का जन्म दक्षिण कर्नाटक प्रान्त की तराई मे बीजापुर ग्राम में हुआ था। सन् 1114 ईसवी में जन्मे 'भास्कर' बचपन से ही काफी विद्वान थे। इसी विलक्षण प्रतिभा के कारण ये समाज में **'भास्कराचार्य'** नाम से प्रसिद्ध थे।

कार्य की दृष्टि से देखने पर यह प्राप्त होता है कि ये सर्वप्रथम 'उज्ञयिनी-वेधशाला' के निदेशक पद पर नियुक्त किए गए थे। इस कार्य के साथ ही साथ वे अपने शोधकार्यों को भी प्रगतित करते जाते थे।

'भास्कर' का सर्वप्रथम, सर्वश्रेष्ठ तथा सर्व प्रतिष्ठित महान् ग्रन्थ **'लीलावती'** माना जाता है। इसी ग्रन्थ में उन्होंने अंकगणित, बीजगणित के साथ-साथ ज्यामितीय सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया।

'भास्कर' ने अंकगणित, बीजगणित तथा ज्यामितीय सिद्धान्तों पर महत्त्वपूर्ण शोध किया है। उनकी इस पुस्तक में कई अध्यायों का समावेश है। यथा - **त्रैराशिक, बीजगणितम्, क्षेत्रव्यवहारम् इत्यादि।**

'लीलावती' पुस्तक का नामकरण 'भास्कर' ने अपनी प्रियतमा पुत्री 'लीलावती' के नाम से किया था। इस पुस्तक की प्रथम प्रति भी उन्होंने इसे अपनी पुत्री को ही भेंट की थी। ज्ञातव्य है कि - ''भास्कर-पुत्री लीलावती भी एक प्रकाण्ड गणितज्ञा थी।''

'लीलावती' पुस्तक के 'क्षेत्र व्यवहार' नामक अध्याय में निम्नांकित तीन महत्त्वपूर्ण ज्यामितीय प्रकरणों का समावेश किया गया है -

(क) समकोण त्रिभुजों पर प्रश्न
(ख) त्रिभुजों तथा चतुर्भुजों के क्षेत्रफल
(ग) वृत्तों के क्षेत्रफल तथा पाई (π) का मान
(घ) गोलों के तल एवम् आयतन

समकोण त्रिभुजों पर आधारित, भास्कर ने अति रोचक प्रश्न दिए हैं। ये संस्कृत भाषा में श्लोक रूप में विरचित किए गए हैं। इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

(क) **'लीलावती' श्लोक - 67**

यदि समभुवि वेणुद्वि त्रिपाणि प्रमाणो
गणक पवनवेगा देकदेशे स भग्नः।
भुवि नृपमित हस्तेष्वगलग्म तदग्रम्
कथ्य कतिषु मूलादेष भग्नः करेषु ॥

भावार्थ - जल सम भूमि में बत्तीस हाथ लम्बा एक सीधा बाँस खड़ा है। वह वायुवेग से टूट पड़ा और उसका ऊपरी भाग अपने मूल से सोलह हाथ की दूरी पर जा लगा। तो बताओ कि बाँस अपने मूल से कितनी ऊँचाई पर टूटा था और टूटे हुए भाग की लम्बाई क्या थी?

(ख) 'लीलावती' श्लोक- 68

अस्ति स्तम्भतले बिलं तदुपरि क्रीड़ा शिखम्डी स्थितः ।
स्तम्भे हस्तनवोच्छिते त्रिगुणित स्तम्भ प्रमाणन्तरे ।।
दृष्वाहिं बिलमावृजन्तमपत्तत्तिर्यवस तस्तोपरि ।
क्षिपं ब्रूहि तयोर्बिलात्कतिमितै साम्येन गत्योयुर्तिः ।।

भास्कर अपने पूर्वजों की कृतियों से भलीभाँति परिचित थे। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ 'लीलावती' का अंग्रेजी अनुवाद 'टेलर' ने 1816 ई० में किया था। फारसी भाषा में इसका अनुवाद फैजी ने 1587 ई० में किया था।

भास्कर के नाम पर भारत के द्वितीय उपग्रह का नामकरण 1980-81 में किया गया। भारत माता के इस महत्तम गणितज्ञ ने सन् ग्यारह सौ पिचासी ईसवी में सदैव के लिए आँखें मूँद लीं।

अन्त में इस महासपूत को हमारा शत्-शत् नमन .....।

✶

खाली पड़ा घर

—अंकुर कटियार
एकादश 'ख'

एक बहुत पुरानी बात है कि एक घाटीपुर नामक गाँव में एक किसान राकेश रहता था। उस गाँव में राकेश जैसे गरीब किसान अपेक्षाकृत कम थे तथा जमींदार लोग अधिक थे। राकेश का जमींदारों पर अत्यधिक कर्ज था। जमींदार लोग राकेश को बहुत अधिक परेशान तथा प्रताड़ित करते थे, राकेश जमींदारों के नाम से काँपता था, वह जमींदारों से इतना अधिक डरता था कि वह जमींदारों के सामने तक नहीं आता था, कर्ज चुकाने के लिए वह जमींदारों के खेतों पर दिन-रात अपनी पत्नी सुशीला के साथ मेहनत से मजदूरी करता था। उसके घर में उसके अतिरिक्त उसकी पत्नी, दो पुत्री, एक छोटा पुत्र तथा एक बड़ा पुत्र रमेश था। एक दिन राकेश तथा सुशीला खेत पर काम करते-करते मर गए, उसके बच्चे सब स्कूल गए थे। विद्यालय से वापस आने के बाद यह बात उसकी संतानों को पता चली, उसके बाद उनके पास कर्ज और अधिक बढ़ गया। रमेश अपनी दादी तथा बाबा के साथ गाँव में रहता था। एक वर्ष पश्चात् उसके दादी तथा बाबा भी छोड़कर चले गए, रमेश अपने भाई-बहनों के साथ शहर में अपने मामा के पास आ गया, वह (रमेश) अपने मामा से बोला ''आप मेरे भाई तथा बहों को पढ़ा दीजिए। बाकी सारा खर्चा मैं दूँगा।'' उसके मामा ने उसकी बात मान ली। रमेश दूसरी जगह पर मजदूरी करता था तथा रात्रि में रिक्शा चलाता था, अगले दिन आकर अपने भाई-बहनों को खाना देता था। आवश्यकता पड़ने पर रमेश उन्हें भोजन भी देता था, कुछ वर्षों बाद रमेश के मामा ने उसकी बहनों की शादी कर दी तथा उसका भाई बड़ा अधिकारी आई०ए०एस० बन गया था। उसने अपनी जमीन बेंचकर अपनी बहनों की शादी कर दी थी। उसका भाई नौकरी करने चला गया था, अब उसे केवल एक कर्ज चुकाना था। वह था अपने भाई-बहनों की फीस अपने मामा को देना। जब उसने अपने मामा को सारी फीस दी, तब वह उनका घर छोड़कर जा चुका था। उसके भाई की शादी भी तब तक हो चुकी थी। उसने अपने माता-पिता की इच्छा पूर्ति कर दी थी, उसके छोटे भाई ने उससे घर में रहने के लिए कहा। किन्तु वह उसके घर में नहीं रुका और वहाँ से चल दिया, वह उसके घर से अत्यधिक दूर आकर एक कुटिया बनाकर रहने लगे। सर्दियों के दिनों में उसके पास ओढ़ने के लिए कुछ नहीं था। अतः वह कुटिया के बाहर आग जलाकर बैठा। आग बुझ गयी किन्तु उसकी सर्दी नहीं बुझी, उसने अपने प्राण उसी स्थान पर त्याग दिए। उसकी लाश को किसी ने नहीं देखा। अन्त में प्रकृति ने उसके तन को श्वेत रंग की बर्फ से ढक दिया। कभी-कभी भगवान भी ऐसा करता है जो किसी को भी पसन्द नहीं आता है।

✶

जनसेवक जनत्राता : स्वामी विवेकानन्द

—सुयश मधुर
नवम 'क'

स्वामी विवेकानन्द जी का इस मोक्षप्रदायिनी धरा पर आविर्भाव उस समय तथा उस परिस्थिति में हुआ जब इस भारतवर्ष में ही भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव शनैः-शनैः बढ़ने लगा तथा भारतीय संस्कृति का अस्तित्व अंधकारमय प्रतीत होने लगा तथा भारत माता को आवश्यकता महसूस हुई एक ऐसे पुत्र की जो कि, न केवल भारत अपितु सम्पूर्ण विश्व के जनमानस को इस भारतीय संस्कृति के दैदीप्यमान प्रकाश से आलोकित कर सके।

स्वामी जी ने आजीवन किसी न किसी रूप में भारत तथा भारतीयता की सेवा में रत रहकर, अपने जीवन को यथार्थ सिद्ध कर दिया।

जीवन-परिचय - स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म कलकत्ता में 12 जनवरी सन् 1863 ई० में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री विश्वनाथ दत्त तथा माता का नाम श्रीमती भुवनेश्वरी देवी था।

'मणि के माणिक्य' को वही जान सकता है, जिसे इस विषय में सम्पूर्ण जानकारी हो। ऐसा विचार करके, स्वामी जी के माता-पिता ने इन्हें माध्यमिक शिक्षा की प्राप्ति के लिए श्री ईश्वर चन्द्र विद्यासागर जी के विद्यालय में भर्ती कराया जो कि, उस समय का एक उत्कृष्ट विद्यालय था।

किन्तु, स्वामी जी ने यहाँ भी अपनी अपूर्व मेधा से सभी को अभिभूत करते हुए तीन वर्ष में तैयार की जाने वाली विषयवस्तु को 1 वर्ष में ही तैयार करके आवश्यक परीक्षा भी ससम्मान अंकों के साथ उत्तीर्ण की।

इस घटना से यह सिद्ध होता है कि, स्वामी जी बाल्यकाल से ही अत्यन्त मेधावी प्रकृति के थे। इनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। जब ये 16 वर्ष की आयु के थे तब इन्होंने दर्शनशास्त्र में गहरी रुचि होने के कारण किसी विद्यालय में प्रवेश ले लिया। उन्हें अंग्रेजी भाषा में महारत हासिल थी।

स्वामी जी ने वेदों, शास्त्रों तथा पुराणों का गहन अध्ययन किया तथा प्राप्त ज्ञान को एक विशेष माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। स्वामी विवेकानन्द जी को संगीत का भी काफी अच्छा ज्ञान प्राप्त था, इसका प्रमाण तब मिलता है जब उन्होंने पहली बार में ही अपने गान के माध्यम से स्वामी रामकृष्ण जी को मंत्रमुग्ध कर दिया था। स्वामी जी के इन सभी गुणों का एकमात्र मूल उनकी अत्यन्त तीव्र स्मरण शक्ति थी। जिसके कारण वे जो कुछ भी एक बार पढ़ लेते थे वह उन्हें जीवन भर के लिए याद हो जाता था।

जीवन में यश-प्राप्ति तथा पथ-प्रदर्शन के लिए किसी न किसी 'गुरु' या 'आचार्य' की आवश्यकता हर मनुष्य को अपने जीवन में होती है। इसी प्रकार, विवेकानन्द जी को भी अपने पथ-प्रदर्शन के लिए किसी गुरु की आवश्यकता महसूस हुई क्योंकि, रामचरित मानस में कहा गया है -

रवि पञ्चम जाके नहीं, ताहि चतुर्थी नाहिं।
सप्तम वाके वसत हैं, ताहि तीसरो नाहिं ॥

गुरु की खोज में रत रहते हुए स्वामी जी को जब स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी के बारे में पता चला तो वे उनसे मिलने के लिये दक्षिणेश्वर गए।

प्रारम्भ में तो स्वामी जी नास्तिक थे परन्तु रामकृष्ण जी से भेंट के पश्चात् उन्हें ईश्वर की उपस्थिति का ज्ञान हुआ।

उनकी रचना धर्मिता- स्वामी जी का सम्पूर्ण जीवन एक साधना के रूप में चलता रहा। उन्होंने कर्म योग की व्याख्या में एकाध-बार इस बात पर जोर दिया है कि, लक्ष्य के एक बार निर्धारित होते ही फिर उसके अनुरूप जीवन

का गठन प्रारम्भ हो जाता है। उनका कथन था कि, लक्ष्य के अभाव में हमारी 99 शक्तियाँ इधर-उधर बिखर कर नष्ट हो जाती हैं। आध्यात्मिक आदर्श के अभाव में हम अपनी अंतर्निहित दिव्यता एवं पूर्णता को भुलाकर देह व मन तक ही अपना परिचय मान बैठते हैं। हमारे समस्त दुःखों, कष्टों एवं विषादों का मूल कारण यह आत्म-विस्मृति ही है। यह अज्ञान ही इस नैराश्य का मूल है। इसी कारण हम स्वयं को पापी, दुष्ट, दरिद्र और दीन-हीन मान बैठे हैं और दूसरों के प्रति भी ऐसी धारणाएँ रखते हैं। इसका एकमात्र समाधान अपनी दिव्य प्रकृति एवं आत्म शक्ति का जागरण है। वह जोर देते हुए कहते हैं कि, आध्यात्मिक और केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही हमारे दुःख व कष्टों को सदा के लिए समाप्त कर सकता है। अपनी पुस्तक कर्मयोग में उन्होंने यह कहा है कि, साहित्य का कर्म सिद्धान्त में खास योगदान है।

अभूतपूर्व देशभक्त - वास्तव में स्वामी विवेकानन्द जी में देशभक्ति की भावना कूट-कूट कर भरी थी। प्रस्तुत घटना इस बात को सत्य सिद्ध करती है -

एक बार स्वामी विदेश से किसी सम्मेलन में भाग लेकर लौटे और जब वे ट्रेन से उतरे त्यों ही उन्होंने जमीन पर लोटना आरम्भ कर दिया। जब उनके किसी प्रशंसक ने उनसे पूछा, ''आपने ऐसा क्यों किया ?'' तो उनका उत्तर था, ''मैं बहुत दिनों बाद विदेश से वापस आया हूँ अतः माँ को प्रसन्नता से गले लगा रहा हूँ।''

जनसेवक जनत्राता - स्वामी जी ने आजीवन भारत तथा भारतीयता की सेवा कर जो महान् कार्य किया है वह आज भी भारतीय इतिहास के स्वर्मिण पत्रों में उल्लिखित है।

मृत्यु - ईश्वरीय सत्ता तथा हिन्दू धर्म में विश्वास करने वाले महान् व्यक्तित्व का देहावसान 4 जुलाई सन् 1902 ई० को हुआ।

उपसंहार - शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में हिन्दू धर्म तथा भारतीय संस्कृति के स्वरूप को एक नये तथा प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने वाले महान् चिन्तक, दार्शनिक, मनीषी स्वामी विवेकानन्द जी तो अब नहीं है किन्तु, उनके सिद्धान्त हमारे पथ-प्रदर्शन के लिए आज भी जीवन्त है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने उनकी मनीषा को स्वीकार करते हुए कहा है, ''भारत को जानने के लिए स्वामी विवेकान्नद जी को पढ़ो।''

✶

बादशाह का स्वप्न

—अभिषेक अग्रवाल

नवम 'ग'

एक बार एक बादशाह ने स्वप्न में देखा कि, ''एक बगीचे में बहुत से फूल खिले हुये थे। थोड़े समय बाद उसमें केवल एक ही फूल बचा। बादशाह ने एक ज्योतिषी से स्वप्न का अर्थ पूछा। इस पर उस ज्योतिषी ने कहा कि, ''तुम्हारे परिवार के सभी लोग मर जायेंगे, केवल तुम ही बचे रहोगे।'' इससे रुष्ट होकर राजा ने ज्योतिषी को कैदखाने में डलवा दिया। अब बादशाह ने इसी स्वप्न का अर्थ दूसरे ज्योतिषी से पूछा, तो उसने कहा कि ''आपके परिवार में आपको सबसे अधिक आयु प्राप्त होगी।'' इससे प्रसन्न होकर बादशाह ने उस ज्योतिषी को पुरस्कार देने की घोषणा की तो ज्योतिषी ने कहा कि ''यदि आप मुझे कुछ देना ही चाहते हैं तो उस ज्योतिषी को मुक्त कर दीजिए।'' क्योंकि उन दोनों ज्योतिषी के अर्थ समान थे। महाकवि भास ने ठीक ही कहा है कि ''कठोर एवं सत्य वचन भी मनुष्य को हितकर नहीं लगते।''

✶

हास्य-कथा

शेखचिल्ली की मरियल घोड़ी

—हिमांशु तिवारी

अष्टम 'ख'

यह हास्य कथा हमको यह सीख देती है कि यदि हम दुनिया के कहने पर अपने निर्णय बदलते रहेंगे तो नुकसान भी उठायेंगे और हँसी के पात्र भी बनेंगे । — सम्पादक

एक बार शेखजी अपनी घोड़ी पर सवार थे और बेगम को साथ लेकर ससुराल से आ रहे थे । घोड़ी बहुत दुबली-पतली थी । शेखजी उसी पर सवार थे और बेगम पीछे-पीछे पैदल चल रही थी । कुछ दूर चलकर उन्हें एक आदमी मिला, उसने शेखजी को देखकर कहा - ''कैसा मूर्ख आदमी है, बेचारी औरत तो पैदल चल रही है और खुद मज़े से घोड़ी पर लदा जा रहा है ।''

शेखजी ने यह सुनकर कहा - ''बेगम ! मैं उतर जाता हूँ, आप तशरीफ लाइए ।' बेगम साहिबा पैदल चलने के कारण थक गई थीं, सो झट से घोड़ी पर बैठ गईं । अब शेखजी पैदल चल रहे थे । थोड़ी दूर जाकर उन्हें कुछ महिलाएँ मिलीं जो पनघट पर पानी भर रही थीं । उन्होंने शेखजी को देखकर कहा - ''कैसा मूर्ख आदमी है, खुद तो पैदल चल रहा है और जनानी को घोड़ी पर ले जा रहा है ।'' शेखजी ने जब ये बातें सुनी तो उचक कर खुद भी घोड़ी पर सवार हो गए । अब कमजोर घोड़ी दो जनों के बोझ से दबी जा रही थी और एकदम चलने को तैयार न थी, पर शेखजी उस पर बराबर चाबुक बरसा रहे थे । आगे चलकर उन्हें कुछ राहगीर मिले । उन्होंने शेखजी को देखकर कहा - ''कैसा मूर्ख आदमी है, बेजुबान पशु को इस तरह तंग कर रहा है ।'' शेखजी ने सुनकर कहा - ''बेगम ! उतरिए दुनिया वाले बिल्कुल मूर्ख हैं ।'' अब दोनों पैदल चल रहे थे और घोड़ी खाली चल रही थी । आगे चलकर फिर कुछ लोग मिले । उन्होंने शेखजी को देखकर कहा - ''कैसा मूर्ख आदमी है, खुद तो पैदल चल रहा है जबकि घोड़ी साथ में है ।''

शेखजी यह सुनकर एकदम भड़क गए और घोड़ी को गिराकर उसके पाँव बाँधकर कन्धे पर उठाकर चल दिए ।

थोड़ी दूर पर कुछ और लोग मिले और शेखजी को देखकर तालियाँ बजाने लगे और कहने लगे ''मूर्ख है ।'' शेखजी को बड़ा गुस्सा आया । उन्होंने घोड़ी को कुएँ में फेंक दिया और घर आ गए ।

✶

एक अनीह अरूप अनामा । अज सच्चिदानंद पर धामा ॥
व्यापक बिस्वरूप भगवाना । तेहिं धरि देह चरित कृत नाना ॥

संगठित कार्यशक्ति

—पं० दीनदयाल उपाध्याय

राष्ट्र को परम वैभव पर ले जाने के लिए दो शर्तें हमारे सामने पूर्ण करने के लिए हैं तब ही वह वैभव, राष्ट्र का सच्चा वैभव सिद्ध होगा। पहली बात है कि यह वैभव हमारे अपने पुरुषार्थ से प्राप्त होना चाहिए। इसके लिए सम्पूर्ण राष्ट्र की संगठित कार्य शक्ति होना आवश्यक है। यह शर्त पूरी होगी तो ही उस वैभव को हम भारत का सच्चा वैभव कह सकेंगे। साथ ही, दूसरी बात कही गयी है कि संगठित कार्यशक्ति के द्वारा वैभव प्राप्त करने की यह सफलता धर्म का संरक्षण करते हुए होना चाहिए। केवल संगठित शक्ति ही पर्याप्त नहीं है। चार चोर भी आपस में मजबूत संगठन बना सकते हैं। किन्तु वह संगठन न तो स्थायी होगा और न ही कल्याणकारी। इसलिए यह जरूरी है कि धर्म का संरक्षण करते हुए हमारी संगठित कार्यशक्ति 'विजेत्री' हो।

पं० दीनदयाल उपाध्याय

पं० दीनदयालय उपाध्याय नाम था - निष्काम कर्मयोगी का।

वह निष्काम कर्मयोगी अपनी अजस्र सेवा और अविराम कर्मसाधना द्वारा सामाजिक ऊँच-नीच की दीवारों को ढहाकर, आर्थिक-शोषण एवं दोहण के उत्पीड़न को समाप्त कर, राजनीतिक स्वेच्छाचारिता एवं सत्तांधता के भीषण अनाचार को मिटाकर क्षेत्र, प्रान्त, भाषा और सम्प्रदाय आदि के संकुचित वैषम्य खत्म कर सम्पूर्ण मानव मात्र को समता एवं एकसूत्रता के समतल धरातल पर लाना चाहता था।

विचार

—पं० दीनदयाल उपाध्याय

हमें मुसलमान चाहिए, हमें साम्यवादी भी चाहिए, हमें सभी प्रान्त के व्यक्ति चाहिए, जो भारत में हैं और जो भी भारतीय परम्पराओं में आस्था रखने को तत्पर हैं, वे कोई भी हों, हमें उन सबका सहयोग चाहिए।

नयी पीढ़ी आगे आये

—पं० दीनदयाल उपाध्याय

नये युग का आविर्भाव हो रहा है। उसके लिये नये विचार, नयी नीति और नये नेतृत्व की आवश्यकता है। पुरानी पीढ़ी अपना काम कर गयी, अब नई पीढ़ी को आगे आना होगा।

★

सोलह भाषाओं में नये वर्ष की बधाई

—शिवम श्रीवास्तव
नवम 'ग'

हिन्दी	-	नव वर्ष मंगलमय हो
अंग्रेजी	-	हैप्पी न्यू इयर
उर्दू	-	साल मुबारक
मराठी	-	नवीन वर्ष सुखाये जाओ
तमिल	-	यु चु वर्ष बाझम
अरबी	-	मिलन आई दिन
उड़िया	-	नूतन वर्ष सुखेर जाऊ
कच्छी	-	खासो ठीन
सिंधी	-	न्यू साल जी मुबारक
गुजराती	-	नव वर्ष सफल धावो
कन्नड़	-	शुभ कोण बंसन बांगड़ी
फ्रेंच	-	न्यू हेरे बाओ
संस्कृत	-	सूतन वर्ष सुखी भवतु
बंगाली	-	सूखी नूतन सर
लैटिन	-	बी आई से अनुसीन ब्रस
जर्मन	-	ग्लूक सिचन्यू जाहर

★

हमारे जीवन दीप

—रीशु विश्वकर्मा
सप्तम 'ख'

- जिस आदमी की त्याग की भावना अपनी जाति से आगे नहीं बढ़ती, वह स्वयं स्वार्थी होता है और अपनी जाति को भी स्वार्थी बनाता है। - महात्मा गाँधी
- बारह ज्ञानी एक घण्टे में जितने प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं, उससे कहीं अधिक प्रश्न एक मूर्ख व्यक्ति एक मिनट में पूछ सकता है। - लेनिन
- झगड़े से बचना उचित है लेकिन अगर उसमें पड़ ही गए तो बैरी को अपना तेज, बल और पौरुष तो दिखा ही देना चाहिए। - शेक्सपियर
- धर्म उस अग्नि की, जो प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर जलती है। ज्वाला को प्रज्वलित करने में सहायता करती है। - डॉ० राधाकृष्णन
- शिक्षा आत्मा का आहार है। - गणेशशंकर विद्याथी
- अधूरे ज्ञान का अहंकार अपेक्षाकृत अधिक खतरनाक है। - पं० श्रीराम शर्मा
- व्यंग्य एक ऐसा आईना है, जिसमें हमें अपने सिवा सभी की शक्लें दिखाई देती हैं। - जोनेथन स्विफ्ट
- जो अपने विचारों के ताने बाने को ही नहीं बदल सकता, वह यथार्थ को भी कभी नहीं बदल पायेगा। - अनवन अल सादात
- शायद राजनीति ही ऐसा पेशा है, जिसके लिए किसी तैयारी की आवश्यकता नहीं समझी जाती। - राबर्ट लुई स्टीवेंसन
- श्रम के बाद निद्रा, तूफानों के बाद तट, युद्ध के बाद शान्ति तथा जीवन के बाद मृत्यु कितनी सुखद है। - एडमंड स्पेंसर
- सूर्य विदा होने पर यदि तुम आँसू बहाओगे, तो नक्षत्रों को भी नहीं देख पाओगे। - रवीन्द्रनाथ टैगोर
- सत्य हमारी समस्त वस्तुओं में सबसे अधिक मूल्यवान है। हमें इसका सदुपयोग करना चाहिए। - मार्क ट्वेन
- जो मनुष्य अपनी निन्दा सह लेता है, उसने मानो सारे जगत पर विजय प्राप्त कर ली। - महर्षि वेदव्यास
- शरीर को रोगी और दुर्बल रखने के समान दूसरा कोई पाप नहीं है। - लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक
- मनुष्य ही परमात्मा का सर्वोच्च साक्षात् मंदिर है, इसलिए इस साकार देवता की ही पूजा होनी चाहिए, ईश्वर की प्राप्ति खुद ही हो जायेगी। - स्वामी विवेकानन्द

✶

कश्मीर की करुण पुकार

—श्री अटल बिहारी वाजपेयी

साभार : मेरी इक्यावन कविताएँ

अत्याचारी ने आज पुनः ललकारा है,
अन्यायी का चलता दमन दुधारा है।
आँखों के आगे सत्य मिटा जाता है,
भारत माता का शीश कटा जाता है।

क्या पुनः देश टुकड़ों में बँट जायेगा ?
क्या सबका शोणित पानी बन जायेगा ?
माँ बहनों का अपमान सहेंगे कब तक ?
भोले पाण्डव चुपचाप रहेंगे कब तक ?

आखिर सहने की भी सीमा होती है,
सागर के उर में भी ज्वाला सोती है।
पुत्रों के रहते कटा जननि का माथा,
चुप रहे देखते अन्यायों की गाथा।

आओ खण्डित भारत के वासी आओ,
कश्मीर बुलाता, त्याग उदासी आओ।
शंकर का मठ बलिदानों की याद जगाता,
जम्मू का कण-कण, त्राहि-त्राहि चिल्लाता।

लो सुनों, शहीदों की पुकार आती है,
अत्याचारी से सत्ता भी थर्राती है।
अस्थियाँ शहीदों की, देती हैं आमन्त्रण,
बलिदेवी पर कर दो सर्वस्व समर्पण ॥

✶

परमात्मा

—अभय चतुर्वेदी

नवम 'ख'

हर तरफ जले उसकी ज्योति,
हर तरफ उसी का उजियारा ।
हर तरफ बसी है आभा उसकी,
उससे ही रचित है जग सारा ।।

जब-जब भटका कोई राही,
हो त्रस्त की उसने त्राहि-त्राहि ।
तब कोई न कोई आया,
बनकर ईश्वर की परछाहीं ।।

उसी ने दिया है जन्म हमें,
मृत्यु भी उसी के हाथों में ।
उसने ही दिखाई नई राह,
जीवन की अन्धेरी रातों में ।।

उसने ही प्यास बुझाई है,
उसने ही भूख मिटाई है ।
कष्टों में दी है शक्ति हमें,
उसने ही दुनिया सजाई है ।।

मानव के कण-कण में वह है,
शोभायमान बनकर वह प्राण !
वह बसा हुआ है रग-रग में,
वही करता सबका परित्राण।।

✶

माँ

—शिव त्रिपाठी

सप्तम 'क'

धन्य वही माता है जिसने,
मुझको जन्म दिया ।
दूध पिला आँचल से अपने,
मुझको अनुपम प्यार दिया ।।

जब भी मैं भयभीत हुआ,
तब आँचल में छिपा लिया ।
अपना सुख वैभव मुझ पर,
इसने है न्योछावर किया ।।

सहकर कष्ट बड़े ही इसने,
मुझको है लाड़ दिया ।
हाथ पकड़ चलना सिखला कर,
जीवन का नवगीत दिया ।।

अमृत समान दुग्ध पिलाकर,
बल, पौरुष विश्वास दिया ।
माँग मनौती परमेश्वर से,
मुझको अनुपम प्यार दिया ।।

✶

गंगा

—शिवम पाण्डेय

अष्टम 'क'

गंगा कल कल छल बहती है ।
हमको पावन सुख देती है ।
नगर नगर में गाँव गाँव में ।
निश्छल होकर ही बहती है ।

इसका निर्मल जल ही तो है ।
जग के जीवन का आधार ।
चारों लोकों में फैली है ।
इसकी निर्मल जल की धार ।

इसके निर्मल जल के द्वारा ।
सिञ्चित होती प्यारी धरती ।
इसके निर्मल जल की धारा ।
पावन भारत को करती है ।

सब प्रकार की गन्दगियों से ।
भरी पड़ी अब है यह गंगा ।
मानव की करतूतों का फल ।
भुगत रही अपनी है गंगा ।

सभी लोग अब आगे आयें ।
गंगा माँ को चलो बचायें ।
जो इसको गन्दा करते हैं ।
क्षरित पुण्य अपने करते हैं ।।

*

फिर भी हम आजाद नहीं हैं

—अतिन पाण्डेय
अष्टम 'ख'

दूर हुआ अंग्रेजी शासन,
फिर भी हम आजाद नहीं हैं ।

भारत के सब भारत वासी
खुशियों से आबाद नहीं हैं ।।

सत्य अहिंसा सदाचार की,
होली जलती आज देश में ।

और दिवाली मना रहे हैं,
भ्रष्टाचारी कुटिल वेश में ।

नेता अफसर भ्रष्ट हो गये,
जीवन भर ये शोषण करते ।

टैक्स-टैक्स औ टैक्स लगाकर,
अपनी मोटी जेबें भरते ।।

आता जब चुनाव का मौसम,
वोट माँगने दौड़े आते ।

और वोट की खातिर नेता,
खूनी दंगे भी करवाते ।।

अपने पैरों पड़ी बेड़ियाँ,
आज काट कर इन्हें हटाओ ।

जितने बंधन घेरे तुमको,
आगे बढ़कर उन्हें मिटाओ ।।

उठो हृदय से भय को तज कर,
भारत माँ की लाज बचाओ ।

भ्रष्ट जनों का राज्य मिटा कर,
एक स्वतन्त्र स्वराष्ट्र बनाओ ।।

✶

भ्रष्टाचार

—मयंक कुमार
नवम 'ग'

ऊपर नेता नीचे अफसर
सबमें भ्रष्टाचार है ।
कोई करता ट्रान्सफर तो
उसमें लेता लाख हजार है ।
संसद में भी प्रश्न उठाकर
वो लेता पचास हचार है ।
कोई दिलाता नौकरी तो,
उसमें भी लेता है यार ।
ऊपर नेता नीचे अफसर
सबमें भ्रष्टाचार है ।
खुलेआम लुट रही है जनता
करें विदेशी मनमानी ।
पाते हैं सब्सिडी विदेशी
नेता करते बेईमानी ।
जनता बस कंगाल हो रही
नेता मालमाल हैं ।
ऊपर नेता ....
दुर्योधन चक्रव्यूह में फँसकर भी
करते और कमाल हैं ।
कहीं पक्षी कही विपक्षी
मिलकर सब कर रहे धमाल हैं ।
बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ मिलकर,
साधु की पगड़ी रहीं उछाल ।
नहीं कहीं सम्मान बड़ों का
नहीं बचा शिष्टाचार है ।
ऊपर नेता नीचे अफसर
सबमें भ्रष्टाचार है ।

*

लोकतंत्र लाचार हुआ है

—आशीष तिवारी
एकादश 'क'

कैसे सगुन मनाऊँ साथी घर में माँ बीमार पड़ी है ।
सीमा पर खतरा मँड़राया दुश्मन ने हुँकार भरी है ।।

भाषा प्रान्त पन्थ के झगड़े लोकतन्त्र लाचार हुआ है ।
बोट बैंकरों की चालों ने जनगण पर अधिकार किया है ।
पंथों के झगड़ों के कारण गली-गली वीरान हुई है
कैसे भारत एक रहेगा नफरत की दीवार खड़ी है ।।

हरियाणा पंजाब हमारी दर्द भरी पहचान बना है ।
उग्रवाद की काली छाया लाशों का बाजार लगा है ।
भाई-भाई का दुश्मन है अब कैसी यह तासीर पड़ी है
चौराहे पर गोली चलती हत्यारों की भीड़ खड़ी है ।।

काश्मीर का हाल देख लो हर वर्दी में खून लगा है ।
दुश्मन की गोली चलती है हर घर में कुहराम मचा है ।
नेता गूंगे बने देश के उन पर दोहरी मार पड़ी है
तीन सौ सत्तर की धारा से राष्ट्रवाद की फसल जली है ।।

दुश्मन का हमला पहले भी हम पर कितनी बार हुआ है ।
शांति दोस्ती की बातें कर हमने उनको छोड़ दिया है ।
कुत्ते की दुम फिर भी टेढ़ी उसकी नजरें यहीं पड़ी हैं ।
खुद के घर में आग लगी पर सीमा में हुंकार भरी है ।।

युवकों अपना हाल देख लो क्यों फैशन से ग्रस्त हुए हो ।
मँहगाई से त्रस्त देश फिर पश्चिम के क्यों भक्त बने हो ।
आओ अपना देश बचाओ सबकी नजरें यहीं लगी हैं ।
भारत माँ की फुलवारी में जयचन्दों की फसल उगी है ।।
कैसे सगुन - - - - - - - - - - - - - - - - - - - भरी है ।।

✶

दहेज दानव

—मयंक मिश्र
अष्टम 'ख'

सुन्दर थी, सुशील थी,
गरीब की सयानी बेटी,
फिर भी कुँवारी थी ।

मिला भी था एक वर,
पर माँग उसकी भारी थी ।

माँगों की यह बेड़ी,
गरीब की लाचारी थी ।

टीवी, फ्रिज, स्कूटर देकर,
माँग उसकी भरी थी ।

चार माह बाद मिली बेटी,
बाबुल से न बोली थी,
बोली उसकी हालत थी ।

दहेज में कुछ कमी थी,
गरीब की सयानी बेटी,
चिर निद्रा में सोयी थी ।

चारों तरफ शोर था,
सुहागन ही तो मरी थी ।

✶

आईना 2005

—प्रणव त्रिपाठी
सप्तम 'क'

आओ तुम्हें दिखाएँ आईना दो हजार पाँच ।
कौन हुआ सफल और किस पर गिर गयी गाज़ ॥

मनमोहन और मुलायम की सरकार
का अच्छा रहा यह साल
मुख्यमंत्री बन नितीश ने लालू का सपना तोड़ा
बीस वर्ष शासन करने का सपना हो गया अधूरा
आपसी कलह के अंतर्द्वन्द्व से बीजेपी थी परेशान
और उमा की अनुशासनहीनता से थी नाराज़
आडवाणी ने जिन्ना को धर्म-निरपेक्ष बताया
क्रोधाग्नि-लिप्त संघ ने आडवाणी से इस्तीफा माँगा
अटल ने राजनीति से ले लिया संन्यास
विदेश मंत्री के पद से नटवर का हुआ बहिष्कार
आओ तुम्हें दिखाएँ आईना दो हजार पाँच ।
कौन हुआ सफल और किस पर गिर गयी गाज़ ॥

प्राकृतिक आपदाओं का इस वर्ष था पहर
भारत, अमेरिका, इंडोनेशिया पर था इनका कहर
वर्ष के शुरुआत में आई थी सुनामी
किन्तु इससे लोगों ने हार नहीं मानी
अमेरिका में कैटरीना, रीटा आए थे तूफान
इससे हुआ जन-जीवन अस्त-व्यस्त, परेशान
कश्मीर और पाकिस्तान में
भूकम्प की आयी थी आपदा
ढह गये लोगों के घर
बिखर गयी व्यक्तिगत संपदा
आओ तुम्हें दिखाएँ आईना दो हजार पाँच
कौन हुआ सफल और किस पर गिर गयी गाज़ ॥

इस वर्ष खेल की दुनिया में
भारत ने छुई बुलंदियाँ
क्रिकेट, लॉन टेनिस, फुटबॉल में
पाई नयी ऊँचाईयाँ
सानिया ने चौंतीसवें स्थान पर
रहकर भारत का गौरव बढ़ाया
क्रिकेट में नए महागुरु चैपल
ने दिया युवा खिलाड़ियों को मौका
सचिन ने पैंतीसवाँ शतक जमाकर
गावस्कर को पीछे छोड़ा
इस वर्ष चैपल और गाँगुली के
बीच रही तनातनी बरकरार
आओ तुम्हें दिखाएँ आईना दो हजार पाँच
कौन हुआ सफल और किस पर गिर गयी गाज़ ॥

✶

हास्य कविता

—विक्रान्त मिश्र
नवम 'ग'

एक बच्चे को मिट्टी खाता देख,
मैंने उसके पिता से पूछा
भाई साहब, आपका बच्चा मिट्टी खा रहा है ।
(बच्चे के पिता बोले)
तेरे घर का क्या जा रहा है ।
आज मेरा बच्चा मिट्टी खा रहा है,
कल पढ़ लिखकर इंजीनियर बन जायेगा ।
लोहा, सरिया और सीमेन्ट खा जायेगा ।
और यदि वह पढ़ लिख नहीं पाया,
तो नेता बन जायेगा ।
आज मिट्टी खा रहा है,
तो कल पूरा देश खा जायेगा ।

✶

पं. दीनदयाल निबंध प्रतियोगिता में
किशोर वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त
दशम 'क' के मेधावी छात्र
चि० निखिल श्रीवास्तव को पुरस्कृत
करते हुए मुख्य अतिथि श्री चन्दन मित्र,
वाम पार्श्व में मा. प्रधानाचार्य जी।

माँ बूजी के जन्मोत्सव पर
'बूजी' के चित्र पर पुष्पार्पण करते हुए
मा० श्री रामबालक जी मिश्र,
माननीया श्रीमती नन्दिता वीरेन्द्रजीत सिंह,
मा० श्री वीरेन्द्र जीत सिंह,
मा० प्रधानाचार्य जी तथा द्रोण जी।

श्रद्धेया बूजी के
जंन्मोत्सव पर मंचासीन
मा० श्रीमती डा० शान्ता मुखर्जी,
श्रीमती मीरा शर्मा, माननीया
श्रीमती नन्दिता वीरेन्द्रजीत सिंह,
डा० मिथिलेश शर्मा,
डा० वी.के. सिंह,
पं. राम बालक मिश्र,
तथा प्रधानाचार्य जी

महाराणा प्रताप के शौर्य की स्मृति–भूमि 'हल्दीघाटी' में विद्यार्थियों के साथ आचार्य श्री दिनेश जी।

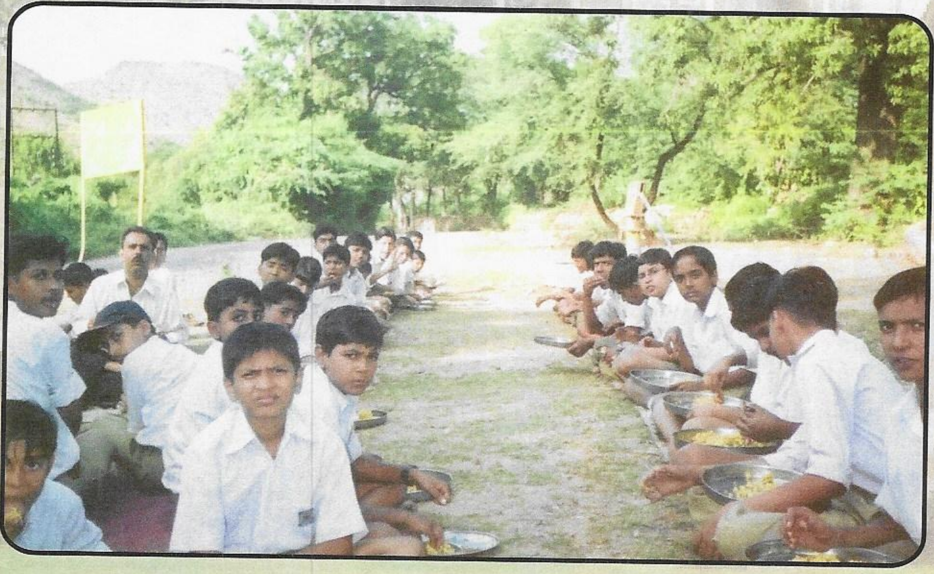

हल्दीघाटी की भूमि पर भोजन करता देशदर्शक दल।

'बूजी' जन्मोत्सव पर
चि० आशीष तिवारी को पुरस्कृत करती हुई
माननीया श्रीमती नन्दिता वीरेन्द्रजीत सिंह जी।

स्वदेशी अपनाइये

—पीयूष शुक्ल
सप्तम 'क'

हम सबका यह नारा है,
यह संकल्प हमारा है ।
स्वदेशी हम अपनायेंगे विदेशी मार भगायेंगे ।

(1)

एक कम्पनी ईस्ट इंडिया भारत में थी आयी,
दो सौ वर्ष गुलामी की जंजीर हमें पहनाई
देश किया बर्बाद उसे ना कभी भुलायेंगे ।
स्वदेशी - - - - - - - - - - - -

(2)

पेप्सी कोला चिप्स बेचने भर-भर ये थैली-थैली
इनके अन्दर छुपी हुई है इनकी नीयत मैली
सोच समझ लो कभी न इनकी चाल में आयेंगे ।
स्वदेशी - - - - - - - - - - - -

(3)

कालगेट रिन के चक्कर में पड़े तो पछताओगे -
डंकल गेट के समझौते से खुद ही बिक जाओगे
करो फैसला मिलकर सब इनको ठुकरायेंगे ।
स्वदेशी - - - - - - - - - - - -

✶

गरीबी

प्रस्तुति :—नितिन सिंह

सप्तम 'क'

सप्तम कक्षा के छात्र चि० नितिन ने यह कविता पत्रिका में प्रकाशनार्थ दी है । यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि यह कविता इन्होंने नहीं लिखी है फिर भी यह कविता इतनी अच्छी है कि मैं इसे यहाँ प्रकाशित कर रहा हूँ ।

— सम्पादक

एक दिन रास्ते में मिल गयी गरीबी
मैंने पूछा क्या हाल है ? गरीबी !

काफी दिन हो गये भारत में
कुछ समय के लिए मायके चली जाओ
विदेश जाकर अपनी माता से मिल आओ

गरीबी बोली
इस देश से मेरा जन्म-जन्म का नाता है ।
भला ऐसे मे कोई घर छोड़कर जाता है ।

फिर भारत मेरे पति का घर है
भरी जवानी में आई थी ।

अब बुढ़ापे में कहाँ जाऊँगी
याद रखो मैं पतिव्रता स्त्री हूँ

हटाने से कभी नहीं हटूँगी
डोली में सजा कर आयी थी
इस देश से तो अब मेरी लाश ही जाएगी ।।

✶

देश-भक्ति गीत

—कुलदीप कुमार
नवम 'ग'

याद करो अपने गौरव को,
जौहर और बलिदानों को ।
देश धर्म पर मिटने वाले,
अपने वीर जवानों को ।।

जिनका सारा जीवन बीता,
ललकारों फटकारों में ।
खेल खेलते कुश्ती लड़ते,
शेर समान खूँखारों से ।।

धर्म न छोड़ा कर्म न छोड़ा,
कूद पड़े अंगारों में ।
ऐसे प्यारे लाल देश के,
चुने गये दीवारों में ।।

मत भूलो राणा प्रताप को,
झाँसी की महारानी को ।
याद करो अपने गौरव को,
जौहर और बलिदानों को ।।

कारगिल के वीर शहीदों को,
कश्मीर के वीर जवानों को ।।

*

हास्य

नवयुग के अर्थ

अंकित मिश्र
सप्तम 'क'

जेल	-	बिना खर्च का होटल
टेलीविजन	-	बेकार लोगों द्वारा कुछ करते हुए लोगों को देखना
सास	-	बहू के पीछे छोड़ी गई बिना वेतन की जासूस
ताला	-	बिना तनख्वाह का चौकीदार
झगड़ा	-	वकील का कमाऊ पूत
नेता	-	बिना पेंदे का लोटा
चाय	-	कलियुग का अमृत
चॉक	-	अध्यापक की तलवार
चोर	-	रात का शरीफ व्यापारी
विकलांग सीट	-	मुस्टंडों के पसरने की जगह ।

*

व्यंग्य

पुलिस बड़ी सख्त है

—शुभम गुप्त
अष्टम 'क'

चोरों का हौसला बढ़ाने में,
शरीफों को हराने में ।
बेकसूरों को फँसाने में,
पुलिस बड़ी सख्त है ।।

नेताओं को मनाने में,
झूठा केस बनाने में ।
रिश्वत के पैसे खाने में,
पुलिस बड़ी सख्त है ।।

ड्यूटी पर सो जाने में,
वारदात पर देर से जाने में ।
अबलाओं को सताने में,
पुलिस बड़ी सख्त है - पुलिस बड़ी सख्त है ।

*

अपने पथ का अनुगामी

—अनिल कुमार
एकादश 'ख'

हर तरफ अँधेरा छा है रहा, आभा की किरण नहीं दिखती।
हाय ! लेखनी भी अब हुई गुलाम, नहीं विरोध में कुछ लिखती ।।

इसके विध्वंसकरण में ही, बन चुका आज तूफानी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी, अपने पथ का अनुगामी हूँ।

अन्याय, अत्याचार, बेईमानी, का; हर ओर चल रहा शासन है।
है पनप रहा हर घर में एक, आज नया दु:शासन है ।।

है कहानी बहुत लिखतें, पढ़तें पर, खुद में मैं एक कहानी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी, अपने पथ का अनुगामी हूँ।

धर्म-कर्म प्रपंच बन रहे, मन्दिर बस शोभा बढ़ाते हैं।
इन्सानियत मिट गई इस कदर कि, मन्दिर में होते धमाके हैं।

आतंकभरी इस दुनिया में भी, मैं ओढ़े सीतारामी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी अपने पथ का अनुगामी हूँ।

देशभक्ति, श्रद्धा, प्रेमभाव न जानें, किस गहवर में हैं डूबे।
लालच लोलुपता, स्वार्थभाव से, प्रेरित हो रहे हैं मंसूबे

खुदगर्ज हुई इस दुनिया में भी, भारत माँ का सेनानी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी, अपने पथ का अनुगामी हूँ।।

विश्वास उठा खुदा से ही, खुद से खुद ने धोखा पाया।
भाई पर विश्वास नहीं भाई का, यह है मनुष्य या पशु की काया।

इस धोखाधड़ी की दुनियाँ में भी, विश्वास का मैं नामी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी, अपने पथ का अनुगामी हूँ।।

सपने टूटे, कितने रूठे, इसकी फिक्र नहीं करता।
क्या मिला मुझे क्या नहीं मिला, कभी नहीं सोचा करता ।।

है काया सभी के समान मगर, आत्मा मेरी इन्सानी है।
कल आने वाला, गुजरे कल की , लिख रहा अमिट कहानी है।

शक्तिहीन हो रहे मानव में भी, तेज भरे हनुमानी हूँ।
कलयुग के इस अन्धड़ में भी, अपने पथ का अनुगामी हूँ ।।

★

ब्लैक-होल (Black Hole)

—शोभित विनायक

एकादश 'क'

'ब्लैक होल' शब्द प्रथम बार एक अमेरिकी वैज्ञानिक जॉन व्हीलर ने सन् 1969 में प्रतिपादित किया। 200 वर्ष पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटन ने प्रकाश के सम्बन्ध में अवधारणाएँ प्रस्तुत की थीं -

प्रथम अवधारणा के अनुसार प्रकाश कणों के समूह से निर्मित है परन्तु एक दूसरी अवधारणा में प्रकाश को तरंगयुक्त माना गया है। प्रकाश के कणयुक्त होने की दसा में यह अपेक्षित है कि प्रकाश गुरुत्व बल से उसी प्रकार प्रभावित होगा जैसे कि तोप के गोले या रॉकेट प्रभावित होते हैं। क्वांटम यान्त्रिकी के अनुसार प्रकाश को तरंग तथा कण दोनों से युक्त माना गया है। कणों की अवधारणा के अनुसार यह स्पष्ट नहीं है कि गुरुत्व का प्रकाश पर क्या प्रभाव पड़ता है। परन्तु प्रकाश की गति ब्रह्माण्ड में उपस्थित सभी कणों में सर्वाधिक होने के कारण गुरुत्व बल का प्रभाव उस पर इस प्रकार नहीं माना जा सकता जैसा कि तोप के गोले के सम्बन्ध में माना जाता है। तोप से छोड़े गये गोले की गति दूरी के अनुसार मन्द होती जाती है। जबकि प्रकाश एक स्थिर गति से लगातार चलता रहता है। प्रकाश की तरंग सिद्धान्त के अनुसार यह स्पष्ट नहीं था कि गुरुत्व का उस पर क्या प्रभाव पड़ेगा। सन् 1915 ई० में युगपुरुष आइंस्टीन के सापेक्ष सिद्धान्त के अनुसार पूर्व की अवधारणाएँ बदल गयीं।

इस अवधारणा से कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जॉन निकिल ने सन् 1983 में विचार प्रस्तुत किया तथा यह संभावना व्यक्त की कि ऐसे अनेक तारे ब्रह्माण्ड में उपस्थित हैं जिन्हें हम प्रकाश विहीन होने के कारण नहीं देख सकते हैं। ब्लैक होल तारे के जीवन की एक क्षय होती अवस्था है जब तारे में उपस्थित हाइड्रोजन समाप्त होने लगती है तथा तारे के गुरुत्व बल एवं बहिर्गामी ऊर्जा बल का संतुलन बदल जाता है। इस कारण तारे का गुरुत्व बल बढ़ जाता है जिससे उसके समीप स्थित वस्तु उसमें समाहित हो जाती है। यहाँ तक कि प्रकाश की किरणें भी उसमें विहीन हो जाती हैं।

फ्रांसीसी वैज्ञानिक ला-प्लास (La-Place) ने कुछ वर,ओं बाद अपनी पुस्तक 'Systme of The World' में इनका उल्लेख किया।

ब्लैक होल के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण योगदान 1928 में भारतीय वैज्ञानिक सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर तथा कैम्ब्रिज के उनके गुरु सर ऑर्थर एडिंक्टन ने दिये। अमेरिकी वैज्ञानिक रॉबर्ट ऑपेकहाइमर ने चन्द्रशेखर के सिद्धान्तों की वैज्ञानिक पुष्टि की। उन्होंने यह निर्धारित किया कि तारों के गुरुत्व प्रभाव के कारण प्रकाश की किरणों के मार्ग बदल जाते हैं। सन् 1965-1970 के मध्य कैम्ब्रिज के रोजर पेन्रोज तथा स्टीफन हॉकिन्स ने ब्लैक होल की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की। स्टीफन हॉकिन्स की महत्वपूर्ण पुस्तक 'समय का संक्षिप्त इतिहास' तथा ब्लैक होल व उसके पश्चात् विस्तृत जानकारियाँ प्रस्तुत की गयी हैं। सन् 1967 में कनाड़ा के प्रसिद्ध वैज्ञानिक वर्नर इज़राइल ने घूर्णन करते हुए ब्लैक होल तथा न्यूजीलैण्ड के वैज्ञानिक रॉयकिर ने स्थिर (अघूर्णित) ब्लैक होल के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किया। ब्लैक होल की सम्पूर्ण जानकारी ब्रह्माण्ड के अनेक पिण्डों तथा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रकाश प्रस्तुत करेगा।

★

मम माया संभव संसारा। जीव चराचर विविध प्रकारा ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए ॥

पंडित जी का राजनीतिक चिन्तन

—पिंकराज कुलश्रेष्ठ
(पूर्व छात्र)

भारतीय राजनीति के इतिहास में सन् 1951 अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जिस दिशा में कांग्रेस चल रही थी उसकी वजह से देश की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और औद्योगिक सभी क्षेत्रों में गिरावट के आसार प्रकट होने लगे थे। ऐसे कारणों से नये राजनीतिक नेतृत्व की आवश्यकता अनुभव हुई। इस महती आवश्यकता से पं० दीनदयाल उपाध्याय ने 21 सितम्बर 1951 को लखनऊ में प्रादेशिक सम्मेलन बुलाकर प्रदेश-जनसंघ की स्थापना की। सन् 1967 में वे अखिल भारतीय जनसंघ के चौदहवें वार्षिक अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये। अध्यक्षीय भाषण में पंडित जी ने तत्कालीन अवस्था के अनुसार आर्थिक, शासकीय, शैक्षणिक आदि विषयों की चर्चा करके इन शब्दों में अपना विश्वास प्रकट किया, ''हिन्द महासागर और हिमांचल से परिवेष्टित भारतखण्ड में जब तक एकरसता, कर्मठता, समानता, सम्पन्नता, ज्ञानवत्ता, सुख और शान्ति की सप्तजाह्नवी का पुष्प प्रवाह नहीं ला पाते, हमारा भागीरथ तप पूरा नहीं होगा। इस प्रयास में ब्रह्मा, विष्णु और महेश सभी हमारे सहायक होंगे। विजय का विश्वास है, तपस्या का निश्चय लेकर चलें।''

पं० दीनदयाल जी ने देश के सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में गम्भीर सारयुक्त विचार-मंथन किया। भारत की चिरंतन संस्कृति उनके विचारों का केन्द्र-बिन्दु रही। 'एकात्म मानववाद' पंडित जी के चिन्तन की श्रेष्ठतम देन है। यह भारतीय संस्कृति के सारभूत सर्वात्मभाव का सिद्धान्त है। यह मानव के सर्वांगीण विकास का दर्शन है। 'एकात्म मानववाद' आधुनिक राजनीति, अर्थव्यवस्था तथा समाज-रचना के लिये चतुरंगी भारतीय धरातल है। दीनदयालजी का यह मूलगामी चिन्तन चाणक्य के 'अर्थशास्त्र' और लोकमान्य तिलक के 'गीता रहस्य' के समान भारतीयों को मार्ग दिखाने वाला है। उपाध्याय जी के चिन्तन का मूल केन्द्र मानव ही रहा है। जीवन के प्रत्येक अनुष्ठान का मध्यवर्ती बिन्दु मनुष्य, साधारण मनुष्य है। उनकी कामना थी कि साधारण मनुष्य का जीवन स्तर विकसित हो, मानव सुख-समृद्धि की ओर बढ़ता रहे। इस दृष्टि से उन्होंने भारतीय संस्कृति के आदर्श का चिन्तन करके 'एकात्म मानववाद' का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। उन्होंने इसे केवल सूत्र रूप में देश के सामने रखा था। इस सिद्धान्त तक पहुँचने के लिये उन्होंने केवल भारतीय दर्शन का ही अध्ययन नहीं किया अपितु पश्चिम की विचारधाराओं का भी पूरा-पूरा अध्ययन किया था। पंडित जी का चिन्तन यह था कि एक स्वस्थ्य समाज-दर्शन का निर्माण करने के लिये मानव के व्यक्तिगत तथा समाज के साथ उसके सम्बन्धों का अध्ययन आवश्यक है। मनुष्य के सभी क्रिया-कलापों एवं सभी मानवीय संस्थाओं का उद्देश्य यथासंभव सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति है किन्तु शरीर सुख मानव का अन्तिम उद्देश्य नहीं हो सकता। मानव व्यक्तित्व के उत्तरोत्तर पाँच स्तर या कोश हैं - शरीर, प्राण, मन, बुद्धि तथा आत्मा जो स्वरूपतः आनन्दमय है। मनुष्य का समग्र विकास होने के लिये जीवन की किसी भी एक आवश्यकता को महत्व देकर नहीं चला जा सकेगा। मानव के चार पुरुषार्थ या कर्म होते हैं, जिससे पुरुषत्व सार्थक होता है, वे हैं - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। 'धर्म' में उन सभी नियमों, व्यवस्थाओं, आचरण संहिताओं तथा मूलभूत सिद्धान्तों का अन्तर्भाव होता है जिनसे 'अर्थ' और 'काम' सिद्ध हों। अर्थ को ईमानदारी, संयम, त्याग, तपस्या, अक्रोध, क्षमा, धृति, सत्य आदि धर्म के लक्षणों का निर्वाह करना पड़ेगा। 'काम का सम्बन्ध मानव की विभिन्न कामनाओं की पूर्ति तथा तृप्ति से होता है, मन को सन्तोष देने वाले शारीरिक, मानसिक, कर्म तथा कला, काव्य, नाटक, नर्तन आदि का 'काम' में अन्तर्भाव है। 'मोक्ष' का सामान्य अर्थ है : संसार के सभी बन्धनों या सीमाओं से मुक्त होकर शाश्वत परमानन्दस्वरूप पूर्णता प्राप्त कर लेना। 'एकात्म मानव' के सन्दर्भ में केवल व्यक्ति का विचार पर्याप्त नहीं है। व्यक्ति का समष्टि से जो सम्बन्ध है - जैसा कि व्यक्ति और समाज, समाज और देश, देश और धर्म, धर्म और राज्य तथा राज्य और राष्ट्र - इन सभी का विचार आवश्यक है। बिना व्यक्तियों के समाज नहीं और बगैर समाज, व्यक्ति नहीं होता इन दोनों में परस्पर अभिन्नता रहती है। कुटुम्ब एक व्यष्टि है तथा राष्ट्र और सम्पूर्ण मानव-समाज एक समष्टि है। मनुष्य का एकीकरण मात्र समाज नहीं है वह सावयव, जीव और आत्मा है। जिस प्रकार

व्यक्ति के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा जैसे चार अंग होते हैं वैसे ही समष्टि के अंग - देश, संस्कृति, धर्म और चित्त हैं। राष्ट्र के अनेक अंग होते हैं जिनमें राज्य एक अंग है। राज्य अन्य संस्थाओं से अधिक व्यापक महत्वपूर्ण व शक्तिशाली है किन्तु सार्वभौम नहीं है किन्तु जनतन्त्र में जनता सार्वभौम है। हमें ऐसी व्यवस्था चाहिये जो मानव को मानव बनाये रखे, मशीन का पुर्जा न बनाये बल्कि राज्य मानव को वह व्यवस्था प्रदान करे जिससे वह अपने चार स्तम्भों- कर्म, कर्मफल, यज्ञ और ज्ञान पर खड़ा होकर गतिमान रह सकें। इसके लिये ऐसी समाजार्थिक व्यवस्था करनी होगी जिसका आधार-केन्द्र ऐसा 'मानव' हो जो शरीर, आत्मा, बुद्धि, मन का केन्द्र है। मानव, व्यक्ति है तथा समष्टि का अंग भी। पं० दीनदयाल जी का मानववादी चिन्तन सम्पूर्ण मानव जाति का विचार करता है जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पुरुषार्थ लेकर खड़ा है।

पं० दीनदयाल जी भारतीय संस्कृति के साक्षात् प्रतीक थे। भारतीय संस्कृति पर ही उनके विचारों की बुनियाद थी। उनके राष्ट्रीयता और संस्कृति विषयक विचार के अनुसार - प्रकृति और विकृति में मेल बिठाना संस्कृति का कार्य है। धर्म विकृति को रोकता है अतः संस्कृति जिस प्रथम सोपान से चढ़ती है वह 'धर्म' की सीढ़ी है। भारतीय राजनीति का लक्ष्य सदैव 'धर्मराज्य' रहा है। धर्म का तात्पर्य किसी 'रिलीजन' का राज्य नहीं किन्तु विधि-नियमानुसार चलने वाले कल्याणकारी सामर्थ्यशाली राज्य - 'रूल ऑफ लॉ' है। धर्म राज्य ही 'रामराज्य' है। जिस भाव के कारण, जिन नियमों के कारण, जिस व्यवस्था में कोई चीज टिक सके, वही धर्म है। इसलिये सम्पूर्ण प्रजा, जनसमाज और सृष्टि की धारणा धर्म से ही होती है। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र में जो सामंजस्य बैठाता है वही धर्म है। आदर्श पर आधारित राजनीति और धर्म द्वारा उसकी अभिव्यक्ति में आस्था रखते हुए वे मानते हैं कि धर्म किसी सम्प्रदाय की घेराबन्दी में रखने की चीज नहीं है, वह तो समाज की धारणात्मक वृत्ति है। ऐसे ही दृष्टिकोण से युक्त कार्यकर्त्ता राष्ट्र को सबल, समर्थ और सुखी बना सकते हैं।

राजनीति को राष्ट्रवाद पर आधारित करने वाले पं० दीनदयाल उपाध्याय जोड़-तोड़ की राजनीति, चरागाही राजनीति, नैतिकता रहित राजनीति, आदर्शच्युत राजनीति को समाज की व्यवस्था एवं एकता के लिये घातक तथा खतरनाक समझते थे। उनका राष्ट्रवाद तथा देशभक्ति विचार न तो संकुचित रूढ़िवाद पर अवलंबित है और न एकाधिकारवाद पर। उनकी राय में, मानवता की सेवा करने के लिये देशभक्ति प्रथम सोपान है। राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में पाश्चात्य दृष्टिकोण उन्हें बिल्कुल मान्य नहीं था वे उसे संकुचित, उग्र, विकृतियों से युक्त तथा अन्तर्राष्ट्रीयता के प्रतिकूल समझते थे, क्योंकि पश्चिम के राष्ट्रवाद में द्वन्द्व एवं संघर्ष है, जबकि भारत का राष्ट्रवाद अद्वैत और एकात्मता पर आधारित है।

उपाध्याय जी ऐसे निष्काम कर्मयोगी थे जो अपनी अजस्र सेवा और अविराम कर्म साधना द्वारा सामाजिक ऊँच-नीच की दीवारों को ढहाकर, आर्थिक शोषण एवं दोहन के उत्पीड़न को समाप्त कर, राजनीतिक स्वेच्छाचारिता एवं मतांधता के भीषण अनाचार को मिटाकर क्षेत्र, प्रान्त, भाषा और सम्प्रदाय आदि के संकुचित वैषम्य को समाप्त कर, सम्पूर्ण मानवमात्र को समता एवं एकता के समतल धरातल पर लाना चाहते थे। उपाध्याय जी ने संघर्षपूर्ण जीवन में सदैव कर्म की श्रेष्ठता को प्रतिस्थापित किया। अखिल भारतीय जनसंघ के कालीकट के अधिवेशन में उन्होंने सम्पूर्ण राष्ट्र को 'चरैवेति ! चरैवेति !' का जो महान संदेश दिया उसे स्वयं उन्होंने अपने जीवन में साकार कर लिया था।

उपाध्याय जी ने बताया कि 'अर्थ' का अभाव ही नहीं अर्थ का अत्यधिक प्रभाव भी धर्म का नाश करता है। उनके अनुसार 'रिलीजन' यानी मत, मजहब या पंथ है 'धर्म' नहीं। धर्म तो एक व्यापक चीज है जो जीवन के सभी पहलुओं से सम्बन्ध रखती है इसी से समाज एवं सृष्टि की धारणा होती है। धर्म के मूलभूत तत्त्व सनातन और सर्वव्यापी हैं। धर्म हमारा प्राण है जो भी धर्म को छोड़ देता है वह राष्ट्र से 'च्युत' हो जाता है। राज्य का आधार ही धर्म है। यदि किसी समाज में धर्म नहीं तो वह राज्य टिक नहीं सकता। धर्म ईश्वर से भी बड़ा है। इसी आधार पर पंडित जी ने कहा कि कोई भी राज्य धर्महीन नहीं हो सकता अर्थात् धर्मनिरपेक्ष भी नहीं रह सकता। उनके अनुसार धर्मनिरपेक्ष राज्य तो नियमहीन राज्य हो जायगा। धर्मनिरपेक्षता एवं राज्य तो एक दूसरे के विरोधी हैं। 'धर्मनिरपेक्षता' या 'सेक्यूलर स्टेट' तो पश्चिम की नकल है जिसकी हमें आवश्यकता नहीं। उन्होंने धर्म व रिलीजन में महती अन्तर बताया कि धर्म वह है जो सबके लिये हो और मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता हो जबकि रिलीजन का तात्पर्य केवल उपासना-पद्धति से है। उन्होंने बहुसंख्यक, अल्पसंख्यक के आधार पर विभाजन को भी अनुचित बताया। उन्होंने अपने आर्थिक विचारों में

बताया कि हमारी अर्थव्यवस्था का लक्ष्य पूँजीवादी और कम्युनिस्टों से भिन्न हमारी संस्कृति पर आधारित होनी चाहिये। हमारी अर्थव्यवस्था का नारा - 'कमाने वाला खिलायेगा तथा जन्मा सो खाएगा', होना चाहिये। इस कर्त्तव्य के निर्वाहन की क्षमता पैदा करना ही अर्थव्यवस्था का काम है। पंडितजी का कहना था कि भारतीय संस्कृति में कर्म यानी श्रम को सर्वोच्च स्थान दिया है। श्रम करना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है अतः प्रत्येक को श्रम करने का अवसर देना शासन का कर्त्तव्य है। आर्थिक क्षेत्र की तीन वस्तुएँ हैं - मनुष्य, श्रम और मशीन। इन तीनों का समन्वय ही अर्थव्यवस्था का उद्देश्य है। जिस अर्थव्यवस्था में यह समन्वय नहीं, उसमें विषमताएँ तथा शोषक और शोषित वर्ग उत्पन्न होते हैं। इसीलिये आज की परिस्थिति में यदि किन्हीं उपायों का प्रयोग कर अपनी अर्थव्यवस्था की दिशा के परिवर्तन को बताना हो तो वे हैं - विकेन्द्रीकरण, स्वदेशी और स्वावलम्बन। दीनदयाल जी का कहना था कि 'जिनके सामने रोजी और रोटी का सवाल है, जिन्हें रहने के लिये न मकान है न तन ढकने के लिये कपड़ा, अपने मैले-कुचैले बच्चों के बीच आज वे दम तोड़ रहे हैं वही हमारे नारायण हैं। गाँवों और शहरों के इन करोड़ों निराश भाई-बहनों को सुखी व सम्पन्न बनाना हमारा व्रत है। वामन शिवराम आप्टे के संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश के अनुसार व्रत का अर्थ संकल्प, प्रतिज्ञा, दृढ़ निश्चय, जीवनचर्या, आचरण या चाल-चलन है। पंडितजी सत्य, अहिंसा, सर्वोदय, सत्याग्रह, मानवीयता और आत्म साक्षात्कार का व्रत लिये थे उन्होंने आजीवन दरिद्रनारायण की उपासना के व्रत का पालन किया।

पं० दीनदयाल उपाध्याय ने तो भारतीय मानववाद की जैसी व्याख्या की वह अद्वितीय है। उनके विचारों में सब जगह मानवतावाद तथा आत्म साक्षात्कार ही प्रमुख सूत्र है। इसीलिये उनका समाजदर्शन, एकात्म-मानववाद कहलाता है। वे जीवात्मा, राष्ट्रात्मा और विश्वात्मा तीनों को मूलतः एक मानते थे किन्तु ये परमशक्ति की भिन्न-भिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं जिनमें पंडित जी समन्वय करना चाहते थे।

✶

17 जून, 1973 गुरु गोलवलकर जी की तेरहवीं के अवसर पर अश्रुसिक्त श्रद्धाञ्जलि

लो श्रद्धाञ्जलि राष्ट्र-पुरुष
शत कोटि हृदय के कञ्ज खिले हैं ॥
आज तुम्हारी पार्थिव प्रतिमा
चर्म चक्षुओं से अदृश्य है ॥
किन्तु कोटि उर-निलयों में
तव दिव्य मूर्ति प्रस्थित- अखण्ड है ॥
तेजोमय प्रतिबिम्ब तुम्हारा
आज हमारे हृदय में है ॥
आज तुम्हारी पूजा करने।
सेतु हिमाचल संग मिले हैं ॥

—स्व० पं० शिवशरण शर्मा

✶

आचार्य कुल

1.	श्री ओमशंकर त्रिपाठी (प्रधानाचार्य)	एम०ए० (हिन्दी), बी०एड०
2.	श्री प्रकाश नारायण वाजपेयी	एम०एस-सी० (जन्तु विज्ञान), बी०एड०
3.	श्री राजेश कुमार शुक्ल	एम०एस-सी० (रसायन विज्ञान), बी०एड०
4.	श्री रामतीर्थ मिश्र	एम०ए० (हिन्दी), बी०एड०
5.	श्री हेमन्त शुक्ल	एम०एस-सी० (भौतिकी), बी०एड०
6.	श्री कैलाश जोशी	एम०एस-सी० (गणित), एम०एड०
7.	श्री बिहारी लाल मिश्र	एम०ए० (अंग्रेजी, अर्थशास्त्र), एल०टी०
8.	श्रीमती शारदा राव	एम०ए० (अंग्रेजी), बी०एड०, एल०एल०बी०
9.	श्री आनन्द प्रसाद वर्मा	(कला-आचार्य) आई०जी०डी० बॉम्बे
10.	श्री महेश चन्द्र श्रीवास्तव	एम०ए० (गणित, समाजशास्त्र), एल०टी०
11.	श्री दीपक राजे	बी०ए०, बी०एड०
12.	श्री सुभाष चन्द्र शर्मा	एम०ए० (भूगोल) ,डी०पी०एड०, व्यायाम विशारद
13.	श्री वीरेन्द्र सिंह पाण्डेय	एम०ए० (समाजशास्त्र), बी०एड०
14.	श्री गणेश शंकर वाजपेयी	एम०ए० (संस्कृत), शिक्षाशास्त्री
15.	श्री गया प्रसाद वर्मा	एम०ए० (अंग्रेजी), सी०टी०
16.	श्री सतीश चन्द्र गुप्त	एम०ए० (इतिहास, राजनीति विज्ञान), एम०एड०
17.	डॉ० उमेश चन्द्र तिवारी	एम०एस-सी० (वनस्पति विज्ञान), पी०एच०डी०, एम०एड०
18.	श्री जगपाल सिंह	एम०ए० (भूगोल), बी०एड०
19.	श्री दिनेश सिंह भदौरिया	एम०एस-सी० (रसायन विज्ञान), बी०एड०
20.	श्री श्रीप्रकाश ओझा	एम०एस-सी० (भौतिकी), बी०एड०
21.	श्री सुधीर अवस्थी	एम०एस-सी० (रसायन विज्ञान), बी०एड०
22.	डॉ० मनोज कुमार शुक्ल	एम०ए० (संस्कृत, हिन्दी) साहित्याचार्य, पी०एच०डी०
23.	श्री दुर्गेश वाजपेयी	एम०ए० (हिन्दी साहित्य, संस्कृत) पत्रकारिता परास्नातक, IIMC
24.	श्री मंजीत सिंह	एम०एस-सी० (गणित)
25.	श्रीमती रेखा निगम	एम०ए० (अंग्रेजी), बी०एड०
26.	कु० शिल्पी श्रीवास्तव	एम०एस-सी० (भौतिकी), बी०एड०

★

पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

हाईस्कूल परीक्षा - 2006

(इन्टरनेट से प्राप्त परिणाम)

कुल अंकित संख्या	:	141
उपस्थित संख्या	:	141
उत्तीर्ण संख्या	:	141
ससम्मान	:	55
प्रथम श्रेणी	:	80
द्वितीय श्रेणी	:	06

विषयानुसार विश्लेषण

विषय	छात्र संख्या	विशेष योग्यता	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	अधिकतम अंक एवं प्राप्तकर्ता छात्र	न्यूनतम अंक एवं प्राप्तकर्ता छात्र	अन्य विवरण
हिन्दी	141	59	82	—	—	86 मृत्युंजय कटियार	62 शिवेन्द्र दीक्षित	गणित विषय में 95 से 99 तक अंक प्राप्त करने वाले कुल छात्र : 22
अंग्रेजी	141	90	48	03	—	90 पदमजी ओमर मृत्युंजय कटियार	54 प्रत्यूष त्रिपाठी	
गणित	141	119	15	04	3	99 अखिल मिश्र	34 ऐश्वर्य दीप पाण्डेय	
विज्ञान	141	34	85	21	1	88 गौरव कृष्ण	38 प्रत्यूष त्रिपाठी	
सा०वि०	141	35	82	23	1	88 अजय सिंह यादव	36 प्रत्यूष त्रिपाठी	
संस्कृत	36	30	06	—	—	84 निखिल श्रीवास्तव	65 सौरभ सिंह	
कम्प्यूटर	105	08	49	48	—	82 शिवम अग्रवाल	44 अंकुर कटियार	

पं० दीनदयालय उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

इण्टरमीडिएट परीक्षा - 2006

(इण्टरनेट पर प्राप्त परिणाम)

कुल छात्र	:	111
परीक्षा में प्रविष्ट	:	111
उत्तीर्ण	:	111
ससम्मान	:	63
प्रथम श्रेणी	:	48
प्रदेश की वरीयता सूची में स्थान	:	01(21वाँ) (चि० रोहित कटियार) 87.2%

विषयानुसार विश्लेषण

विषय	छात्र संख्या	विशेष योग्यता	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	अधिकतम अंक एवं प्राप्तकर्ता छात्र	न्यूनतम अंक एवं प्राप्तकर्ता छात्र	अन्य विवरण
हिन्दी	111	53	58	—	82 चि. शशांक गुप्त चि. यतेन्द्र सिंह	63 चि. अभिषेक सिंह चि. आशीष पाल	गणित विषय 99% अंक प्राप्तकर्ता छात्र 1. चि. पारस गुप्त 2. चि. प्रद्युम्न बाजपेयी 3. चि. अवधेश शुक्ल 4. चि. दीपक त्रिपाठी 5. चि. नितिन प्रताप
अंग्रेजी	99	09	85	05	77 चि. अर्पण अवस्थी चि. प्रशान्त मिश्र चि. देवाशीष सिंह	51 चि. अमित कुमार	
गणित	96	81	14	01	100 चि. अजीत यादव	55 चि. गौरव सिंह विष्ट	
भौतिकी	111	79	30	02	97 चि. अभिनव ओमर	55 चि. शिशिर मिश्र	
रसायन	111	35	72	04	93 चि. रोहित कटियार	51 चि. मनीष सिंह	
जीव विज्ञान	15	05	10	—	85 चि. गौरव कुमार सिंह	66 चि. यतेन्द्र सिंह चि. अनुराग तिवारी	
कम्प्यूटर	12	07	05	—	86 चि. ऋषिराज त्रिवेदी	69 चि. शिशिर मिश्र	

EDITORIAL

Dearreaders,

It is a delight to present before you this special issue of "Neerajan" as a tribute to one of the most revolutionary thinkers of modern India. Guruji was an embodiment of our ancient cultural values He had the rare acumen of a reformist who sought to redeem India from its various social evils like Casteism, superstitions and bigotry. Assuming office as the "SARSANGHCHALAK" in 1940 Guruji popularized the philosophy of the "SANGHA" across the length and breadth of the nation. His magnetic personality attracted people from various countries of the world and the SANGHA became a global phenomenon. Under his dynamic leadership he organized the Sangh Parivar and paved the way for the realization of the dream of HINDU RASHTRA. The philosophy of the Sangh became more acceptable, affable, popular and pragmatic. The youth flocked to the regular "SHAKHAS" and took pride in being "SWAYAM SEWAKS"; In the turbulent post-independence era Guruji steered the nation through an identity crisis and then emerged a nation that could feel proud of its ancient Hindu Culture. Despite political backlash; Guruji helped "THE SANGH" emerge as a force to reckon with against the monster of pseudo-secularism. Through our issue we pay our homage to one of the greatest sons of Mother India- SRI. MADHAV RAO, SADA SHIV RAO GOLVALKAR.

He carried forward the cultural renaissance of SWAMI VIVEKANAND. Like Swamiji, Guruji worshipped the downtrodden and suffering mass of humanity. He worked pain stakingly to ameliorate the lot of the poor and stressed the need for the unity of the various sections of the HINDUS.

Today, when our nation is once again terrorized by the monster of casteism and the reservation issue is bent upon tearing the social fabric of the nation, there is an imminent need of a reincarnation of Sri. GURUJI. Mother India bleeds and waits for another MADHAV.

SHARDA RAO

NO GAINS WITHOUT PAINS

—G.P. Verma
Teacher

This simple saying has a very deep meaning. The secret of success lies in this proverb, People generally do not take it seriously. They avoid painstaking pursuits. That is why they don't get the expected result. We can't achieve our goal without taking pains. This proverb is true for all walks of life but it is a boon for students . The students who work hard, acquire good marks and those who 'shirk' the work and adopt easy-going way get poor marks. They spoil their career. Strenous labour and continuous effort is needed for success. If you want success you must take pains.

Now Let us think about the obstacles that come in the way of our progress. The passions and temptations are our two great enemies. Anger, Greed, envy and some other evils misquide us. We are diverted from the right path. If our soul is strong, we can overcome these vices. If we have strong will power we can escape from the clutches of these passions other wise we fall prey to the strong desires extra vagant use of luxuries, Excess of enjoyment, overeating, indolence are some evils that cause our downfall. So the first and foremost need is to control our passions.

Life is not a bed of roses. It is full of struggles and troubles. It is just like an examination hall where we are given a test. We have to face this Challenge. It does not matter we lose in the first attempt. We must carry on our efforts till we reach the goal. Every cloud has a silver line. We must not lose hope and courage. Failures are the pillars of success. John Milton, a great poet, in his famous epic Paradise lost says "What though, the field is lost"

In the same way the great poet and dramatist Shakespeare says.

"Sweet are the uses of adversity."

These words exhort us to workhard and go forward despite the adverse circumstances. The Men who suffer for noble cause, the men who make sacrifices for the good of others, do miracles. If we do our duty sincerely and honestly, success will follow us like shadow. Worldly pleasures sensual joys are fleeting and momentary. They are just like mile stones. We must pursue the ultimate destination. Men of great courage make the nation great and strong. A famous poet R.W. Emerson says.

"Not gold, but only men can make
A people great and strong.
Men who for truth and honour's sake
Stand fast and suffer long."

Keeping the above inspiring lines in mind we must carry on our efforts to achieve the Goal. We must not run after the momentary joys and comforts.

✶

Life and Work of Rontgen

(Who discovered X - rays)

—Hemant Shukla

(Teacher)

X-rays have found very important applications in almost all branches of Science and technology for example medicine and Surgery, Physics, Chemistry, Biology, Engineering etc.. Therefore no other discovery in modern Science has been so useful to humanity as that of X-rays. X-rays were discovered by Wilhelm Konard Rontgen on the 8th November 1895 at the Physical Institute of the University of Wiirtzburg in Germany.

Rontgen was born on March 27, 1845, at Lennep near Celegne, in the Lower Rhine Province of Germany. His father, Friedrich Konard Rontgen was a cloth manufacturer and merchant. His mother charlotte, constanze Frowein of Amsterdam belonged to an old Lennep family. When he was three years old, his family moved from Germany to Apeldoorn in Holland. He studied in the Institute of Martinus Herman Van Doorn, a boarding School. In 1862 he joined the Technical School of Utrecht from where he was expelled, wrongly accused of having produced a caricature of one of the teachers, which was in fact done by someone else. The continuity of his formal education was thus broken and he was not accepted as a regular student by the university of Utrecht. By passing an entrance examination he began his studies as a student of mechanical engineering in Polytechnik at Zurich, a renowned institute in Switzerland. He received his Diploma in mechanical engineering in 1868 and was awarded the Ph.D. in 1869 when he was twenty four years old.

He was fond of spending much of his time out of doors, being interested in social life and sports, such as mountaineering, boating etc. one day he met the brilliant scientist August Kunott, a young Physics Professor at the Zurich Polytechnic. He became his Assistant whose friendship, support and guidance greatly influenced his career.

In 1872 he married Anna Bertha Ludwig in Apddoorn in Holland. Rontgen couple had no children so in 1887 the couple adopted daughter of Mrs. Rontgen's only brother.

In 1875 he was appointed professor in the academy of Agriculture at Hohenheim in wiirtemberg. From 1879 to 1888 he worked at Giesson and produced excellent research work. In 18888 University of wiirtzburg offered him the joint posts of Professor of Physics and the Director of the Physical Institute. In 1895 he

made his momentous discovery of X-rays which bought him in international lime light.

The story of the discovery of X-rays is quite interesting and also illuminating. One day while Rontgen (Also written as Rontgen) was working in a darkened room with a gas discharge tube, which was being continuously evacuated and excited by an induction coil, he observed that a sheet of paper coated with Barium Platinocynide kept at a nearby table was glowing. The glow was surprising because there was no light in the room. He noted that the paper sheet glowed only when the high tension was applied on the discharge tube, and the glow disappeared as soon as the potential was put off. It seemed to Rontgen that some sort of radiation was coming out of the discharge tube. He gave the name X-rays to the radiation, X being the mathematical symbol for the unknown. After seventeen years from the discovery of X-rays Max Von Laue's showed that X-rays are electromagnetic in nature contrary to the belief held by Rontgen that X-rays were longitudinal wares.

The First Radiograph

One day late in the evening when Rontgen did not return home for dinner in time, Mrs. Rontgen went to search for him to the laboratary. She found that he was very busy working with his instruments and apparatus all alone in the laboratary. At the door Mrs. Rontgen shouted "Oh dear ! it is getting late for dinner. Don't you want to come home ?" Rontgen Replied "Please give me a little help in my work." Mrs. Rontgen said "I am not a scientist. What help can I give ?"

Rontgen replied "Oh Dear, just keep your hand steady for a moment in front of this tube."

Rontgen then kept a photographic film wrapped in black paper behind his wife's hand and exposed it to X-rays. When he developed the film the first radiograph of the world was obtained, showing clearly the bones of the fingers. This first radiograph was taken in the evening of the 22nd December 1895.

For seven weeks he experimented furiously and then finally on the 28th December 1895 he submitted to the editors of the Journal of Physical and Medical Society of Wiirtzburg his first Paper in which he not only announced his discovery but also reported some of the fundamental properties of X-rays.

Numerous honours were showered on Rontgen-honorary doctorated from many universities, Prizes and medals membership and felloships of learned societies and academies etc. When the Nobel Prizes were instituted by the Nobel Foundation in Sweden, he was selected to receive the first Nobel award in 1901. In spite of all this he retained the characteristics of a very modest and shy person and continued to work in the laboratory. Very amicable and courteous by nature he always tried to understand the views and difficulties of others. Some friends

advised Rontgen that he should take a patent for his discovery. Rontgen absolutely refused to do so, Since he firmly believed that his discovery belonged to the whole of Humanity. Had he chosen to take a patent for his discovery, he would have been a multimillionaire in a very short time. He donated all his Nobel prize money to the university of Wiirtzberg for the promotion of scientific research. Rontgen had to spend the last years of his life in a difficult financial situation.

It is gratifying to note that amongst the early collaborators of Rontgen there was an Indian, Dr. Bossuet Afonso of Goa who concluded his medical studies at wiirtzberg. His dissertation was entitled "Experimental research on the influence of X-rays on the lens of the eyes." he received help and inspirationfrom Rontgen. Dr. Boss-Afonso returned to India in 1913 and practised for a while at Bombay and finally settled down in Goa.

Rontgen had very clear ideas and definite views about scientific research. Speaking about the evolution of Science through ages, Rontgen in his Rectorial address to the university of wiirtzburg Said :

"..... only gradually was the conviction established that the experimental approach is the mightiest and most reliable lever with which we can extract Nature's secrets and that it represents at the same time the last resort to which we can appeal for a decision whether a hypothesis is to be adopted or abandoned."

About examinations he opined :

"School examinations generally furnish no basis for evaluating aptitude- the true test aptitude for a profession does not come until late in life ....."

Rontgen retired from the chair of Physics at Munich in 1920. Towards the end of his life he was a very lonely person. His wife had died after a long illness in 1919 four years earlier than him. His end came in Munich on february 10, 1923 from cancer of the intestines, iornically a disease which often responds to treatment of X-rays.

The world will always remember Rontgen as a great scientist and a great benefactor of Humanity.

Source *Physics Education*

✶

THRICE BLEST

—V.S. Pandey- Acharya

(Compiled/ abridged)

The other day when I was scanning the newspaper, an old pal of mine dropped in, and after inquiring about the well-being of my family, especially of my three daughters, he whispered to me that the digit three was not an auspicious one. I smiled and told him that it was an omnipresent and auspicious digit.

God is called-sat, chit and anand. I told him Brahma, Vishnu and Mahesh, who are creator, sustainer and destroyer, come with their consorts-Saraswati, Laxmi and Parvati. Who signify-wealth, knowledge and power Brahma created Swarga lok. Bhulok and Patal lok. Then came Pawan Dev, Agni Dev and Varun Dev. Agni Dev created stomach fire, forest fire and sea fire. Winter, summer and rainy seasons followed, then come human beings.

All human beings pass through childhood, adulthood and old age. This body is healthy when there is balance of three humours- vat, pitta and kaph. The nature of the person depends on- satva, rajas and tamas. He is self-restrained if he controls his senses in thought, word and deed and if he avoids ill-hearing, ill-seeing and ill-speaking.

Perfection is got by co-ordination of mind, body and speech Satyam, Sivam and Sundaram are the attributes of Atma. Union with God is attained through the marg of bhakti, jnana or karma. Trinity is the union of father, son and holy spirit as one God. Three scenes of old, sick and dead led Buddha to seek truth. Tight, loose and fit states of the strings of veena made Buddha the enlightened one. Persons are divided into three classes- rich, middle and poor. A person has three basic needs - roti, kapada and makan (Food, Shelter and Clothen's).

To carry my point I said, ABC signify the elementary knowledge which is attained by three Rs- reading, writing and arithmetic. Adjectives have three degrees- positive, comparative and superlative. The biggest number is trillion- million million million. The universe is built on thesis, anti-thesis and synthesis. Matter is found in three states- solid, liquid and gas. Most of the objects are found in three dimensions- length, breadth and depth/height. Tense is divided into past, present and future. And there are three primary colours- red, blue and yellow.

To govern the country there are three wings- legislative, executive and judiciary. There are three estates- Lord Spiritual, Lord Temporal and Commons. The country is defended by - Army, Navy and Air Force. There are three ways of transport - road, air and water. Three weapons- Satya, Ahinasa and Satyagraha- of Gandhi brought freedom.

After marriage only three things are remembered- salt, oil and fuel. Silver, golden and diamond jubiliees are celebrated. The three medals are gold, silver and bronze. Sources of dispute are three- jar, joru and jamin. A three-piece suit is the complete dress of man or woman.

At this point my friend who looked sheepish and said that he was saying so only to motivate me to beget a son, a brother for the three sisters, who would support me in old age. But I told that when I had already been blessed with three daughters in the form of three goddesses, where was the need for any other support.

Chemicals Making life Colourless

—Sudhir Awasthi

Teacher (Department of Chemistry)

The use of Chemicals for getting high production and making food articles more attractive has been in practice for centuries. Indian council of Medical Research (ICMR) has recently shown that 57% of food articles in India are contaminated with pesticides of which 20% have crossed maximum tolerance limit (MTL).

Centre of Science & Environment (ESE) published a report about the quality and contents of that bottled soft drinks owned by MNCs that created panic among their habituals. The Scientists of the CST claimed to have found presence of excessive residue of four extremely toxic pesticides and insecticides Malathion, D.D.T., Lindane and Chloropyrifos. In all Coca Cola and pepsi brands total pesticides on an average were 0.0180 mg/lit. 30-36 times higher than European norms.

To attract the consumers the artificial colouring is done. For this purpose a few synthetic dyes are permitted in India for colouration of food Articles. Non permitted colours which are cheap but dangerous to health are being used throughout the country. Some of them are Cango Red. Auramine (yellow), Malachite green. Metallic yellow Lead chromate used in turmeric causes Animia and Paralysis.

Contaminants of Food Articles

	Food Articles	Contominants	Harmful effects
1.	Maggie & Noodles	Monosodium glutamate	Brain Damage
2.	Mustard	Argemon	Dropsy
3.	Spinach and Pani of Chat	Oxalic acid	Renal disorder
4.	Soft drinks	Saccharine	Kidney damage
5.	Paan Masala	Foreign matter and Saccharine	Cancer
6.	Turmeric	Metanil yellow	Cancer
7.	Processed food	Ionizing radiations	Genetic disorder

Now we should be careful while using the food Articles based on chemicals thinking whether they are hygienic or not. If they are poisoning our life, we should have their alternatives so that we can make our lives strong, active and vigorous.

*

RESERVATION ALIAS DISRUPTION

—Sharda Rao

(Teacher)

Even after 59 years of independence India presents a pathetic picture of a fragmented nation. A nation torn apart by the divisions of caste, creed, religions, sects, beliefs and conflicting dogmas. After indefendence the gulf between the various sections of society continued to widen as a result of selfish political interests. The social reforms brought about by the sacrifice of our thinkers and revolutionaries have been turned futile owing to the policies of the government.

The self serving politicians have deliberately divided the society in order to consolidate their respective vote banks. Ironically the treacherous policy of 'Divide and Rule' introduced by the British has been adopted by our leaders and the hateful policy continues to flourish even today.

In order to improve the condition of weaker sections and to bring them at par with the developed sections of society, the constitution envisaged the system of reservation for a period of ten years after independence. But the power hungry politicians moulded the reservation facility to enrich their Vote bank.

Today the reservation issue has assumed gigantic dimensions and has completely eroded the foundation of our society.

Today the youth of various communities are at daggers drawn. They Continue to spit venom against one another. The caste system which was intended to have vanished has become all the more strong and deep rooted.

The present day youth feel that the weakér sections of society should be given equal opportunities to develop, on the basis of their economic status and not on the basis of caste. Every day we hear or read about massacre of innocent people due to some caste-feuds. The so called upper-castes are not ready to give up their self proclaimed exalted status and the so-called lower castes are not willing to for give and forget the atrocities of the bygone-era.

The government has a vital role to play in such a volatile situation. We have to caress the wounds of the down trodden but at they same time we cannot go on fragmenting the society through the obnoxious reservation system.

✶

A PRECIOUS GIFT

—**Anurag Srivastava**
12th 'A'

Tell me what is it, that can't be bought, begged, borrowed or stolen ?

Yes, it is a smile, a beautiful smile that makes a person look beautiful even though he or she is not beautiful. But, alas ! very few of us have known its value. Smile is the most valuable gift that God has given to man and man alone. Its cost is nothing and it can be easily given. Even the poorest of the poor possess this treasure and can afford to give it to others. Misers as we are, very few of us like to part with it. We believe in giving expensive gift and feel proud about it but the natural gift that God has given us, we refuse to share with others.

The natural smile is always innocent, pure, modest, full of love and piety.

✶

GOOD HEALTH

—**Yogesh Kumar Verma**
XI B

Health is better than wealth. It is one of the best gifts to us. But it can easily be lost. It seems natural to us to be well when we are young. We can not think what illness is like. We do not think much about our health. We are often careless about it. Without thinking we spoil our health by indulging in bad habits and doing silly things. When we have lost it we realize its value. How can we keep our good health? Only by knowing and obeying the canons of healthy living.

First, we must eat good plain food we must eat enough and not too much. secondly, we must have plenty of fresh air. Thirdly, we must get enough sleep. "Early to bed and early to rise, makes a man healthy, wealthy and wise." Fourthly we must work, heartily, we must avoid indulging in bad habits.

✶

LIFE

—**Ankur Kushwaha**, 12th 'A'

What a life is full of tears
Everyone is having fear and fear
There is no one to
Praise the spring.
Everyone is thinking himself a king.
There is no one to
raise his voice
Everyone is having his own choice
There is no extra
time to spare
Everyone is thinking for his own care
There is no one to
care for the culture
Everyone is worried for his own future
So we should learn
Something from our past
And a happy new
life we should start.

*

GOD

—**Shobhit Vinayak**, XI A

Not in temple, not in Church
All in vain everywhere you'll search
Don't look for him here and there
God is present every where
He is love, he is beauty
He is truth and he is purity
Love all that is fresh and fair
You will find that God is there.

*

WHAT IT TAKES TO BE NO. 1

—**Amit Mayank**
(Ex–Student)

People who want to become the best try their very best. If you try your best you may not always come out on top but you will come close to it. On the other hand. If you think that you can not do it, that you do not have the capabilities, then you will never accomplish anything. Of course what you are is important but not as important as how you go about it: your attitude should be one of becoming the best in whatever it is you are doing. Whether you want to become a politician, or a businessman, an artist or a scholar, try to take in your field. Do not become someone who is satisfied with just getting by. Set your aims at becoming No. 1 and give it everything for the harder you try the better your chances of success. I believe that everyone who is No. 1 in his field got there because he aimed high and tried his best Half hearted efforts never put anyone in a top position.

Many years ago a Hungarian Soccer star was interviewed after his team captured first place in a European competition. A reporter asked him about his secret to success. he said that whenever he had time, he kicked the soccer ball; when he was not kicking the soccer vall, he was talking about soccer and when he was not talking about soccer he was thinking about it.

So you can see that soccer stars are not born and not just anyone can become the best. Only those who devote themselves entirely to something can become No. 1 A lot of people talk about the "miracle" but to us there was no miracle we just worked harder and tried to become the best in our field.

So I hope that all you young people will strive to be the best in whatever you do. Donot even consider letting someone else top you Conceding to someone else is not gracious it is not sacrifice it is inferiority in action. Do not settle for second best and do not think that the top is too good for you. Make up your mind that the top spot is rightfully yours that is made for you. Try your very very best and you will be rewarded.

*

STUDENT LIFE

—Abhinandan Kumar

7 'A'

Student life is a life on making oneself. He must learn good manners. Student life is the life, which makes our future very comfortable. For our glorious future we must do our best studies. Student life is the happy period of life. It is life of freedom. But good students use this time in a better way. It is the golden period of a man's life. In the student life, there is a great importance of a teacher. A good teacher can transform the life of his student.

✶

THE TRUTH OF LIFE

—Prateek Bhardwaj

XIth A

We have to live and die
Bearing the woe of life
Without any Comfort and leisure
We have to live desiring pleasure
Life is full of desires
Everyone has to aspire
Life is not for sleeping
It is for hard-working
Life is not to earn money
It is merely for duty
Every person suffers much
But he should have faith in God
With the help of mercy sympathy
Kindness and honesty
Man goes to paradise
That's the real truth of life.

✶

BE READY TO CHANGE

—Abhay Chaturvedi
9th - B

Change is the eternal law of nature. This is a fact that life is full of changes. It alters itself with new faces. These changes greatly affect a person. We all must try to adjust ourselves according to them.

Everyone acknowledges that change is a part of their professional and personal life but very few of us expect and accept change as a reality in our lives. We all must deal with our own individual circumstances around, change them and enjoy them.

There were some species who could not adjust themselves according to the changing environment lost their existence Similarly the people who can not adjust themselves according to the changes of life face so many obstacles.

No one can be sure that his condition will be the same everytime. There are so many diversions in the life. The need of the day is to accept the change and forget the previous time. If we do not admit the change and live in our past. We'll lose everything. This type of attitude keeps a man away from progress. If something dear has been taken away from us, we should try to search for new instead of being sorry for what we have lost. And the best will be that we should always he prepared for every change of life, expected or unexpected. We should be prudent. This makes a man not surprised on facing any great change of life and then we can enjoy the change.

If we do not change by the time. We will become extinct. The quicker we let go of old things the sooner will we find new things. Noting small changes early helps us adopt to the bigger changes that are to come.

Life is not fixed, it goes on. If we do not move with the time, we will lag behind. So we will have to alter ourselves according to the changes of life if we really want to charge ahead in the race of this life. We will also have to make our nature like that because life will not go with us, we have to move with it.

Whenever and wherever you think that the need is to change yourself, Don't think about anything change yourself quickly and accept the new situations. Once you get prepared to adjust in any of the conditions, no change of life can puzzle or frustrate you. On the whole, we can say that changes often happen in our lives; so we should anticipate change, monitor the change, adapt to change quickly, become changed, enjoy the change and each time be ready to change quickly and enjoy it again.

*

HOW TO LIVE

—Anil Kumar
11th 'B'

There is no time to stay
Always march on your way.
Don't mind about past,
Any moment can be the last

Your time is very little,
You have unlimited will
You will know many new facts
Always mind your acts

Always be the success flame.
Enjoy life like a game,
Be effortful about your aim
Never work for name and fame

The way of life is very long and hard
You have time very short
Your heart has memory of someone
Past time never again comes

Enjoy with open arms
weal and woe
You will feel happy and
Try to remain so

You should smile in defeat
Find the reason and try to defeat
Then you will hear success flute
And find success at your feet.

*

REIKI?

—Atin Pandey
VIII - B

Most commonly, the word Reiki refers to a simple healing technique, a form of energy medicine which was rediscovered by Dr. Mikao Usui in Japan in the late 19th century. Dr. Usui chose the term Reiki to describe Universal life force Energy which rules the mind and raises a person's life force. Through the use of soothing hands laid on the body in certain positions, the process of healing is accelerated. The essence of this form of healing is passed on from teacher to student through a series of mystic initiations which in Reiki, like in the Tantric forms of Buddhism in Japan or Tibet, are called attunements or empowerments.

Reiki is the fundamental nature or substratum of the universe, and the Usai Method of Natural Healing is an easy way of giving back to yourself more of what you already fundamentally are : Universal life force Energy. You literally recharge yourself with that, which at the deepest level, you have always been.

In quantum physics as well as hermitic science, energy is recognized as the fundamental nature of existence. In truth there is no solid matter. Thus, the human body, its thoughts and emotions are all composed of energy oscillating at narious frequencies. The denser the vibration, the more apt we are to experience discomfort of disease. The freer the vibration, the greater the chance for natural health, abundance, beauty, satisfaction and well-being.

Through getting the body/mind in touch with Universal life Force Energy, its very own substratum, Reiki can release the individual in a gentle and gradual manner from age old restrictions and bondage, and allow over time to first experience vibrant health and balance, and finally experience freedom and unity.

The five Principles of Reiki

1. "Just For Today I will Be in The Attitude of Gratitude.
2. Just For TodayI will not Worry.
3. Just For Today I will not be angry.
4. In your daily work be honest to yourself.
5. Just for today, I will be kind and Respectful to all of creation

*

COMPUTER SECTION REPORT

—Pratik Singhal
VIIIth 'B'

Information Technology is now the back bone of the society. Computers play an important role in this field. In the early sphere of life. Computer Education has become necessary.

Whether we are a student of science, commerce or Arts, the knowledge of computer science is necessary for the job. The Multinatinal companies give preference to those condidates who have knowledge of computers Similiarly in government department, preference is given to the condidates who have,knowledge of computer science considering the usefulness of computer, Government is giving training to its employees so that they do their work quickly and more efficiently.

Keeping these things in mind, our college has provided us with a well equipped computer lab. So that the students at the school can cross multimedia barriers leaving others for behind.

✶

TOPIC - INDIA V/S AUSTRALIA

—Ravi Shanker Dixit
VII 'A'

When the Umpire puts the toss.
Dravid is the boss.
When Laxman hits a century.
Share Warne gets an injury.
When Sachin hits ball to fence
Australia becomes tense
When Irfan comes to ball.
Dravid Becomes happy
When India wins the cup
They raise their flag up.

✶

OBSTACLES ARE POWER GENERATORS

—Suraj Patel
11th 'B'

It is a good idea to learn about obstacles because the road to sucess is really on "obstacle- course."

A long time ago, Some tired weakling started the rumour that obstacles are hindrances- and that false rumour has been circulated by timid weaklings ever since as their alibi for inferiority. Some people even believe that obstacles are excuses for failure. The fact is that obstacles are the power generators of success. The success of all great men and women have been generated by the obstacles they overcome.

The greater the obstacles, the greater their success. Since this is true of Every person who ever suceeded, I shall not devote much space here to giving examples, but I can not resist mentioning a few.

Abraham Lincoln, Andrew Jackson and many of the U.S. presidents started life in the poorest homes, with little education and no advantages-except lots of obstacles to use as power generatars to win the presidency of U.S. Thomas Edison was sent home from school because he was too stupid to learn everything ! So he become the greatest inventor in history !

Joan of Arc was a poor, little shepherd girl who led the Armies of France to instant victory in a war that the French Generals had been unable to win even after hundred years of fighting.

Another delicated boy was not able to attend school and had to be taught at home by his mother. So James Watt invented the steam engine which changed the Industrial world.

There was a poor farm boy whose fother died before he was born and whose mother had to wean him on their total Income of $ 400 a year ! You will remember him as Sir Isaac Newton, discoverer of the law of Gravity.

*

MY CLASS

—Ankur Kushwaha
12th 'A'

Sixty students are in class Twelfth 'A'
All remain quiet and busy all day
To begin with 'Rohit' seems the best
And he displays it in all his tests

Poor 'Romil' is like a 'rabbit'
He is ragged by the boys and now it's his habit
'Deepak' is the boy who learns all day
In order to keep the exams at bay.

"Saurabh' is a boy who is very funny
But unfortunately he is rather skinny
'Manish' is a cool, smart chap
Who needs to take a bit of nap.

'Rishi' is the monitor and very calm
Often you will find him greasing someone's palm
In 'Snehdeep's corner there's too much noise
But all this no big surprise

'Akhil Tripathi' O dear ! I've left him out
He wobbles too often in and out
Next comes 'Dheeraj' with his mischievous smile
And expressions that often beguile.

And I am the luckiest dude
Who reads in Deen Dayal
And please for give me for not mentioning all
Cause it's quite a big affair after all.

*

YO ! CRICKET IS FUN

—Ankur Patel
VII : A

Cricket is Fun,
When Dhoni takes a run.
When Harbhajan takes a turn.
When Afridi's score remains a zero.

When Sachin hits a fair,
And Akram will not believe in Score.
When Sehwag Swings for a six.
And Haque is in Fix.

When Younis is declared out.
The Indian crowd began to shout.
When Khan lost his wicket.
Paki's tore their ticket.

Yo ! Cricket is fun,
When India beats Pakistan by even one run.

*

LIFE

—Pranav Tripathi
VII - A

Life is a game of cricket
Where courage is the wicket
difficulties are the ball
you will have to face all
To fight problems “Get Set.”
Life is the game of cricket.

If you don’t troubles hold
You will become clean bowled
If you will understand ball’s direction
Good shot and right action
In life, victory you will get.
Life is the game of cricket.

*

I SING ALL DAY

—Shivam Dixit
XIIth ‘B’

Music plays inside me
All tunes are in my head
From early in the morning
Till I go to bed.

Music makes me happy
And things can’t go wrong
When I am filled with music
I sing a joyous song.

*

इतिहास से सम्बन्धित प्रदर्शनी में विभिन्न प्रकार के ऐतिहासिक प्रदर्श प्रस्तुत करते हुए विद्यालय के छात्र चि० शीतांशु तिवारी तथा अंकित झा।

संस्कृति ज्ञान परीक्षा में स्थान प्राप्त चि० पीयूष त्रिवेदी को पुरस्कृत करते हुए मा० श्री वीरेन्द्रजीत सिंह।

सत्रान्त समारोह के बाद सुन्दर मंडलाकृति में बैठकर जलपान की प्रतीक्षा करते हुए छात्रों का विहंगम दृश्य।

विदाई समारोह,

द्वादश कक्षा के छात्र

समूह - छायांकन

दशम कक्षा के छात्र

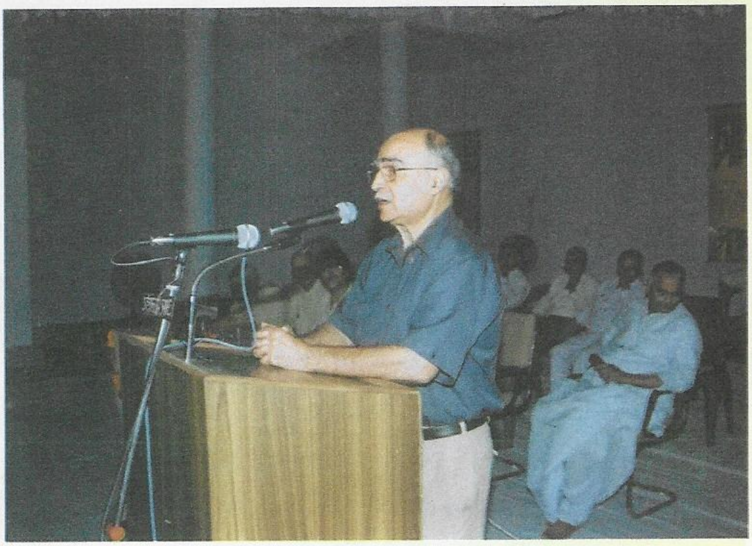

अहर्निश विद्यालय की चिन्ता करने वाले, सहृदय विद्यालय प्रबंध समिति के सचिव मा० श्री वीरेन्द्रजीत सिंह, मुख्य अतिथि श्री चन्दन मित्र को धन्यवाद ज्ञापित करते हुए।

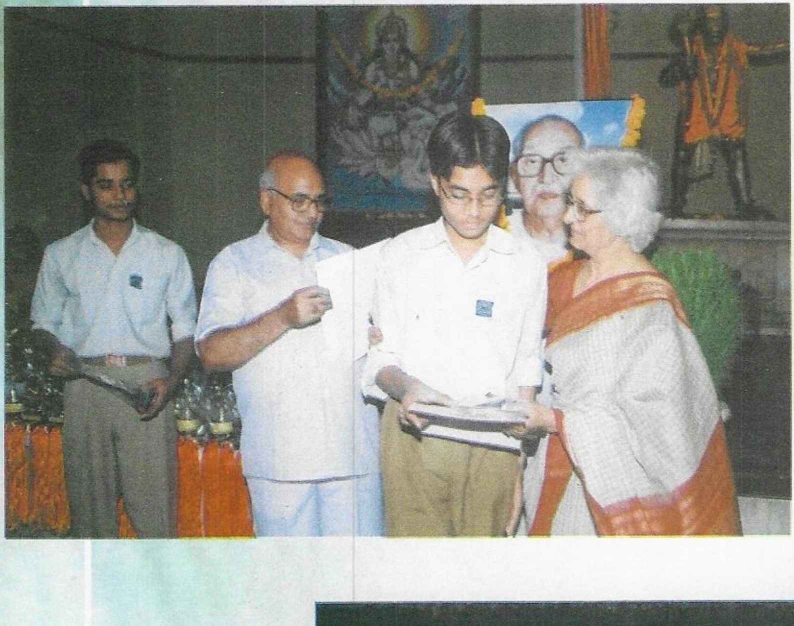

पूज्य बैरिस्टर साहब के जन्मोत्सव पर मेधावी छात्र चि० रोहित कटियार को पुरस्कृत करती हुई डा० मिथिलेश शर्मा, पार्श्व में आचार्य श्री महेश जी।

वार्षिकोत्सव के मुख्य दिवस २५ सितम्बर को योग–प्रदर्शन करते हुए छात्र।

WHO WANTS TO BE 'ABSENT-MINDED' ?

—Yogesh Kumar Verma
XI - B

At some point, every one suffers from absent- mindedness. Have you ever had to ask yourself questions like 'Now, where did I leave my glasses ? or 'Have I already taken my medicines ?' Can you guess how much time people spend looking for lost keys ? But where do these 'black holes' in the brain come from ? Experts realise that forgetful people are those individuals who are easily distracted and do not concentrate particularly on individual details.

Your attention diminishes the moment you start doing things automatically, as a matter of routine, or if you are in familiar surroundings. As we have seen, information will not remain permanently stored in your memory if you do not pay attention to the details. Admittedly, familiarity and routine make our work a great deal easier, but we can also become their victims.

Think about driving your car. Most automobile accidents take place in areas with which the driver is quite familiar. This is because familiarity contributes to forgetfulness. If you have driven a particular route for years, there is a chance that you will pay less and less attention to the landmarks and danger rings. If we want to avoid mishaps, we have to make a conscious effort to concentrate. Thus, it is useful to say out loud; 'After the next curve I will see the traffic lights for the construction site' or 'I am now placing my glasses on the table.'

If you have forgotten something, it may simply be that you have saved the information incorrectly. This gives rise to situations such as when you insist to your partner that you have parked your car at the familiar spot just around the corner, although in fact your parked it in a completely different place.

*

WHAT IS LIFE

—Yogesh Kumar Verma

XI B

A rich man burst with laughter and said -
"Money is life"
A poor man trembling with cold said -
"Life is struggle"
A lazy man dreaming in his sleep said -
"Life is bed of roses"
A young man enjoying his time in full pleasure said -
"Life is full of pleasure"
A sadhu is his speech said -
"Life is only a way to reach God"
A lover waiting anxiously for his beloved said -
"Love is life"
But I say-
"Life is an unsolved mystery ?
Is it anything except a tragedy ?"

✶

SUCCESS

—Anuj Sharma

11th 'B'

Success is like a tower.
That is our Idea's power.
Success has the elements of joy and sorrow,
Its path is very risky and narrow.

Everyone wants success in his job,
But success requires great efforts in fog.
Success is like a delightful rain.
but failure gives an unbearable pain.

✶

SUCCESS ALPHABETS

—Nitin Singh
VII 'A'

A	Always be prompt.
B	Believe in common sense.
C	Consider well before deciding
D	Dare to do right.
E	Express yourself better.
F	Fear to do wrong.
G	Go for the goal.
H	Honesty is the best policy.
I	Innovate new ideas.
J	Judge your actions.
K	Keep cool even in adverse situation.
L	Learn to co-operate.
M	Maintain discipline.
N	Never try to appear what you are not.
O	Observe good manners.
P	Play regularly.
Q	Quest for knowledge.
R	Respect the counsel of your parents.
S	Serve the society.
T	Trust your memory.
U	Utilize time properly.
V	Verify your information.
W	Watch other's action.
X	X also has a value.
Y	Yearn for the common good.
Z	Zeal for the best.

QUIZ TIME

—Ujjwal Deep
VI 'A'

1. What is name for the scientific and statistical study of human population ?

   —> **Demography.**

2. Which distinguished Indian writer was given the 'knight of the order of Arts and letters' by the French government in April 2001 ?

   —> **Arundhati Roy**

3. Which Indian soldier was mistakenly awarded the Param Vir Chakra in 1999 for his valour in Kargil conflict as a posthumous honour, though alive and in a hospital ?

   —> **Yogendra Singh Yadav.**

4. Which parsi Shiya builder constructed the first docks in Bombay in 1872 ?

   —> **Jamshed Ji Wadia.**

5. Who was the first Indian citizen to be conferred the honorary U.S. citizenship ?

   —> **Mother Teresa.**

6. The international boundary between Pakistan and Afghanistan is called the ......

   —> **Durand Line.**

7. A chain of small linked islands off the coast of South Florida, U.S. is known as .

   —> **Florida Keys.**

8. Name the wicket-keeper who was given a three match suspension recently for cheating in a one-day international match.

   —> **Ridley Jacobs.**

9. Name the famous engineer- cum-designer who was the architect of the inner structure of the Statue of Liberty ?

   —> **Gustance Eiffel.**

10. Name the publication whose motto is "Let knowledge grow from more to more and thus be human life enriched."

    —> **Encyclopaedia Britannica.**

11. What is the title of sportscribe K.R. wadhwaneys book which deals with the alleged match-fixing in cricket matches ?

    —> **Cricket's murky underworld.**

*

Some Scientists : Discoveries And Inventions

—Chandra Shekhar
8 'A'

Aryabhatta :

Aryabhatta was a great scientist and mathematician. He was born at Pataliputra (Patna) Bihar. He was the first Mathematician who used Algebra. He defined many laws in Mathematics. He gave approximate value of π (pie) (3.1414). Aryabhatta wrote two important books as 'Aryabhatiya' and 'Law of Aryabhatt'.

Thomas Alva Edison :

Thomas Alva Edison was a great inventor and invented electric bulb after great effort and spending a lot of money. He tried 3000 ideas and spent 40,000 dollars. He invented 'Gramophone' also. On the death of Edison each and every bulb of America was put off as a sign of tribute.

Rudolph Hertz :

Rudolph Hertz was a great german physicist. He invented Electromagnetic waves. The discovery of these waves led to the development of Radio. Television and Radar. He demonstrated that light waves are Electromagnetic waves. The 'SI' unit of frequency 'Hertz' is a reverence to his name.

✶

MY FAVOURITE LEADER

—Ankur Dixit
7 'A'

A man who is known as hero should have many qualities in him. He should be brave, he should be strong in mind and body. He should be very intelligent and farsighted. He should have the ability of leading masses. He shouldn't be lazy. After death, a hero leaves some ideas behind him to be followed.

Indian history is full of various heroes. Even today they are remembered with great respect. In all those Subhash Chandra Bose is my favourite leader. He was a tiger among men. He lived and died for our country. His death is still a mystery. As an intelligent student he topped the I.C.S. But he didn't join it because he wanted to serve India.

He gave a famous slogan. "Jai Hind' He had ardent faith in congress and for his work for it he was a great freedom fighter. For it he went to Afghanistan, France, Russia and other countries. He raised an army that was called "Azad Hind Fauz."

His armed forces were marching towards India. He died in an air crash. His sacrifice helped India to win freedom in 1947. Subhash Chandra Bose used to say "Give me your blood, I will give you freedom."

We can't forget such a leader and hero.

✶

Identity of God

—Ajay Singh Rawat

VII A

A small child wanted to meet God. He prayed to God to talk to him. Suddenly a bird twittered. But the child did not hear. He again requested God to talk to him. Suddenly the storm thundered in the sky. The child did not realise this.

The child then prayed to God that he wished to see him. A star shone in the sky. But the child's attention was diverted. The boy now became desperate to see a miracle. God appeared in the form of a squirrel. The child ignored it. Now he wanted to touch God and feel his existence on the earth God came in the form of a butterfly and sat on his shoulders. The child removed the butterfly and went away.

God lives around us but we cannot recognise, Him in the Various aspects of life.

*

The Teacher is the Sun

—Praffula Sachan

XII B

A teacher plays his duty like the sun. In our life the teacher distributes knowledge in the same way as the sun gives light. He helps us unravel the mystery of life. The students should have healthy relations with teachers. They should be able to express their feelings freely. Education becomes a pleasure if it is imparted in a genial atmosphere. On the other hand if the students distance themselves from the teachers, the very purpose of education is defeated. So both the teacher and the taught should strive to improve their relations. If the interaction between the teacher and the student grows, knowledge is enhanced and all the problems can be solved in a jiffy. The students should approach the teachers humbly and respectfully. Our teachers will certainly bring about our welfare.

*

Is Revenge A Kind of Wild Justice ?

—Ankit Gupta
XI A

Are you baffled by reading this title ? But you should not because. I want to be revengeful only for the traitors to our motherland, who consider this country the centre of crime. I shall instill fear in the hearts of the people who are destroying the future of our India. As we know there are many types of traitors as politicians, bribers, corrupt people etc. Many politicians are misleading the ordinary people and cashing votes for themselves. After all they rule over the country. They don't know about its glorious history and have forgotten. 'Bharat Mata'. I shall take revenge from these people. These states men are obstructing the progress of our country and are tending to destroy it. They should know that the day is not far when this country shall lead all the countries of the world.

It can never fall from the pedestal of glory.

The bribers, corrupt people as well as politicians have polluted this country. I want to tell them that their evil deeds shall be exposed. Everyone can see the disease of corruption in every field. I have decided to remove it from everywhere firmly.

I have planned that I will organise a union that will be named "National Reform Party". Which will work to eradicate corruption and pollution from our country. It will work as a social organisation. The motto of my union will be to make India a perfect nation, superior to all other countries.

✶

Swami Vivekanand

—Virendra Singh Pandey
(Teacher) Deptt of English

When Swami Vivekanand was travelling from one place to another in India, the condition of the country was pitiable. India was under the British Yoke. The people were starving, Illiteracy, Super stitions and blind beliefs were rampant. Swamiji felt very sad. He often pondered about the glorious past of India. He could not sleep peacefully. He turned and tossed. He became restless. He wanted to restore the glory of India.

At Kanyakumari Swamiji sat under deep meditation and cast his glance at the wide and deep unfathomed ocean. He thought about the vast expanse of our motherland suffering under the atrocities of the British. His heart began to lament. He often thought about the teachings of his Guru Sri Ram Krishan Paramhansa. After a few day of meditation, he took a resolve to strive for restoring the lost glory of India. He declared that he would not rest till he achieved the goal of restoring India's glory. He toured the length and breadth of the nation creating an awareness among Indians about their glarious past. He became India's ambassador to the world and mesmerised the world with his Charismatic persona.

✶

Smoking : A Killer Habit

—Priyam Sachan
11th A

Smoking is Injurious to Health

We often see this statement but we never think about it. Smoking is one of the main reasons of cancer. 1 person dies every 7 minutes because of this dangerous habit of smoking.

The person who smokes is a terrorist who gives death in different ways like Cholera, T.B. Cancer etc. He is not, only killing himself but also killing others by the smoks of Cigarette.

There are many Cases of Cancer in which people smoke and the last destiny of smokers is the grave. That's why smoking scenes are banned in the films. The smoke of Cigareltes harms the lungs very much and at last that man dies.

So smoking is one of the most harmful diseases and the smokers are the distributors of diseases. So we have to end this terrorism of disease for this we first of all have to give up the habit of smoking only then we'll be able to defend ourselves from this terror of disease.

*

The Sleeping City Kanpur

—Anurag Singh Sengar
XIth 'A'

The development of Kanpur after Independence was very fast. It became very famous all over world for its cotton and leather factories. It was "The Manchester of India." But something went wrong the factories began to shut down one by one. Lal Imli, Elgin, J.K. Cotton mill, J.K. Jute mill and many other factories have been shut down.

Today Kanpur is in a pathetic condition. Kanpur is the city which gives the highest tax in whole U.P. In place of this dedication; It does not get proper electricity for domestic and commercial purposes. But Lucknow get twenty four hours electricity.

We have to look into this problem. We have to restore the position of our city. The problem is very serious but we have to pay the debt of the city - our Kanpur city. Let's revive this city of culture and industries.

*

My Faith In God

—Nitin Pratap Singh

XII 'A'

In this article. I want to tell about my faith in God. For some people it would be an unbelievable thing but it is true. This article is only for optimists who would believe.

I am a realist I don't believe in showing off. For my faith in God there is a great source and that is my father. My father always reminds me to pray to God.

I have seen many men who never worship in their home and always go to pray in a temple. I have seen many men who always try to show that they are good worshippers, and they have lot of faith in God. I am not saying these stalements to a particular man. Now I want to tell you about my faith in God.

I have very much faith in God. I always try to bear everything and that's the reason I never fight with any body. There is no bad attitude towards anybody in my mind.

I want to tell a new thing, for some it would be an imaginary thing I always want to stay alone because that time, I find God next to me. I can't forget how He saved my life under a moving bus- Many times, He has saved my life.

Many times I have said to God, my wishes and He has fulfilled all my wihses. I am so confident about God that if I request anything God will certainly fulfill it.

That is my faith in God. This article is not for the atheists but I want to tell everybody not to forget God.

✶

Riddle Me Out

—Ganesh ji Omar

Eight 'A'

Q. Which letter is a drink ?

A. T (Tea)

Q. Which letter is an insect ?

A. B (Bee)

Q. Which letter is a vegetable ?

A. P (Pea)

Q. Which letter stands for water ?

A. C (Sea)

Q. Which letter is a human Organ ?

A. I (Eye)

Q. Which letter denotes a question ?

A. Y (Why)

Q. Which letter stands for a long line.

A. Q (Queue)

✶

Discipline

—Ankur Dixit

7th 'A'

Discipline means to keep the things in order. It gives the sense of duty. According to Swami Vivekanand. "Duty is obedience to the voice of conscience, discipline is necessary not only in school and colleges but in all walks of life."

If we look around us we find the students have become very indisciplined. They do not want to study nor do they want to obey their elders. Now a days students come out of their classes, create troubles before the common public. They are involved in politics and make agitations and bandh Colleges and universities are the examples of indiscipline. Discipline can be seen in all the branches of defence forces. They will always obey the orders of their superiors as discipline is very important to our life. It comes in a man from within and not from outside. Thus we can have discipline if a student is devoted to his books, he will conquer his sleep. Even in domestic life, discipline is essential without which the house will become full of Chaos. Thus discipline is as essential as oxygen to life.

✶

Shiva : The Lord of Dance

—**Shwetank Singh Bhadauriya**

VII 'A'

* **'Shiva'** means auspiciousness and his compassionate nature is the fortune for all souls.

The Iconography of the Shiva Image

* The trident of Shiva represents creation, preservation and destruction, as the subtle channels of the human body : Ida, Pingala and Sushumna.

* His crown is adorned with a crescent moon and his body is smeared with ashes which symbolize his absolute purity.

* The snake represents the cycle of time, embodiment, and kundalini shakti, Shiva wearing the snake around his neck symbolizes release from the bondage of nature.

* Seated on a tiger skin, he has full mastery over nature.

Did you know following Facts about 'Shiva'

* Shiva is a living God. Even Rig Veda, invokes him through its hymns as Rudra, the volatile God of wind and storm. His worship has been one of the many powerful creative impulses of Hindu history.

* The simplicity and detachment of Mahadeva, "The Great God", this dual nature of Shiva shocks us out of an ordinary perception of life and gifts as with a broader conception of enlightened personality.

✶

हाईस्कूल परीक्षा 2006 में प्रविष्ट छात्रों की सूची

S.No.	Roll No.	Name
1.	1205980	Abhay Pratap Singh Sengar
2.	1205981	Abhinav Dwivedi
3.	1205982	Abhinav Mishra
4.	1205983	Abhinav Porwal
5.	1205984	Abhishek
6.	1205985	Abhishek Awasthi
7.	1205986	Abhishek Kumar
8.	1205987	Abhishek Singh Chauhan
9.	1205988	Adarsh Tripathi
10.	1205989	Adesh Sachan
11.	1205990	Ajay Singh Yadav
12.	1205991	Akash Verma
13.	1205992	Akhil Mishra
14.	1205993	Akshay Kumar
15.	1205994	Akshay Awasthi
16.	1205995	Alok Kumar Singh
17.	1205996	Aman Kumar Singh
18.	1205997	Amit Kumar Chaudhary
19.	1205998	Amit Jain
20.	1205999	Amit Katiyar
21.	1206000	Amit Kumar Gautam
22.	1206001	Amitesh Kumar Gaur
23.	1206002	Analp Kirti Shukla
24.	1206003	Anand Shakya
25.	1206004	Anand Babu
26.	1206005	Anand Raj Singh
27.	1206006	Anand Mohan Dev Tiwari
28.	1206007	Ankit Jha
29.	1206008	Ankit Patel
30.	1206009	Ankit Sharma
31.	1206010	Ankur Katiyar
32.	1206011	Ankur Pandey
33.	1206012	Anshuman Tiwari
34.	1206013	Anurag Mishra
35.	1206014	Anurag Singh
36.	1206015	Arpit Katiyar
37.	1206016	Arpit Sachan
38.	1206017	Ashish Bhardwaj
39.	1206018	Ashish Verma
40.	1206019	Ashutosh Samadhiya
41.	1206020	Ashwary Deep Pandey
42.	1206021	Ayush Mishra
43.	1206022	Bal Govind
44.	1206023	Bhalendu Pratap Singh Chauhan
45.	1206024	Dileep Kumar
46.	1206025	Dinesh Pal
47.	1206026	Divyansh Tripathi
48.	1206027	Drishyamuni Chakma
49.	1206028	Gaurav Agrawal
50.	1206029	Gaurav Katiyar
51.	1206030	Gaurav Krishna
52.	1206031	Gaurav Kumar
53.	1206032	Harsh Vardhan Shukla
54.	1206033	Hitendra Katiyar
55.	1206034	Jitendra Pratap Singh
56.	1206035	Kartikay Shahi
57.	1206036	Kirti Kumar Prajapati
58.	1206037	Kuldeep Yadav
59.	1206038	Kushagra Krishnan
60.	1206039	Manish Kumar Tiwari
61.	1206040	Mayank Sachan
62.	1206041	Mohit Mishra
63.	1206042	Mohit Mayank Gupta
64.	1206043	Mratunjay Katiyar
65.	1206044	Muktesh Chaudhari
66.	1206045	Mukund Tripathi
67.	1206046	Neeraj Tiwari

S.No.	Roll No.	Name
68.	1206047	Nikhil Srivastava
69.	1206048	Nikhil Kumar Tripathi
70.	1206049	Nishant
71.	1206050	Nitish Raje
72.	1206051	Padam Jee Omar
73.	1206052	Pankaj
74.	1206053	Pankaj Verma
75.	1206054	Piyush Trivedi
76.	1206055	Prabhat Katiyar
77.	1206056	Prabodh Rajput
78.	1206057	Pradeep Kumar Agnihotri
79.	1206058	Prakhar Shukla
80.	1206059	Prasang Agarwal
81.	1206060	Prashant Srivastava
82.	1206061	Prashant Gupta
83.	1206062	Prashant Sachan
84.	1206063	Prashant Shekhar Awasthi
85.	1206064	Prateek Sachan
86.	1206065	Pratyush Pranjal
87.	1206066	Pratyush Tripathi
88.	1206067	Prem Chandra Gupta
89.	1206068	Pushkar Srivastava
90.	1206069	Pushpendra Singh Yadav
91.	1206070	Rachit Gupta
92.	1206071	Raghvendra Singh
93.	1206072	Rahul Kushawaha
94.	1206073	Raj Gaurav Katiyar
95.	1206074	Rajeev Bhardwaj
96.	1206075	Ramakant Sharma
97.	1206076	Raunak Singh
98.	1206077	Rishabh Dubey
99.	1206078	Rishabh Singh
100.	1206079	Rishabh Kumar Tiwari
101.	1206080	Saket Gupta
102.	1206081	Saksham Katiyar
103.	1206082	Sandeep Kumar Dwivedi
104.	1206083	Sankalp Trivedi

S.No.	Roll No.	Name
105.	1206084	Santmani
106.	1206085	Satyendra Pal Singh
107.	1206086	Saurabh Rastogi
108.	1206087	Saurabh Singh
109.	1206088	Saurabh Singh Kushawaha
110.	1206089	Shashank Pant
111.	1206090	Shashank Sunar
112.	1206091	Shashank Tiwari
113.	1206092	Shashwat Omar
114.	1206093	Shaurya Jeet Singh
115.	1206094	Shitanshu Tiwari
116.	1206095	Shivam Agrawal
117.	1206096	Shivam Singh
118.	1206097	Shivanshu Sachan
119.	1206098	Shivendra Dixit
120.	1206099	Shobhit Awasthi
121.	1206100	Shubham Bajpai
122.	1206101	Shubham Dixit
123.	1206102	Shubham Gupta
124.	1206103	Shubhendra Pandey
125.	1206104	Sujeet Omar
126.	1206105	Sumit Katiyar
127.	1206106	Sumit Kakkar
128.	1206107	Sumit Kumar Mishra
129.	1206108	Surya Pratap Singh
130.	1206109	Suryansh Bajpai
131.	1206110	Udit Kumar Pandey
132.	1206111	Utkarsh Gupta
133.	1206112	Utkarsh Katiyar
134.	1206113	Utkarsh Srivastava
135.	1206114	Venus Chawla
136.	1206115	Vijyant Rathaur
137.	1206116	Vikas Sharma
138.	1206117	Vishal Tripathi
139.	1206118	Vishwesh Shukla
140.	1206119	Vivek Bajpai
141.	1206120	Vivek Sachan

इण्टरमीडिएट परीक्षा - 2006 में प्रविष्ट छात्रों की सूची

S.No.	Roll No.	Name
1.	0742728	Abhay Singh
2.	0742729	Abhinav Omer
3.	0742730	Abhishek Dixit
4.	0742731	Abhishek Dixit
5.	0742732	Abhishek Pal
6.	0742733	Abhishek Sachan
7.	0742734	Abhishek Singh
8.	0742735	Aditya Pratap Singh Parmar
9.	0742736	Ajad Kumar Prajapati
10.	0742737	Ajeet Singh Yadav
11.	0742738	Ajit Singh
12.	0742739	Akhil Kumar Tripathi
13.	0742740	Akshay Shukla
14.	0742741	Akshay Tripathi
15.	0742742	Aman Nigotia
16.	0742743	Amit Kumar
17.	0742744	Anand Kumar Sharma
18.	0742745	Anil Maurya
19.	0742746	Ankur Gupta
20.	0742747	Ankur Kushawaha
21.	0742748	Ankur Nigam
22.	0742749	Anubhav Mishra
23.	0742750	Anurag Srivastava
24.	0742751	Anurag Tiwri
25.	0742752	Arpan Awasthi
26.	0742753	Aseem Kulshreshtha
27.	0742754	Ashish Kumar Pal
28.	0742755	Ashutosh Gupta
29.	0742756	Abinash Dubey
30.	0742757	Abinash Kumar
31.	0742758	Awadesh Shukla
32.	0742759	Bharat Bhushan
33.	0742760	Braj Kishor Pal
34.	0742761	Deepal Saxena
35.	0742762	Deepak Tripathi
36.	0742763	Devashish Singh
37.	0742764	Dheeraj Agarwal
38.	0742765	Gaurav Kumar Singh
39.	0742766	Gaurav Singh Kushawaha
40.	0742767	Gaurav Singh Bisht
41.	0742768	Govind Mishra
42.	0742769	Hemant Gupta
43.	0742770	Himanshu Mishra
44.	0742771	Himanshu Shukla
45.	0742772	Indrajeed Vishwakarma
46.	0742773	Ishan Agarwal
47.	0742774	Jagrat Gupta
48.	0742775	Jet Singh Arya
49.	0742776	Jyotenra Singh
50.	0742777	Kaushalendra Singh
51.	0742778	Kundan Kumar
52.	0742779	Kush Porwal
53.	0742780	Kushandra Gupta
54.	0742781	Lav Porwal
55.	0742782	Mahendra Kumar Pal
56.	0742783	Manesh Singh
57.	0742784	Manish Kumar
58.	0742785	Mayank Tripathi
59.	0742786	Mohan Singh Bhadauriya
60.	0742787	Munish Sharma

S.No.	Roll No.	Name
61.	0742788	Mahendra Tiwari
62.	0742789	Mahendra Yadav
63.	0742790	Nikhal Katiyar
64.	0742791	Nishith Tiwari
65.	0742792	Nitinn Pratap Singh
66.	0742793	Nitin Shankar Singh
67.	0742794	Nitin Srivastava
68.	0742795	Parash Gupta
69.	0742796	Piyush Mishra
70.	0742797	Pradyumn Bajpai
71.	0742798	Prafulla Sachan
72.	0742799	Pranav Sachan
73.	0742800	Praphullit Pandey
74.	0742801	Prashant Mishra
75.	0742802	Prashant Mishra
76.	0742803	Prateek Pandey
77.	0742804	Rahul Kumar Gupta
78.	0742805	Rahul Sachan
79.	0742806	Ravi Bhushan Singh
80.	0742807	Ravikant Dwivedi
81.	0742808	Ravindra Pratap Singh
82.	0742809	Rishabh Bajpai
83.	0742810	Rishi Kumar Rajput
84.	0742811	Rishi Raj Trivedi
85.	0742812	Rohit Katiyar
86.	0742813	Romil Kapoor

S.No.	Roll No.	Name
87.	0742814	Sachin Kumar Nigam
88.	0742815	Sagun Gupta
89.	0742816	Sarvesh Kumar
90.	0742817	Sarvesh Kumar Pal
91.	0742818	Satyam Gupta
92.	0742819	Satyam Kushawaha
93.	0742820	Saurabh Katiyar
94.	0742821	Saurabh Katiyar
95.	0742822	Saurabh Katiyar
96.	0742823	Saurabh Mishra
97.	0742824	Saurabh Shukla
98.	0742825	Saurabh Tiwari
99.	0742826	Saurabh Verma
100.	0742827	Sharad Kashvap
101.	0742828	Shasank Gupta
102.	0742829	Shishir Mishra
103.	0742830	Snehdeep Mishra
104.	0742831	Sudhanshu Kishor
105.	0742832	Sumit Shukla
106.	0742833	Sumit Kumar Yadav
107.	0742834	Surya Prakash Shukla
108.	0742835	Vaibhav Tiwari
109.	0742836	Vipin Verma
110.	0742837	Vivek Katiyar
111.	0742838	Yatendra Singh

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय
राष्ट्रे जागृयाम वयम
कानपुर

विद्यालय - प्रबन्ध - समिति

अध्यक्ष	डा० ज्ञान चन्द्र अग्रवाल	अ० प्रा० प्राध्यापक	कानपुर
उपाध्यक्ष	श्री कृष्ण गोपाल लाहोटी	व्यवसायी	कानपुर
मंत्री	श्री वीरेन्द्र जीत सिंह	चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट	कानपुर
सहमंत्री	श्री यतीन्द्र जीत सिंह	व्यवसायी	कानपुर
सदस्य	श्री राम बालक मिश्र	अधिवक्ता	कानपुर
	श्री जग मोहन गर्ग	उद्योगपति	गाजियाबाद
	श्री योगेन्द्र भार्गव	अ० प्रा० मुख्य अभियन्ता	कानपुर
	श्री ओम प्रकाश भार्गव	व्यवसायी	कानपुर
	श्री प्रेम चन्द्र गुप्ता	व्यवसायी	कानपुर
	डा० देवेन्दु बहादुर सिंह	अ० प्रा० कर्नल	कानपुर
	डा० शंकर शरण श्रीवास्तव	शिक्षाविद्	जयपुर
	श्री तरूण विजय	पत्रकार	नई दिल्ली
	श्री ओम शंकर त्रिपाठी	प्रधानाचार्य	कानपुर
	दो शिक्षक प्रतिनिधि		

Website : www.geocities.com/pddusdv
: www.pdduvsd.org
email - pddusdv@hotmail.com

Designed & Printed by :
NAVEEN PRINTERS, KANPUR
Phone : 2645966

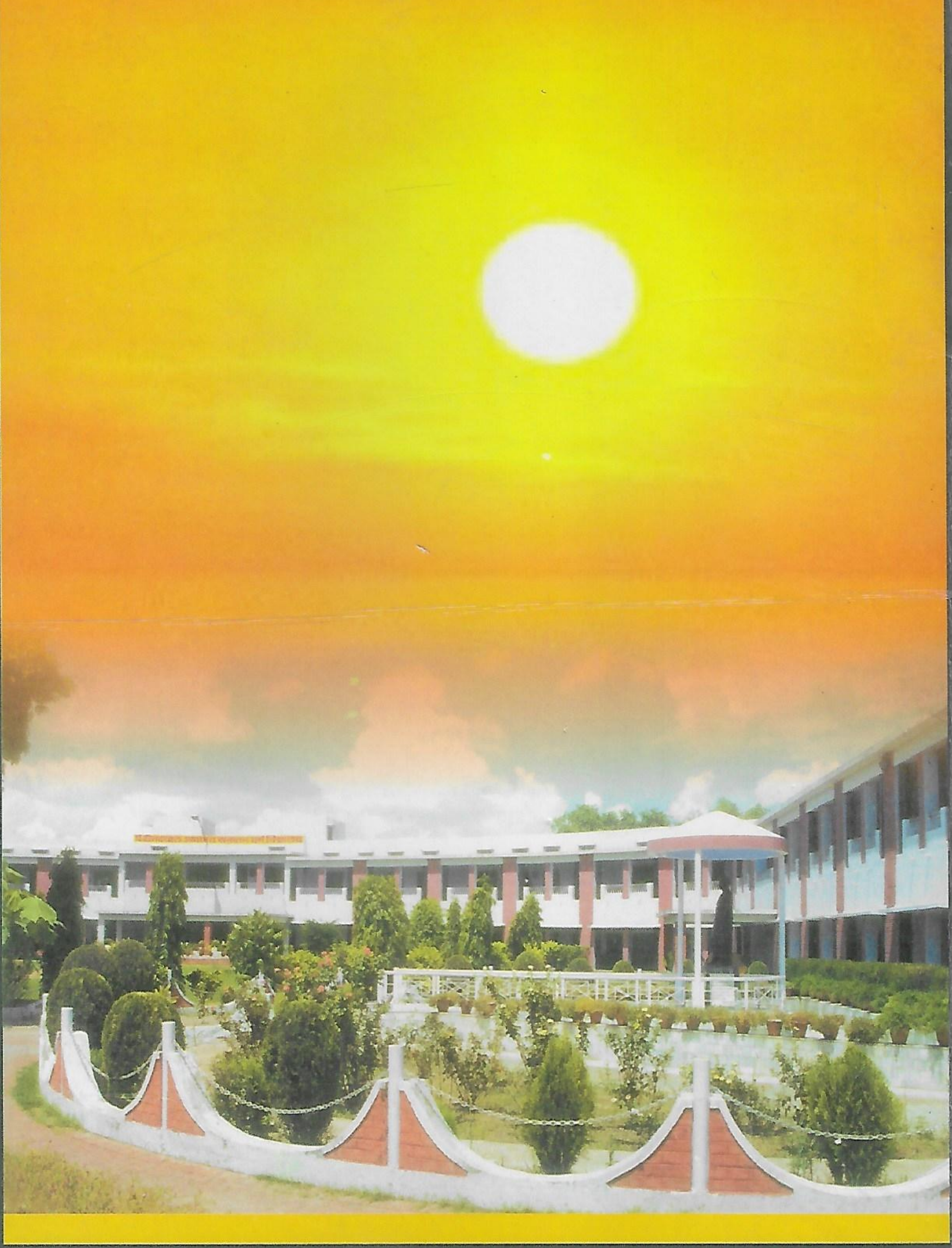

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर